ॐतत्सद्ब्रह्मणे नमः

श्री

पंचदशी

अथ श्री ब्रह्मानंदगत योगानंद नाम

एकादश प्रकरण प्रारंभः ११

भाषाकर्त्ताकृत मंगलाचरण.

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पंचदश्या नृभाषया।
योगानंदस्य व्याख्यानं ब्रह्मानंदगतस्य हि ॥ १ ॥

टीकाः— श्रीयुक्त सर्व गुरुनकूं नमनकरिके, पंचदशीके तीन वा पांच अध्यायरूप ब्रह्मानंद नाम ग्रंथगत योगानंद नाम प्रकरणके व्याख्यानकूं नरभाषाकरि मैं स्पष्ट करुं हूं. १

संस्कृत टीकाकारकृत मंगलाचरण.

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ ।
ब्रह्मानंदाभिधं ग्रंथं व्याकुर्वे बोधसिद्धये ॥ १ ॥

---

१ ब्रह्मानंदका प्रतिपादक ब्रह्मानंद नामक जो तीन वा पांच अध्यायरूप ग्रंथ है, तिसके अंतर्गत जो चित्तकी एकाग्रतारूप योगकरि आविर्भूत (प्रगट) होनें योग्य आनंदका प्रतिपादक प्रकरण, सो योगानंद कहिये है.

टीकाः– श्री भारतीतीर्थ औ विद्यारण्य, इन दोनूं मुनीश्वरनकूं नमनकरिके, बोधकी सिद्धिअर्थ मैं ब्रह्मानंद नामक ग्रंथकूं व्याख्यान करूं हूं. १

१ श्रुतिकरि ब्रह्मज्ञानकूं अनर्थनिवृत्ति औ परमानंदप्राप्तिकी कारणताके कथनपूर्वक, ब्रह्मकी आनंदता अद्वितीयता औ स्वप्रकाशताकी सिद्धि. ११४३-११७४

१ अनेक श्रुतिकरि ब्रह्मज्ञानकूं अनर्थनिवृत्ति औ परमानंदप्राप्तिकी हेतुताका कथन. ११४३–११५२

११४३ ब्रह्मानंदं प्रवक्ष्यामि ज्ञाते तस्मिन्नशेषतः।
ऐहिकामुष्मिकानर्थव्रातं हित्वा सुखायते ॥ १ ॥

प्रारंभ करनैकूं इच्छित ग्रंथ (ब्रह्मानंद)की निर्विघ्नपरिपूर्णताअर्थ औ विघ्नरूप पापनकी निवृत्तिअर्थ इष्टदेवताके स्वरूपके अनुसंधानरूप मंगलकूं आचरते हुये आचार्य (ग्रंथकर्ता श्रीभारतीतीर्थस्वामी), ग्रंथविषै श्रोताके प्रवृत्तिकी सिद्धिअर्थ प्रयोजनसहित ग्रंथके विषयकूं प्रगट करते हुये ग्रंथके आरंभकी प्रतिज्ञा करै हैंः– (ब्रह्मानंदमिति ॥) ब्रह्मानंदकूं कथन करूं हूं, तिस (ब्रह्मानंद)के ज्ञात हुये यह पुरुष ऐहिक (इसलोकसंबंधी) औ आमुष्मिक (परलोकसंबंधी) अनर्थनके समूहकूं त्यागिके सुखी होवै है. १ टीकाः– “ निर्विशेष (सर्वधर्मरहित) परब्रह्मकूं साक्षात् (अपरोक्ष) करनैकूं अ-

नीश्वर (असमर्थ) जो मंद (मंदबुद्धिवाले अधिकारी) हैं, सो सविशेष (सोपाधिकब्रह्म)के निरूपणनकरि कृपाके विषय करिये हैं" इस शास्त्रके वचनकरि सविशेषब्रह्मरूप जो (विष्णुआदिक) देवता हैं, तिनके तत्त्व (वास्तवस्वरूप)की निर्विशेषब्रह्मरूपताके कथनतें, औ "आनंद ब्रह्म है" इत्यादि श्रुतिकरि ब्रह्मकी आनंदरूपताके कथनतें, "ब्रह्मानंद" इस आनंदरूप ब्रह्मके वाचक शब्दके उच्चारणकरि "जिसकूं मनकरि ध्याचता है, तिसकूं वाणीकरि कहता है" इस श्रुतिउक्त न्यार[illegible]ह्मके अनुसंधान (स्मरण)रूप मंगलका आचरण सिद्ध भया औ ब्रह्मकूं सर्व वेदांतनविषै प्रतिपाद्य (प्रतिपादन करनैयोग्यवि[illegible]रूप) होनैतें तिस (वेदांतशास्त्र)के प्रकरणरूप इस (ब्रह्मानंद नामक) ग्रंथका बी सोइ (ब्रह्म)हीं विषय है. ऐसें ब्रह्म शब्दके उच्चारणकरि ग्रंथका विषय बी सूचन किया. औ (ऐहिक (इत्यादि) इस श्लोकके उत्तरार्द्धकरि अनिष्ट (अनर्थ)की निवृत्ति औ इष्ट (परमानंद)की प्राप्तिरूप दोनूंप्रकारका प्रयोजन ग्रंथकारनैं मुखतैंही कथन किया. औ[illegible]ह्मरूप जो यह आनंद, सो कहिये ब्रह्मानंद. यह ब्रह्मानंद [illegible]का वाच्य अर्थ है. अरु वाच्य (प्रतिपाद्य) औ वाचक (प्रतिप[illegible]क ग्रंथ) इन दोनूंके अभेदके उपचार (आरोप)तैं तिस (वाच्यअर्थरूप ब्रह्मानंद)का प्रतिपादक ग्रंथ बी ब्रह्मानंद है. तिस (वाच्यवाचक उभयरूप ब्रह्मानंद)कूं कहता हूं. तिस प्रतिपाद्य (वाच्य) औ प्रतिपादक (वाचक)रूप ब्रह्मानंदके ज्ञात (जाने) हुये य-

१ मूलके स्पर्श किये वृक्षगत शाखापत्र आदिक सर्वअंगनके स्पर्शकी न्याई विष्णुआदिकनके अधिष्ठान निर्विशेषब्रह्मके कथनतें, विष्णु आदिक सर्वदेवनका मंगलाचरण बी अर्थतें सिद्ध भया.

ह पुरुष ऐहिक (इसलोकविषै होनैहारे देहपुत्रादिकविषै अहं मम अभिमानके किये अध्यात्मआदिक तापरूप) औ आमुष्मिक (परलोकविषै होनैहारे मत्सरादिरूप) तिन अनर्थनका जो समूह है, तिसकूं संपूर्ण जैसैं त्याज्य होवै तैसैं परित्याग करिके सुखी (सुखरूप ब्रह्महीं) होवै है. १

११४४ ब्रह्मवित् परमाप्नोति शोकं तरति चात्मवित् ।
रसो ब्रह्म रसं लब्ध्वानंदी भवति नान्यथा ॥२॥

ब्रह्मज्ञानकूं अनिष्टनिवृत्ति औ इष्टप्राप्तिकी कारणता है, तिसविषै बहुत श्रुति औ स्मृतिके वाक्य प्रमाण हैं; ऐसैं दिखावनेकूं इच्छते हुये आचार्य, प्रथम "ब्रह्मवित् पर (ब्रह्म)कूं पावता है" (यह तैत्तिरीयका वाक्य है) औ "आत्मवित्, शोक (अकृतार्थबुद्धिवान्तारूप मनके ताप)कूं तरता (उल्लंघन करता) है;" ऐसैं जातैं मैंनैं तुमसारिखे पुरुषनतैं सुन्या (शास्त्रकरि जान्या) है, यातैं हे भगवन्, सो (शास्त्रज्ञानवान्) मैं (अनात्मवेत्ता होनैतैं) शोक (अकृतार्थ बुद्धिकरि सर्वदा संताप)कूं पावता हूं, तिस मुजकूं भगवान् (आप) शोक (शोकरूप सागर)के पारके ताईं आत्मज्ञानरूप नौकाकरि तारहु" (कृतार्थबुद्धिकूं संपादन करहु; यह छांदोग्यके सप्तमअध्यायगत सनत्कुमारके प्रति नारदका वाक्य है.) इन दोनूं श्रुतिवाक्यनकूं अर्थतैं पठन करै हैंः–(॥ ब्रह्मविदिति ॥) ब्रह्मवित् पर (ब्रह्म)कूं पावता है औ आत्मवित् शोककूं तरता है. टीकाः– ब्रह्मकूं जो जानता है, सो ब्रह्मवित् कहिये है. सो पर (उत्कृष्टआनंदरूप ब्रह्म)कूं पावता है. औ भूमा शब्दके वाच्य देश काल वस्तुके किये परिच्छेदतैं रहित आत्माकूं जो

जानता है, सो आत्मवित् कहिये है. सो अपनै संबंधकूं प्राप्त पुरुषकूं शोक करनैहारा जो शोक (अज्ञानरूप मूलवाला संसार) है, तिसकूं तरता है ❀ ननु, उदाहरण किये तैत्तिरीयश्रुतिके वाक्यविषै ब्रह्मज्ञानकूं परके प्राप्तिकी हेतुताहीं भासती है, आनंदके प्राप्तिकी हेतुता नहीं. यह आशंकाकरि, ब्रह्मज्ञानकूं आनंदप्राप्तिकी हेतुताके प्रतिपादनपरायण जो "रस (साररूप)-हीं रस (ब्रह्मात्मा) है. रस (आनंदरूप ब्रह्म)कूंहीं यह (पुरुष) पायके आनंदी होवै है" यह तिस (तैत्तिरीयश्रुति)काहीं वाक्य है; तिसकूं अर्थतैं पठन करै हैः- (॥ रस इति ॥) रस (ब्रह्मात्मा) है. रसरूप ब्रह्मकूं पायके पुरुष [illegible] होवै है" टीकाः- "सत्य ज्ञान अनंत ब्रह्म है [illegible]रमात्मा)तैं उक्त) वा इस [illegible] (ब्राह्मणभाग[2]उक्त [illegible])का आदिविषै ब्रह्म औ आत्मा शब्दकरि उक्त जो आत्मा है, सो रस; कहिये सार (आनंदरूप) है. यह अर्थ है. रस (आनंदरूप) ब्रह्मकूं पायके ("अहं ब्रह्मास्मि" इस ज्ञानकरि प्राप्त होयके), यह पुरुष आनंदी (अपरिच्छिन्न निरतिशयसुखवान्) होवै है ❀ उक्तअर्थकूं व्यतिरेकके दिखावनैंकरि दृढ करै हैंः- (॥ नान्यथेति ॥) अन्यथा (आनंदवान् होवै) नहीं. २ टीकाः- अन्यथा (ब्रह्मआत्माकी एकताके ज्ञानकूं छोडिके) अन्य साधनके अनुष्ठानकरि आनंदी (आनंदवान्) नहीं होवै है. यह अर्थ है. २

१ द्रव्य (कर्ममैं उपयोगी वस्तु) औ देवता (इंद्रादिक अरु ब्रह्म)का बोधक जो वेदका भाग, सो मंत्रभाग कहिये है; ताहीकूं संहिता बी कहै हैं.

२ विधेय (विधान करनैयोग्य) अर्थका बोधक जो वेदका भाग, सो ब्राह्मणभाग कहिये है; ताहीके अंतर्गत उपनिषद्भाग औ आरण्यकभाग हैं.

११४५ प्रतिष्ठां विंदते स्वस्मिन् यदा स्यादथ सोऽभयः
कुरुतेऽस्मिन्नंतरं चेदथ तस्य भयं भवेत् ॥ ३ ॥

ऐसैं अन्वयरूप मुख (द्वार)सैं ब्रह्मज्ञानकरि इष्टकी प्राप्ति औ अनिष्टकी निवृत्तिके प्रतिपादनपरायण श्रुतिवाक्यकूं दिखायके, अब क्रमतैं अन्वय औ व्यतिरेककरि अनर्थनिवृत्तिके दिखावनैके परायण, “ जबहीं यह (मुमुक्षु) प्रसिद्ध इस अदृश्य अनात्म्य अनिरुक्त अनिलयन (ब्रह्म)विषै अभय (अभेद) प्रतिष्ठा (स्थिति)कूं पावता है, तब सो (विद्वान्) अभयकूं प्राप्त होवै है.” औ “ जबहीं यह (पुरुष) प्रसिद्ध इस (ब्रह्म)विषै अल्प बी अंतर (भेद)कूं करता है, तब तिसकूं भय होवै है” इन दोनूं वाक्यनकूं अर्थतैं क्रमकरि कहै हैंः—

(॥ प्रतिष्ठामि॰ ॥) जब यह मुमुक्षु स्वस्वरूपविषै स्थितिकूं पावता है, तब सो अभय होवै है औ जब पुरुष ऐसैं स्वस्वरूपविषै अंतर (भेद)कूं करता है, तब तिसकूं भय होवै है. ३ टीकाः— इस मूलश्लोकका यह अर्थ हैः— इहां प्रसिद्धअर्थवाला जो हि शब्द है, सो विद्वज्जनोकी प्रसिद्धिके दिखावनैके परायण है औ निश्चयरूप अर्थका वाची अन्यका निषेधक हीं शब्दका पर्याय एव शब्द है, सो यह (अद्वितीय आत्माका ज्ञान)हीं अनर्थनिवृत्तिका उपाय है, अन्य नहीं; इस नियम करनैके अर्थ है. यातैं जब (जिसकालविषै)हीं यह मुमुक्षु इस विद्वानोके अनुभवसैं गम्य, अदृश्य (इंद्रियके अगोचर), अनात्म्य (स्वस्वरूप होनैकरि ममताका अविषय) औ अनिरुक्त; कहिये, निर्वचन (शब्दकरि कथन) जहां नहीं है; ऐसैं औ अनिलयन; कहिये, जिसविषै लय होवै ऐसा जो

निलय (आधार) सो जिसका नहीं है, ऐसे; स्वमहिमामें स्थित प्रत्यक्‌अभिन्नब्रह्मविषै अभय (अद्वितीय); कहिये "द्वितीयतें निश्चयकरि भय होवै है" इस श्रुतितें भय शब्दकरि इहां भयका हेतु भेद लखिये है; यातें भय (भेद) जैसें होवै नहीं, तैसें प्रतिष्ठा जो संशय विपर्ययसें रहितपनेकरि "अहं ब्रह्मास्मि" इस अवस्थानरूप स्थिति, ताकूं गुरुकी उपसत्ति[1]आदिकसें श्रवणादिककूं करिके पावता है, तबहीं सो (ऐसें जाननेहारा विद्वान्) अभय (भयरहित मोक्षरूप अद्वितीयब्रह्म)कूं प्राप्त होवै है. "जो ब्रह्मकूं जानता है, सो ब्रह्महीं होवै है" इस श्रुतितें औ जब (जिसीहीं कालविषै) यह (पूर्वउक्त मुमुक्षु) इस (अदृश्यपनेआदिकगुणकरि युक्त प्रत्यक्‌अभिन्नब्रह्म)विषै अल्प बी अंतर (उपास्यउपासक आदिरूप भेद)कूं करता (देखता) है, तबहीं तिस (भेददर्शीपुरुष)कूं भय (संसारका किया दुःख) होवै है. ३

॥ ११४६ ॥ वायुः सूर्यो वन्हिरिंद्रो मृत्युर्जन्मांतरेऽतरम् ।
कृत्वाधर्मं विजानंतोऽप्यस्माद्भीत्याचरंतिहि ४

"भेददर्शिनकूं भय होवै है" इस अर्थके दृढ करनेकूं ब्रह्मआत्माकी एकताके ज्ञानसें रहित वायुआदिकनकूं भयके दिखावनै परायण, "इस (परमात्मा)तें भयकरि वायु चलता है (इत्यादि)" इस वेदके मंत्रकूं अर्थतें पठन करै हैं:-(॥ वायुरिति ॥) वायु, सूर्य, अग्नि, इंद्र, औ मृत्यु (यम); ये जन्मांतरविषै धर्मकूं जानते हुये बी अंतर (भेद)कूं करिके इस (ब्रह्म)तें भयकरि विचरते हैं; यह प्रसिद्ध है. ४

[1] उपसत्ति शब्दका अर्थ देखो पृष्ठ [५१५]के दूसरेटिप्पणविषै.

टीकाः– वायुआदिक जो जगत्‌के नियामक होनैंकरि प्रसिद्ध पांच बी देवता हैं, सो अतीत (पूर्वके) जन्मविषै इष्टापूर्त[1]-आदिरूप धर्मकूं जानते (ज्ञानपूर्वक अनुष्ठान करते) हुये बी अंतर (प्रत्यगात्मा औ ब्रह्मके भेद)कूं करिके इस ब्रह्मतैं भयकरि इस वायुआदिकके जन्मविषै विचरते (अपनै अपनै व्यापारविषै सदा वर्तते) हैं. मूलविषै जो हि शब्द है, तिसकरि “इस (ब्रह्म)के भयतैं अग्नि तपता है औ इसके भयतैं सूर्य तपता है अरु इसके भयतैं इंद्र औ वायु औ पांचवां मृत्यु धावता है” इस कठश्रुतिविषै नचिकेता शिष्यके ताईं यमराजानैं कथन करी प्रसिद्धिकूं ग्रंथकार दिखावै हैं. ४

११४७ आनंदं ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कुतश्चन ।
एँतमेव तपेन् नैषा चिंता कर्माग्निसंभृता ॥ ५ ॥

ननु “आत्मवित् शोककूं तरता है” इत्यादिक उदाहरण किये वाक्यनाविषै ब्रह्मानंदके ज्ञानकूं अनर्थनिवृत्तिकी हेतुता स्पष्ट नहीं भासती है. यह आशंकाकरि, तिसप्रकार प्रतिपादनके परायण श्रुतिवाक्यकूं उदाहरण करै हैंः– (॥ आनंदमिति ॥) ब्रह्मके आनंदकूं जानता हुया पुरुष किसीतैं बी भयकूं नहीं पावता है. टीकाः– “ राहुका शिर है.” इत्यादिककी न्याई, “ब्रह्मके आनंदकूं” यह भेदका कथन उपचारकरि किया है. यातैं ब्रह्मके स्वरूपभूत आनंदकूं विद्वान् (अपरोक्षपनैकरि जाननैहारा पुरुष) किसीतैं बी; कहिये, इस लोकसंबंधी भयके हेतु व्याघ्रादिकतैं वा परलोकसंबंधी भयके हेतु पापादिकतैं भ-

[1] यज्ञयागादि, अश्वत्थ वट उद्यापनादिक, प्रायश्चित्त, वेदमंत्रादि पठन, कूपबंधन, औ वृक्षादिरोपण; इत्यादिक जो धर्मसंबंधी कर्म, सो इष्टापूर्त्त कहिये है.

यकूं नहीं पावता है ❀ ननु, तत्त्ववेत्ताकूं पापादिकतैं भय नहीं है. यह काहेतैं जानिये है ? यह आशंकाकरि, तिस (ज्ञानीकूं पापादिकतैं भयके अभाव)के प्रतिपादक, "मैं साधु (पुण्यकर्म)कूं काहेतैं न करता भया औ मैं पापकूं काहेतैं करता भया, (यह चिंता) इस (ज्ञानी)कूं तपावती नहीं" इस श्रुतिवाक्यकूं अर्थतैं पठन करै हैंः- (॥ एतमिति ॥) कर्मरूप अग्निकरि संपादन करी यह चिंता इस (ज्ञानी)हींकूं नहीं तपावती है. ५

टीकाः- पुण्यपापरूप कर्महीं अग्नि है. काहेतैं, क्रमतैं न करनै औ करनैकरि अग्निकी न्याई संतापका हेतु होनैतैं. तिस (कर्मरूप अग्नि)करि संपादन करी जो यह "मैं पुण्यकूं काहेतैं न करता भया औ पापकूं तौ काहेतैं करता भया" इस रूपवाली चिंता इस तत्त्ववेत्ताकूंही नहीं संताप करती है औ अन्य अविद्वान्कूं नहीं संताप करती है ऐसैं नहीं; किंतु, सो (अज्ञानी) तिस चिंताकरि सदा तपता है. यह अर्थ है. ५

॥ ११४८ ॥ एवं विद्वान् कर्मणी द्वे हित्वाऽत्मानं स्मरेत् सदा । कृते च कर्मणी स्वात्मरूपेणैवैष पश्यति ॥ ६ ॥

ज्ञानीकूं पुण्यपापकी अतापकताविषै हेतुके दिखावनैं परयण, "सो जो (कोइक पुरुष) ऐसै जानता हुया इन (पुण्यपाप)कूं छोडिके आत्माकूं प्रिय करता (सदा स्मरण करता) है" औ "यह (ज्ञानी) इन दोनूं (पुण्यपाप)कूं आत्मारूप देखता है" इन दोनूं वाक्यनकूं अर्थतैं पठन करै हैंः- (॥ एवमिति ॥) ऐसैं विद्वान्, दोनूंकर्मकूं छोडिके आत्माकूं सदा स्मरण करता है औ यह (ज्ञानी), किये कर्म (पाप पुण्य)कूं स्वात्म-

रूपकरिहीं देखता है. ६ टीकाः– सो जो (कोइक पुरुष) इस उक्त प्रकारकरि; कहिये, "सो जो यह (परमात्मा) पुरुष (व्यष्टिसंघात)विषै है औ जो यह आदित्य (सूर्यमंडल)विषै है, सो एक है" इस श्रुतिउक्त प्रकारकरि विद्वान् (जानता हुया वर्तता) है. सो इन पुण्यपाप दोनूंकूं छोडिके आत्मा (ब्रह्मसैं अभिन्न प्रत्यगात्मा)कूं सदा स्मरण करैहै. यह अर्थ है. जातैं पुण्यपापका मिथ्यापनैके अनुसंधान (ज्ञान)करि त्याग किया है, यातैं तिस (पुण्यपाप)कूं विषय करनैहारी चिंताहीं ज्ञानीकूं नहीं है; तब तिस (चिंता)का किया ताप कहांसैं होवैगा? यह अभिप्राय है. किंवा, यह (विद्वान्) इन (पूर्वोक्त) दोनूंदेह इंद्रियआदिककी प्रवृत्तिसैं जनित पुण्यपापरूप कर्मकूं अपनै आत्मारूप करिहीं "जो यह (जगत्) है, सो सर्व यह आत्मा है" इत्यादि वाक्यउक्त प्रकारसैं देखता (जानता) है. यह अर्थ है. यातैं अपनै आत्मासैं अभिन्न होनैतैं बी पुण्यपापकूं तापकारकता नहीं है. यह भाव है. ६

११४९ भिद्यते हृदयग्रंथिश्छिद्यंते सर्वसंशयाः ।
क्षीयंते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥७॥

ननु, "अभुक्त (नहीं भोग्या) जो कर्म है; सो कल्पकी कोटिशत (सोक्रोड कल्पन)करि बी क्षीण होता नहीं" इत्यादिक शास्त्रवाक्यके सद्भावतैं, अनादिसंसारविषै बहुतजन्मकरि संपादन किये औ अप्रसिद्ध होनैकरि आत्मरूपसैं अनुसंधान करनैकूं अयोग्य जो पुण्यपापरूप असंख्यात कर्म हैं, तिनके होते ज्ञानीकूं तिन (पुण्यपापरूप कर्म)कूं विषय करनैहारी चिंता कैसैं नहीं होवैगी? यह आशंकाकरि, अज्ञानरूप उपादानसहित तिन (कर्मन)-

कूं तत्त्वज्ञानकरि विनाशि होनैतैं, चिंताकी जनकता नहीं है; इस अभिप्रायकरि हृदयग्रंथिआदिककी निवृत्तिके परायण मंडूकआदिक श्रुतिनाविषै स्थित वाक्यकूं पठन करे हैं:– (॥ भिद्यत इति ॥) तिस परावर (परमात्मा)के दृष्ट (देखे) हुये इस (पुरुष)का हृदयग्रंथि भेदनकूं पावता है औ सर्वसंशय छेदन होवै हैं औ कर्म क्षीण (नाश) होवै हैं. ७ टीका:– परावर; कहिये, पर (उत्कृष्ट बी हिरण्यगर्भआदिक पद) है अवर (निकृष्ट) जिसतैं, ऐसै तिस (परमात्मा)के देखे (साक्षात् किये) हुये इस (साक्षात्कारवान्पुरुष)का हृदयग्रंथि; कहिये, हृदय (बुद्धि) औ चिदात्माका ग्रंथिकी न्याई दृढसंबंधरूप होनैतैं ग्रंथिरूप जो अन्योन्याध्यास है, सो भेदकूं पावता (नाश होता) है. यह अर्थ है. औ सर्वसंशय; कहिये, आत्मा देहादिकतैं भिन्न है वा नहीं, भिन्न हुया बी कर्त्तापनैआदिक धर्मवाला है वा नहीं, अकर्ता हुया बी तिस (आत्मा)का ब्रह्मतैं भेद है वा नहीं, अभेदके हुये बी तिस (ब्रह्मसैं अभिन्न आत्मा)-का ज्ञान कर्मादिक सहित मुक्तिका साधन है वा केवल है? इत्यादिक संशय हैं; सो छेदन होवै हैं. काहेतैं, यथार्थस्वरूपक-

---

१ नाना कोटिनके अवगाही (विषय करनैवाले) ज्ञानकूं संशय कहै हैं. सो संशय प्रमाणगतसंशय औ प्रमेयगतसंशय भेदतैं दो प्रकारका है. वेदांत (उपनिषद्)-के वाक्यरूप प्रमाण हैं, सो जीवब्रह्मके भेदके प्रतिपादक हैं वा अभेदके प्रतिपादक हैं? ऐसा जो संशय, सो प्रमाणगतसंशय है. सो श्रवणसैं दूरि होवै है. औ प्रमेयगतसंशय, आत्मगत अरु अनात्मगत भेदतैं दो प्रकारका है. अनात्मगतसंशय तौ अनंतप्रकारका है, ताके कहनैका उपयोग नही है. औ आत्मगतसंशय, "त्वं"-पदार्थगोचर "तत्"पदार्थगोचर, औ "तत्"पदार्थसैं अभिन्न "त्वं" पदार्थगोचर भेदतैं तीनप्रकारका है. तिनमै "त्वं"पदार्थगोचर संशय तौ संस्कृतटीका-

रि साक्षात् किये वस्तुकूं संशय औ विपर्ययकी विषयताके अदर्शनतैं. यह भाव है. औ कर्म जो संचित पुण्यअपुण्यरूप हैं, सो क्षीण होते हैं (अपनै उपादान अज्ञानके विनाशकरि विनाशकूं पावते हैं). ७

११५० तमेव विद्वानत्येति मृत्युपंथा न चेतरः ।
ज्ञात्वा देवं पाशहानिः क्षीणैः क्लेशैर्न जन्मभाक् ८

कारनैं दिखाया है औ आदि शब्दकरि अवशेष रहे दोनूंसंशयनका ग्रहण हैः— ईश्वर वैकुंठादि लोकवासी परिच्छिन्न हस्तपादादि अंगसहित शरीरवान् है, वा शरीररहित विभु है? जो शरीररहित विभु कहै, तौ बी परमाणुआदिक सापेक्ष जगत्का कर्त्ता है, वा निरपेक्ष कर्त्ता है ? निरपेक्ष कर्त्ता कहै तौ बी केवल कर्त्ता है, वा अभिन्न निमित्तोपादानरूप कर्त्ता है? अभिन्ननिमित्तोपादान कहै तौ बी प्राणिनके कर्मकी अपेक्षारहित कर्त्ता होनैतैं विषम कारकताआदिक दोषवाला है, वा प्राणिनके कर्मकी अपेक्षासहित कर्त्ता होनैतैं विषमकारकता आदिक दोषरहित है? इनसैं आदिलेके "तत्"पदार्थगोचर अनेकप्रकारका संशय है. औ आत्मा ब्रह्मसैं अभिन्न है, वा भिन्न है? अभिन्न है तौ बी सर्वदा अभिन्न है वा मोक्ष कालमैंहीं अभिन्न होवै है? सर्वदा अभिन्न है, तौ बी आनंदादिक ऐश्वर्यवान् है, वा आनंदादिकरहित है? आनंदादिकवान् है, तौ बी आनंदादिक गुण हैं, वा ब्रह्मात्माके स्वरूप हैं? इनसैं आदिलेके "तत्"पदार्थसैं अभिन्न "त्वं"पदार्थगोचर अनेक प्रकारका संशय है. तैसैं मोक्षके स्वरूप औ साधनका संशय औ ज्ञानके स्वरूप औ साधनका संशय बी प्रमेयगतसंशय है; यह मननसैं दूरि होवै है. स्वरूपसाक्षात्कारके भये, सर्वसंशयनका मूलसैं नाश होवै है.

१ संचित, प्रारब्ध औ क्रियमाण (आगामी) भेदतैं तीन प्रकारका कर्म है. तिनमैं ज्ञानीके प्रारब्धकर्मका भोगसैं नाश होवै है औ "मैं असंग, अकर्त्ता, अभोक्ता हूं" इस निश्चयके बलसैं क्रियमाणका संस्पर्श बी होवै नहीं; किंतु, तिनके फलका प्रिय औ द्वेषी पुरुषनकूं भोग होवै है औ संचितकर्मनका ज्ञानअग्निसैं दाह होवै है. यह व्यवस्था है.

ननु, "इहां (नरदेहविषै) कर्म (अग्निहोत्रादिकन)कूं करता हुयाहीं शतसंवत्सरपर्यंत जीवनैकूं इच्छे. इसप्रकार तुज (जीवनैकूं इच्छनैहारै) नरविषै इस (प्रकार)तैं अन्यप्रकार नहीं है. जिस प्रकारकरि अशुभकर्मका लेप होवै नहीं" औ "विद्या (देवताके ज्ञानरूप उपासना) औ अविद्या (कर्म), इन दोनूंकूं जो (पुरुष) यह दोनूं साथिहीं एकपुरुषकरि अनुष्ठान करनैकूं योग्य हैं ऐसैं जानता है (तिस समुच्चयकारीकूं एक पुरुषार्थका संबंध क्रमकरि होवै है, ऐसैं कहिये है). अविद्या (अग्निहोत्रादि कर्म)करि मृत्यु (स्वाभाविक कर्म औ ज्ञानरूप)-कूं तरिके (उल्लंघन करिके), विद्या (देवताके ज्ञान)करि अमृत (देवके आत्मभाव)कूं पावता है" इत्यादिक श्रुतितैं औ "जनकादिक कर्मकरिहीं संसिद्धिकूं आस्थित (प्राप्त) भये" औ "जैसैं मधुसंयुक्त अन्न वा अन्नसंयुक्त मधु (औषध) है; ऐसैं तप औ विद्या संयुक्त (मिलित) हुये महत्औषध है" इत्यादि स्मृतितैं केवलकर्मकूं वा ज्ञानकरि समुच्चित (मिलित)कर्मकूं मुक्तिकी हेतुता होवैगी. यह आशंकाकरि, उदाहरण किये वाक्यनके स्थलविषै बी तप शब्दकूं पापनिवृत्तिके परायण होनैतैं औ आस्थित इस पदविषै जो आङ् शब्द है, ताकूं पापनिवृत्तिके परायण होनैतैं संसिद्धि शब्दकरि ज्ञानके साधन चित्तशुद्धिके कथनतैं औ विद्या शब्दकरि उपासनाकूं कहनैकूं इच्छित होनैतैं, कर्मनकूं मुक्तिकी साधनता नहीं है. इस अभिप्रायकरि अन्यसाधनके निषेधपरायण जो "तिसीहींकूं जानिके मृत्युकूं उल्लंघन करता है, मुक्तिके अर्थ अन्यपंथ नहीं है" यह श्वेताश्वतरउपनिषद्का वाक्य है, तिसकूं अर्थतैं पठन करै हैं:— (॥ तमेवेति ॥) तिसकूं विद्वान् (जाननैहारा)हीं मृत्युकूं लंघता है; अन्य

पंथ नहीं है. टीकाः– तिस (पूर्वउक्त परमात्मा)कूं जाननैहाराहीं मृत्यु (संसार)कूं उल्लंघन करता है; अन्य (समुच्चयरूप वा केवल कर्मरूप) पंथ (मार्ग) मोक्षका उपाय नहीं है ॥ ननु, उदाहरणकरि कही श्रुतिनविषै अन्वय औ व्यतिरेककरि इसलोकसंबंधी अनिष्ट (अनर्थ)की निवृत्तिहीं प्रधानता (मुख्यता)करि भासती है, परलोकसंबंधी (अनिष्टकी निवृत्ति) नहीं भासती है. यह आशंकाकरि, परलोकसंबंधी अनिष्टकूं भावि (होनैहारे) जन्मके पूर्वक होनैतैं कारणसहित तिस (भाविजन्म)के अभावका प्रतिपादक जो "देवकूं जानिके सर्वपाशनकी हानि होवै है औ क्षीण भये क्लेशनकरि जन्ममृत्युकी अतिशय हानि होवै है" यह श्वेताश्वतरउपनिषदका वाक्य है; ताकूं अर्थतैं पठन करै हैं:– (॥ ज्ञात्वेति ॥) देवकूं जानिके पाश (क्लेशन)की हानि होवै है औ क्षीण भये क्लेश (रागादिकन)करि पुरुष जन्मकूं भजनैहारा नहीं होवै है. ८ टीकाः– देव (स्वप्रकाश प्रत्यक्अभिन्नब्रह्म)कूं जानिके (अपरोक्षपनैंकरि अनुभवकरिके) स्थित भये पुरुषकूं कामक्रोधादिरूप सर्व पाशनकी हानि होवै है औ क्षीण भये तिन पाश शब्दके वाच्य रागादिक (कामादिक) क्लेशनकरि भाविजन्मके हेतु कर्मवै

१ इहां यह रहस्य है:– सुखदुःखका कारण शरीर है औ शरीरका कारण अदृष्ट (धर्म अधर्म) है औ अदृष्टका कारण शुभ अशुभ कर्म (क्रिया) है औ कर्मका कारण राग अरु द्वेष है औ रागद्वेषका कारण अनुकूलताका ज्ञान औ प्रतिकूलताका ज्ञान है औ तिन ज्ञाननका कारण भेदज्ञान है औ भेदज्ञानका कारण प्रत्यक्अभिन्नब्रह्मका अज्ञान है. यह नैष्कर्म्यसिद्धिविषै वार्त्तिककार स्वामीनैं लिख्या है. औ अध्यात्मरामायणगत रामगीताविषै बी यह भवचक्र लिख्या है. प्रत्यक्अभिन्नब्रह्मके ज्ञानसैं भेदज्ञान औ अनुकूलता प्रतिकूलताके ज्ञानकी निवृत्तिद्वारा रागद्वेष

टी.]
२श्रुतिके अयोगतैं, इस (भाविजन्म)कूं पुरुष नहीं पावता
ह अर्थ है. ८

हो
त १५१ देवं मत्वा हर्षशोकौ जहात्यत्रैव धैर्यवान् ।
नैनं कृताकृते पुण्यपापे तापयतः क्वचित् ॥ ९ ॥

ननु, शोकतरणादिरूप तत्त्वज्ञानका फल सुनियेही है, अनुभव नहीं किये हैं. काहेतें ज्ञानिनकूं बी इष्टकी प्राप्ति औ अनिष्टकी निवृत्तिअर्थ प्रवृत्तिके देखनैतें. यह आशंकाकरि, दृढ-परोक्षज्ञानिनकूं तिस (उक्तप्रवृत्ति)के अभावके प्रतिपादनपण "धीर (धैर्यवान्) अध्यात्मयोग (तत्त्वज्ञान)की प्राप्ति- ... पुराण औ स्मृतिके वचनकरि सोहत. ... (ब्रह्मज्ञानकूं अनिष्टनि...) ... (स्वप्रकाश प्रत्यक्अभिन्नब्रह्म)कूं मानिके (... परिके) हर्षशोककूं त्यागता है" इस कठवल्लीश्रुतिके वाक्यकूं अर्थतैं पठन करै हैं:- (॥ देवमिति ॥) धैर्यवान्पुरुष देवकूं जानिके इहांहीं हर्षशोककूं त्यागता है. टीकाः- धैर्यवान् (ब्रह्मचर्यादि साधनसंपन्न अधिकारी) पुरुष जो है, सो देव (चिदानंदादि लक्षणवाले ब्रह्म)कूं जानिके, इहां (इसीजन्म-विषे)हीं हर्षशोककूं त्यागता है * "इस (ज्ञानी)कूंहीं कर्मरूप अग्निकरि संपादन करी यह चिंता तपावती नहीं है." इस (११४७) उक्त अर्थविषे विशेष (विलक्षणता)के दिखावनै परायण, "इस (ज्ञानी)कूं कृत अकृत (पुण्यपाप) तपावते नहीं हैं" इस याज्ञवल्क्यब्राह्मण (बृहदारण्यकके प्रकरण)के वाक्यकूं अर्थतैं पठन करै हैं:- (॥ नैनमिति ॥) इस (ज्ञानी)-

---

तेकी निवृत्तिके भये उदासीनक्रियाके होते बी भाविजन्मके हेतु रागद्वेषपूर्वक कर्मके असंभवतैं विद्वानकूं भाविजन्म होवै नहीं.

॥ ब्रह्मक आनंदतादिक ।

कूं कृत (किया) औ अकृत (नहीं किया) पुण्य अर
कदाचित् तपावता नहीं. ९ टीकाः– पूर्व (११४७
"नहीं किया पुण्य औ किया पाप, तत्त्ववेत्ताकूं तापका
नहीं होवै है" ऐसैं कह्या औ इहां तौ किया वा नहीं कि
पुण्य वा पाप तिसप्रकारका (अज्ञानदशाकी न्याई) ताप करनै
हारा नहीं होवै है, ऐसैं कहिये है; यह भेद है, तैसैं दिखावै हैं:–
ताप नाम चित्तका विकार... हुया धर्मरूप वृ... इहां प्रधानता (मुख्यता)... पुण्यकर्म किया
विषाद (खे... (अनिष्टकी निवृत्ति) नहीं भासती है... विपरीत हो... शंकाकार, परलोकसंबंधी अनिष्टकूं भावि (होनैहारे) ज...
... (भाविजन्म) के ... पूर्वक होनैतैं ... प्रतिपादक जे ... होवै
औ क्षीण भये ... अथतैं पठन
किया हुया वि... उत्पन्न करता है औ तत्त्वव...
दोनूं (पुण्यपाप) बी दोनूं प्रकारके विकारके हेतु कदाचि
नहीं होवै हैं. काहेतैं, अपनी अविक्रिय (निर्विकार) ब्रह्मरू
ताके ज्ञानतैं. यह अभिप्राय है. ९

११५२ इत्यादिश्रुतयो बव्ह्यः पुराणैः स्मृतिभिः सह
ब्रह्मज्ञानेऽनर्थहानिमानंदं चाप्यघोषयन् ॥ १०

ननु, तत्त्वज्ञानकूं अनिष्टनिवृत्ति औ इष्टप्राप्तिकी हेतुता है, ति
सविषै क्या इतनैंहीं वाक्य प्रमाण हैं? तहां नहीं, ऐसैं कहै हैं:–
(॥ इत्यादिश्रुतय इति ॥) इत्यादिक बहुत श्रुतियां पुराण
औ स्मृतिनकरि सहित (प्रमाण) हैं. टीकाः– आदि शब्द-
करि "इस (मनुष्यदेह) विषै जब जानता है, तब सत्य है औ
इसदेहविषै जब नहीं जानता है, तब बडी हानि है" औ
"जो पुरुष इस (ब्रह्म) कूं जानते हैं, सो अमृत (मरणरहित)

होवै हैं औ अन्य (अज्ञानी) दुःखकूंहीं पावते हैं" औ "देव-ताके मध्यविषै जो जो तिस (ब्रह्म)कूं जानता भया, सोइ सो (सर्वात्मा) होवै है" औ "तिस (प्रत्यक्अभिन्नपरमात्मा)-कूं निश्चय करिके मृत्यु (संसार)के मुखतैं लूटता है" इत्या-दिक श्रुतियां ग्रहण करिये हैं औ "सर्वभूतविषै स्थित आत्मा-कूं औ आत्माविषै सर्वभूतनकूं देखता हुया आत्माकूं यजन करनैवाला पुरुष स्वाराज्य (स्वरूपसैं अवस्थितिरूप मुक्ति)कूं पावता है" औ "क्षेत्रज्ञ (सर्वसाक्षीरूप ब्रह्म)की आत्मरूप-ताके विज्ञा[illegible]नैं परमविशुद्धि (सर्वअनर्थकी निवृत्ति) मानी है" [illegible]क पुराण औ स्मृतिके वचनंकरि सहि[illegible] बहुत श्रुतियां [illegible]विषै) (ब्रह्मज्ञानकूं अनिष्टनिवृत्ति औ इष्टप्राप्तिकी हेतुता है, ति[illegible]) प्रमाण हैं. यह अर्थ है ❀ उदाहरण किये जो श्रुति स्मृति औ पुराणके वाक्य, तिन सर्वके तात्पर्यकूं कहै हैं:— (॥ ब्रह्मज्ञान इति ॥) सो (श्रुतियां) ब्रह्मज्ञानके हुये अनर्थकी हानि [illegible]औ आनंद (आनंदकी प्राप्ति)कूं कहती हैं. १०

२ श्रुतिकरि ब्रह्मकी आनंदरूपताके कथनपूर्वक, ब्रह्मकी अद्वि-तीयता औ स्वप्रकाशताकी सिद्धि. ११५३–११७४

११५३ आनंदस्त्रिविधो ब्रह्मानंदो विद्यासुखं तथा ।
विषयानंद इत्यादौ ब्रह्मानंदो विविच्यते ॥ ११ ॥

ननु ब्रह्मानंद, इस आनंद पदकूं ब्रह्मपदकरि विशेषण (युक्त) [illegible]रनैतैं और (ब्रह्मानंदसैं भिन्न) बी आनंद है, ऐसैं जानिये है. [illegible]ो (आनंद) कितनै प्रकारका है औ कैसा है? इस आकांक्षाविषै, [illegible]तस (आनंद)के भेदके दिखावनैपूर्वक ब्रह्मानंदके विवेचनकी

प्रतिज्ञा करै हैंः- (॥ आनंद इति ॥) ब्रह्मानंद, विद्यानंद, औ विषयानंद भेदतैं आनंद तीनप्रकारका है. तिनमैंसैं आदि (तीनअध्याय) विषै ब्रह्मानंद विवेचन करिये है. ११

टीकाः- ब्रह्मानंद, विद्यानंद, औ विषयानंद; इसप्रकारकरि आनंद तीनप्रकारका जाननैकूं योग्य है. तिनमैंसैं और (दोनूं) आनंदकूं ब्रह्मानंदरूप मूलवाले होनैतैं, आदिविषै तीनअध्याय (प्रकरण) करि ब्रह्मानंद विभागकरिके दिखाइये है. यह अर्थ है. ११

११५४ भृगुः पुत्रः पितुः श्रुत्वा वरुणाद् ब्रह्मलक्षणम् ।
अन्नप्राणमनोबुद्धीस्त्यक्त्वाऽऽनंदं विजज्ञिवान् ॥ १२

तहां आदिविषै प्रथम तैत्तिरीयश्रुतिके विचारकरि देखे हुये आनंदरूप ब्रह्म जानिये है; इस अभिप्रायकरि भृगुवल्लीके अर्थकूं संक्षेपकरि दिखावै हैंः- (॥ भृगुरिति ॥) भृगु नामक पुत्र. वरुणपितातैं ब्रह्मके लक्षणकूं सुनिके; अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय; (इन कोशन) कूं त्यागिके आनंदकूं जानता भया. १२ टीकाः- भृगु नामक पुत्र, वरुण नामवाले पितातैं, "जिस (ब्रह्म) तैं यह भूत (प्राणिमात्र) उत्पन्न होते हैं औ जिसकरि उत्पन्न हुये जीवते हैं औ जिसविषै मरणकूं पाये हुये प्रवेश करते हैं; तिसकूं सो ब्रह्म है, ऐसैं जान." इसरूपवाले ब्रह्मके लक्षणकूं सुनिके, अन्नमयादिक कोशनविषै तिस (ब्रह्म) के लक्षणके असंभवकरि तिन (कोशन) के अब्रह्मपनैकूं निश्चय करिके, आनंदकूं; कहिये आनंदमयकोश (रूप पांचअवयववाले पक्षी) विषै पंचमअवयवरूप होनैकरि "ब्रह्मरूप पुच्छ आ-

धार है" ऐसें श्रवण किये बिंबरूप आनंदकूं ब्रह्मके लक्षणकी योजनासें ब्रह्मभावकरि जानता भया. यह अर्थ है. १२

॥ ११५५ ॥ आनंदादेव भूतानि जायंते तेन जीवनम् ।
तेषां लयश्च तत्रातो ब्रह्माऽऽनंदो न संशयः ॥ १३ ॥

भृगुऋषि कैसें आनंदविषै ब्रह्मके लक्षणकूं जोडता भया? यह आशंकाकरि, तिसकी योजनाके प्रकारके दिखावनैं परायण, "आनंदतैंहीं निश्चयकरि यह भूत उत्पन्न होवै हैं औ आनंदकरि उत्पन्न हुये जीवते हैं औ आनंदके ताईं मरणकूं पाये हुये प्रवेश करते हैं" इस वाक्यकूं अर्थतैं पठन करै हैः- (॥ आनंदादिति ॥) आनंदतैंहीं भूत उत्पन्न होवै हैं औ तिस (आनंद)करि जीवनकूं पावते हैं औ तिनका लय तिसविषै होवै है; यातैं "आनंद ब्रह्म है" यामैं संशय नहीं है. १३ टीकाः- ग्राम्यधर्म (पशुधर्म)रूप निमित्तवाले आनंदतैंहीं भूत (प्राणी) उत्पन्न होवै हैं औ तिस (विषयभोगआदिक निमित्तवाले आनंद)करि जीवनकूं पावते हैं औ तिन प्राणिनका लय तिस (सुषुप्तिकालके ब्रह्मरूपभूत आनंद)विषैहीं होवै है. काहेतैं, सुषुप्तिविषै आनंदतैं भिन्न किसी बी वस्तुके अनुभवके अभावतैं. यातैं आनंद ब्रह्महीं है. औ यह सर्वजनके अनुभवकरि सिद्ध है, यातैं इसविषै संशय करनेकूं योग्य नहीं है. यह भाव है. १३

॥ ११५६ ॥ भूतोत्पत्तेः पुरा भूमा त्रिपुटीद्वैतवर्जनात् ।
ज्ञातृज्ञानज्ञेयरूपा त्रिपुटी प्रलये हि नो ॥ १४ ॥

ऐसें तैत्तिरीयश्रुतिके विचारकरि देखनैसें ब्रह्मकी आनंदरूपताकूं दिखायके, अब छांदोग्यश्रुतिके विचारकरि देखनैसें बी

तिस (ब्रह्मकी आनंदरूपता)कूं दिखावनैकूं इच्छते हुये आचार्य, सनत्कुमार औ नारदके संवादरूप छांदोग्यके सप्तमअध्यायविषै स्थित जो भूमा (अपरिच्छिन्नआनंद)रूप ब्रह्मका प्रतिपादक, "जिसविषै अन्यकूं देखता नहीं, अन्यकूं सुनता नहीं, अन्यकूं जानता नहीं, सो भूमा है (इत्यादि)" यह वाक्य है. तिसके अर्थकूं संक्षेपकरि कहै हैं:– (॥ भूतोत्पत्तेरिति ॥)

भूतनकी उत्पत्तितैं पूर्व, त्रिपुटीरूप द्वैतके वर्जन (अभाव)तैं भूमाही था. टीका:– भूत जो आकाशादिक औ तिनके कार्य जरायुज अंडज आदिक हैं, तिनकी उत्पत्तितैं; पूर्व त्रिपुटीरूप द्वैतके वर्जनतैं; कहिये, तिन (ज्ञाता, ज्ञान औ ज्ञेयरूप) पु[illegible])का समाहार (मिलाप)रूप जो त्रिपु[illegible] सोई द्वैत है; तिसका वर्जन (अभाव) है, तिस (हेतु)तैं भूमा (देशतैं वा कालतैं वा वस्तुतैं परिच्छेदशून्य परमात्मा) था "भाव (सद्भाव)के ल्याये हुये द्रव्य (वस्तु)का ल्यावना होवै है" इस न्यायतैं "भूमाहीं होता भया" यह अध्याहार (बाहिरसैं कह्या) है। तिसीहीं द्वैतके वर्जन (अभाव)कूं उपपादन करै हैं:– (॥ ज्ञातृज्ञ० नेति ॥) **ज्ञाता (अंतःकरण) ज्ञान (वृत्ति) औ ज्ञेय (घटादिक विषय)रूप त्रिपुटी प्रलयविषै नहीं है.** १४– टीका:– आगे (११५७ विषै कहनैकी ज्ञाताआदिरूप त्रिपुटी प्रलयकालविषै नहीं है. यह अर्थ सर्व वेदांत (उपनिषदन)विषै संमत (मान्या) है; यह मूलश्लोकविषै हि शब्दकूं जोडनैहारे ग्रंथकारका अभिप्राय है. १४

११५७ विज्ञानमय उत्पन्नो ज्ञाता ज्ञानं मनोमयः ।
ज्ञेयाः शब्दादयो नैतत् त्रयमुत्पत्तितः पुरा ॥ १५

अब ज्ञाताआदिकके स्वरूपकूं दिखावै हैं:-(॥ विज्ञानमय इति ॥) उत्पन्न भया जो विज्ञानमयकोश, सो ज्ञाता है औ मनोमयकोश ज्ञान है औ शब्दादिक विषय ज्ञेय हैं; यह तीन (त्रिपुटी) उत्पत्तितैं पूर्व नहीं हैं. १५ टीकाः- परमात्मातैं उत्पन्न भया बुद्धिउपाधिवाला जीवरूप जो विज्ञानमयकोश, सो ज्ञाता है औ मनोमयकोश (मनविषै प्रतिबिंबकूं पाया मनोमय शब्दका वाच्य चैतन्य) ज्ञान है औ शब्दस्पर्शादिक ज्ञेय प्रसिद्ध हैं. यह तीन कार्य होनैतैं उत्पत्तितैं पूर्व कारण (परमात्मा)तैं भिन्न नहीं हैं. यह अर्थ है. १५

११५८ त्रयाभावे तु निर्द्वैतः पूर्ण एवानुभूयते ।
समाधिसुप्तिमूर्छासु पूर्णः सृष्टेः पुरा तथा ॥ १६॥

फलित (सिद्धअर्थ)कूं कहै हैं;- (॥ त्रयेति ॥) तीनके अभा[व] हुये तौ निर्द्वैत पूर्णही अनुभव करिये है. टीकाः—ज्ञाताआ[दि]क तीनके अभाव हुये निर्द्वैत (द्वैतरहित) पूर्णहीं आत्मा [अ]नुभव करिये है ❀ कहां अनुभव करिये है? तहां कहै हैं:- [(]॥ समाधीति ॥) समाधि, सुषुप्ति औ मूर्छाविषै अद्वैतरूप [आ]त्मा अनुभव करिये है. टीकाः— विद्वानोंके अनुभवके दिखा[व]नैअर्थ समाधिका ग्रहण है औ सर्वजनके अनुभवके जना[व]नैअर्थ सुषुप्ति औ मूर्छाका उदाहरण है. सुषुप्तिआदिकतैं ऊठे [पु]रुषकूं द्वैतके अदर्शनका स्मरण होवै है; तिस (स्मरण)के अ[न्]यथा (अद्वैतरूप अनुभव करनैहारेसैं विना) असंभव है. तिस [(]हेतु)करि द्वैतरहित तिस (द्वैतके अदर्शन)के अनुभव करनैहारेकी सिद्धि है. यह भाव है ❀ सुषुप्तिआदिकविषै अद्वैतकी

सिद्धि होहु, तिसकरि प्रकृत (प्रलयमैं विद्यमान परमात्मा)-विषै क्या आया? तहां कहै हैं:- (॥ पूर्ण इति ॥) तैसैं सृष्टितैं पूर्व बी पूर्ण है. १६ टीकाः- जैसैं सुषुप्तिआदिकविषै परिच्छेद करनैहारेके अभावतैं पूर्ण है, तैसैं सृष्टितैं पूर्व बी तिस (परिच्छेद करनैहारे)के अभावतैं पूर्ण है. यह अर्थ है. १६

११५९ यो भूमा स सुखं नाल्पे सुखं त्रेधा विभेदिनि।
सँनत्कुमारः प्राहैवं नारदायाँतिशोकिने ॥१७॥

ब्रह्मकी पूर्णता होहु, तिसकरि आनंदरूपताविषै क्या आया? यह आशंकाकरि, अन्वय औ व्यतिरेककरि भूमा (परिपूर्ण ब्रह्म)की सुखरूपताके दिखावनैके परायण, "जो भूमा (परिपूर्णतत्त्व) है, सो सुखरूप है औ अल्प (परिच्छिन्नवस्तु)विषै सुख नहीं है" इस श्रुतिवाक्यकूं अर्थतैं क्रमकरि कहै हैं:- (॥ यो भूमेति ॥) जो भूमा है सो सुखरूप है औ तीनप्रकारसैं भेदवाले अल्पविषै सुख नहीं है. टीकाः- जो पूर्व (११५६ विषै) उक्त भूमा है, सो सुखरूपहीं है. काहेतैं, अद्वितीयविषै दुःखके (भेदआदिक)के अभावतैं औ तीनप्रकारके (ज्ञाताआदिकरूप) भेदकरि युक्त अल्प (परिच्छिन्नवस्तु)विषै सुख नहीं है. तीनप्रकारके भेदकरि युक्त, यह जो हेतुगर्भितविशेषण है, सो परिच्छिन्नका विवरण है. यातैं परिच्छिन्नवस्तुकूं ज्ञाताआदिक भेदवाला होनैतैं तिसविषै सुख नहीं है. यह अर्थ है ॥ ऐसैं किसनैं (शिष्य)के ताईं किस (गुरु)नैं कह्या है? तहां कहै हैं:- (॥ सनत्कुमार इति ॥) ऐसैं सनत्कुमार नारदके ताईं कहते भये)- सनत्कुमार- नारदकूं शिष्य होनैविषै कारण कहै हैं:- (॥ अतिशोकिन इति ॥)

अतिशोकवान् नारदके तांई कहते भये. १७ टीकाः– अतिशय (अधिक)शोक जिसकूं भया है, सो कहिये अतिशोकी; ऐसा जो नारदमुनि तिसके तांई कहते भये. १७

११६० सपुराणान् पंचवेदान् शास्त्राणि विविधानि च ।
ज्ञात्वाऽप्यनात्मवित्त्वेन नारदोऽतिशुशोचह १८

तिस (नारद)की अतिशोकयुक्तताविषै कारण कहे हैं:– (॥ सपुराणानिति ॥) नारद, पुराणसहित पंचवेदनकूं औ विविधशास्त्रनकूं जानिके बी अनात्मवित् होनैकरि अतिशोकवान् भया. १८ टीकाः– नारदमुनि, पुराण (१८) सहित वेद (४)कूं औ नानाप्रकारके शास्त्रनकूं जानिके बी आत्मज्ञानसैं रहित होनैकरि अतिशयशोककूं प्राप्त भया. यह छांदोग्यके सप्तमअध्यायविषै प्रसिद्ध है. १८

११६१ वेदाभ्यासात् पुरा तापत्रयमात्रेण शोकिता ।
पश्चात् त्वभ्यासविस्मारभंगगर्वैश्च शोकिता १९

ननु शोकके निवर्त्तक होनैकरि प्रसिद्ध वेदशास्त्रके विषय करनैहारे ज्ञानकूं अतिशोककी हेतुता कैसें है? तहां कहे हैं:– (॥ वेदाभ्यासादिति ॥) वेदके अभ्यासतैं पूर्व, तीनतापमात्रकरि शोकवान्ता होती भई औ पीछे तौ अभ्यास, विस्मार, भंग औ गर्वकरि शोकवान्ता भई. १९ टीकाः– वेदके अभ्यासतैं पूर्व अध्यात्मिकआदिरूप तीनतापकरिहीं शोकवान्ता होती भई औ पीछे तौ अभ्यास (पठनआदिकका आवर्तन) औ विस्मार (पठन कियेका विस्मरण) औ भंग

(अपनैसैं अधिक विद्वान्करि तिरस्कार) औ गर्व (अपनैसैं न्यून विद्वान्के देखनैकरि अपनैविषै अधिकताकी बुद्धि) ; इन कारणनकरि शोकवान्ता भई. १९

११६२ सोऽहं विद्वन् प्रशोचामि शोकपारं नयात्र माम् ।
इत्युक्तः सुखमेवास्य पारमित्यभ्यधाद् ऋषिः२०

ननु, ऐसैं सर्वज्ञनारदकूं बी अतिशयशोकयुक्तपना भया. यह काहेतैं जानिये है? यह आशंकाकरि, "हे भगवन्, सो मैं शोकवान् भया हूं" इस नारदकेहीं वाक्यतैं जान्या है. इस अभिप्राय करिके "तिस (शोकवान्) मेरेकूं भगवान् (आप) शोकके पारके तांई प्राप्त करहु" ऐसैं नारदमुनिनैं तिस शोककी निवृत्तिके उपायके पूछे हुये, सनत्कुमारऋषि भूम शब्दका वाच्य सुखरूप ब्रह्महीं जान्या हुया शोकनिवृत्तिका उपाय है; ऐसैं "सुखहीं जाननैकूं योग्य है" इहांसैं आरंभकरिके उत्तरग्रंथके समूहकरि कहते भये; ऐसैं कहै हैंः- (॥ सोऽहमिति ॥) "हे विद्वन् (सनत्कुमार), सो मैं शोककूं प्राप्त भया हूं. मेरेकूं इहां शोकके पारके तांई प्राप्त करहु." ऐसैं नारदकरि पूछे हुये सनत्कुमारऋषि, "सुखहीं इस (शोक)का पार है;" ऐसैं कहते भये. २०

११६३ सुखं वैषयिकं शोकसहस्रेणाऽऽवृतत्वतः ।
दुःखमेवेतिमत्वाऽऽहनाल्पेऽस्तिसुखमित्यसौ२१

ननु, स्रक् (माला)आदिक विषयनसैं जन्य बहुत सुखनके होते अल्पविषै सुख नहीं है, यह कथन अयुक्त है. ऐसैं जो कहै

तौ बनै नहीं. काहेतें, तिन स्रक्आदिक विषयनके दुःखके संबंधकरि विषयुक्त अन्नकी न्याई बहु दुःखरूपपनैकूं मुनि (सनत्कुमार)करि अभिप्रायका विषय किया होनैतें; ऐसें कहै हैं:— (॥ सुखमिति ॥) विषयजन्य जो सुख है, सो सहस्रशोक (दुःख)करि आवृत होनैतें दुःखरूपहीं है, ऐसें मानिके यह (सनत्कुमारमुनि), "अल्पविषै सुख नहीं है" ऐसें कहते भये. २१

११६४ ननु द्वैते सुखं माभूदद्वैतेऽप्यस्ति नो सुखम् ।
अस्ति चेदुपलभ्येत तथा च त्रिपुटी भवेत् ॥२२॥

द्वैतविषै सुखके अभावकूं अंगीकारकरिके, अद्वैतविषै बी तिस (सुखके अभाव)कूं वादी शंका करै है:— (॥ नन्विति ॥) ननु, द्वैतविषै सुखमति होहु, अद्वैतविषै बी सुख नहीं है ❀ तिसविषै अनुपलब्धि (अप्रतीति)कूं वादी प्रमाण करै है:— (॥ अस्ति चेदिति ॥) अद्वैतविषै जो सुख होवै तौ प्रतीत होवै. टीकाः— अद्वैतविषै जब सुख है, तब विषयसुख आदिककी न्याई प्रतीत हुया चाहिये. जातें नहीं प्रतीत होवै है यातें नहीं है. यह अर्थ है ❀ ननु, अद्वैतविषै सुख प्रतीत होवै है, ऐसें आशंका करनेहारे सिद्धांतीके प्रति वादी कहै है:— (॥ तथेति ॥) तैसें (सुखकी प्रतीतिके) हुये त्रिपुटी होवैगी. २२ टीकाः— अनुभव (प्रतीति)कूं अनुभव करनेहारे औ अनुभवके विषय, इन दोनूंकी अपेक्षावाला होनैतें अद्वैतकी हानि होवैगी. यह भाव है. २२

११६५ मास्त्वद्वैते सुखं किंतु सुखमद्वैतमेव हि।
किंमानमितिचेन्नास्तिमानाकांक्षास्वयंप्रभे २३

अद्वैतकूं सुखके अधिकरण (आश्रय)पनेके निषेधकूं सिद्धांती अंगीकार करै हैं:– (॥ मास्त्विति ॥) अद्वैतविषै सुख मति होहु ❋ तिसविषै हेतुकूं कहै हैं:–(॥ किं त्विति ॥) किंतु जातैं अद्वैतहीं सुख है. टीकाः– जिस कारणतैं अद्वैतहीं सुख है;यातैं अद्वैत, सुखका अधिकरण (आश्रय) नहीं होवै है. यह अर्थ है❋ अद्वैत सुखरूप है; इसविषै कौन प्रमाण है? इस आशंकाके अनुवादपूर्वक, तिस (अद्वैत)कूं स्वप्रकाशरूप होनैतें तिसविषै प्रमाणका प्रश्नहीं अयुक्त है; ऐसैं कहै हैं:– (॥ किं मानमिति ॥) (अद्वैत सुखरूप है, इसविषै) कौन प्रमाण है? ऐसैं जब कहै, तब स्वयंप्रकाश (अद्वैत)विषै प्रमाणकी अपेक्षा नहीं है. २३

११६६ स्वप्रभत्वे भवद्वाक्यं मानं यस्माद् भवानिदम्।
अद्वैतमभ्युपेत्यास्मिन् सुखं नास्तीति भाषते२४

ननु, अद्वैतकी स्वप्रकाशताविषै बी कौन प्रमाण है? यह आशंकाकरि, तेरा वचनहीं प्रमाण है; ऐसैं कहै हैं:–(॥ स्वप्रभत्व इति ॥) अद्वैतकी स्वयंप्रकाशताविषैं तेरा वाक्यहीं प्रमाण है ❋ तिसकूं उपपादन करै हैं:– (॥ यस्मादिति ॥) जातैं तूं इस अद्वैतकूं अंगीकारकरिके, इसविषै सुख नहीं है; ऐसैं कहता है. २४ टीकाः– जिस कारणतैं तेरेकरि प्रमाणकी अपेक्षासें विना अद्वैतकूं अंगीकारकरिके, सुखकाहीं आक्षेप

(निषेध) करिये है; यातैं अद्वैतकी स्वप्रकाशता (प्रमाणकी निरपेक्षता) है. यह अर्थ है. २४

११६७ नाभ्युपैम्यहमद्वैतं त्वद्वचोऽनूद्य दूषणम् ।
वच्मीति चेत् तदा ब्रूहि किमासीद्द्वैततः पुरः २५

मेरेकरि अद्वैत अंगीकार नहीं करिये है; किंतु हे सिद्धांती, तेरे कहे अद्वैतकूं अनुवादकरिके मैं दूषण देता हूं, यातैं मेरे कथन किये अद्वैतकी सिद्धि नहीं है; इसरीतिसैं वादी शंका करै हैः- (॥ नाभ्युपैमीति ॥) मैं अद्वैतकूं अंगीकार नहीं करूं हूं, किंतु तेरे वचनकूं अनुवाद (फेरी कथन)करिके दूषण कहता हूं, ऐसैं जब कहै; ❀ विकल्पके असहन करनैतैं अद्वैतका अनंगीकार बनै नहीं, इसरीतिसैं मानते हुये सिद्धांती वादीके प्रति पूछते हैंः- (॥ तदेति ॥) तब (हे वादी,) द्वैत (जगत्)तैं पूर्व क्या था ? सो कथन कर. २५

११६८ किमद्वैतमुत द्वैतमन्यो वा कोटिरंतिमः ।
अप्रसिद्धो न द्वितीयोऽनुत्पत्तेः शिष्यतेऽग्रिमः २६

(११६७ उक्त) किं (क्या) शब्दकरि सूचन किये विकल्पकूं दिखावै हैंः- (॥ किमद्वैतमिति ॥) (द्वैततैं पूर्व) क्या अद्वैत था अथवा द्वैत था, वा अन्य कोटि (द्वैत अद्वैततैं विलक्षणरूप पक्ष) था ? (ये तीन पक्ष हैं) ❀ तीसरेपक्षकूं निराकरण करै हैंः- (॥ अंतिम इति ॥) अंतका (तीसरा)पक्ष अप्रसिद्ध है. टीकाः- लोकविषै द्वैतअद्वैततैं विलक्षणरूपके अदर्शनतैं (तीस-

रा पक्ष अप्रसिद्ध है). यह भाव है ❀ द्वितीय (द्वैत था इस पक्ष)कूं निराकरण करै हैं:– (॥ न द्वितीय इति ॥) दूसरा पक्ष बनै नहीं ❀ तिसविषै कारण कहै हैं:– (॥ अनुत्पत्तेरिति ॥) अनुत्पात्तितैं. टीका:– द्वैतकूं तब (अपनैतैं पूर्व) अनुत्पन्न होनैतैं (द्वैततैं पूर्व द्वैत था, यह दूसरापक्ष बनै नहीं). यह भाव है ❀ यातैं द्वैततैं पूर्व अद्वैत था, यह प्रथमपक्ष परिशेष रहता है; ऐसैं कहै हैं:–(॥ शिष्यत इति ॥) प्रथमपक्ष शेष रहता है.२६

११६९ अद्वैतसिद्धिर्युक्त्यैव नानुभूत्येति चेद् वंद ।
निर्दृष्टांता सदृष्टांता वा कोटॆ्यंतरमत्र नो ॥२७॥

ननु, (११६८) उक्त प्रकारकरि अद्वैत युक्ति (अनुमान)सैंहीं सिद्ध होवै है, अनुभवसैं नहीं ; इसरीतिसैं वादी पूर्वपक्ष करता है:– (॥ अद्वैतेति ॥) अद्वैतकी सिद्धि युक्तिसैंही है, अनुभवसैं नहीं, ऐसैं जब कहै; ❀ अद्वैतकी सिद्धि युक्तिसैंही है, यह जो वादीनैं कह्या, सो विकल्पके असहन करनैतैं बनै नहीं; ऐसैं मानते हुये सिद्धांती, युक्तिके प्रति विकल्प करै हैं:– (॥ वदेति ॥) (तब हे वादी, यह युक्ति) दृष्टांतरहित है, वा दृष्टांतसहित है ! सो कथन कर ❀ विकल्पकी न्यूनताकूं निराकरण करै हैं:– (॥ कोट्यंतरमिति ॥) इहां और (दृष्टांतरहित औ सहित उभयरूप युक्ति है, यह तीसरा)विकल्प (अप्रसिद्ध होनैतैं) नहीं है. २७

११७० नानुभूतिर्न दृष्टांत इति युक्तिस्तु शोभते ।
सँदृष्टांतत्वपक्षे तु दृष्टांतं वद मे मतम् ॥ २८ ॥

दृष्टांतरहित युक्ति है, इस प्रथमपक्षकूं उपहाससहित निराकरण करै हैंः- (॥ नानुभूतिरिति ॥) अनुभव बी नहीं है औ दृष्टांत बी नहीं है, यह युक्ति तौ शोभाकूं पावती है ! टीकाः- अद्वैतकी सिद्धि युक्तिसैंही है, ऐसैं कहनैवाले वादीकरि अनुभव प्रथम अंगीकार नहीं करिये है औ युक्ति तौ दृष्टांतके दिखावनै विना कछु बी नहीं साधती (सिद्ध करती) है; यातैं दृष्टांत नहीं है, यह कथन अयुक्त है. यह भाव है ❋ दृष्टांतसहित युक्ति है, इस द्वितीयविकल्पविषै दोनूंवादी (तुज औ मुज)कूं संमत दृष्टांत कह्या चाहिये; ऐसैं कहै हैंः- (॥ सदृष्टांतेति ॥) दृष्टांतसहित युक्ति है, इस पक्षविषै तौ मेरेकूं संमत दृष्टांत कथन कर. २८

११७१ अद्वैतः प्रलयो द्वैतानुपलंभेन सुप्तिवत् ।
इति चेत् सुँप्तिरद्वैते तत्र दृष्टांतमीरय ॥ २९ ॥

तब दृष्टांतकरिहीं अद्वैतकूं साधता हूं, इसरीतिसैं पूर्ववादी शंका करै हैः- (॥ अद्वैत इति ॥) प्रलय, अद्वैत (द्वैतरहित) है; द्वैतके अनुपलंभ (अप्रतीतिरूप हेतु)करि, सुषुप्तिकी न्याई, ऐसैं जब कहै; टीकाः- प्रलय, द्वैतरहित होनैकूं योग्य है, द्वैतकी अप्रतीतिवाला होनैतैं; जो जो द्वैतकी अप्रतीतिवाला है, सो सो द्वैतरहित है; जैसैं सुषुप्ति है. तैसैं (यह अनुमान दृष्टांतसहित युक्ति है) ❋ ननु, ऐसैं साधनैहारे तुज

---

१ इहां प्रलय शब्दकरि प्रलय शब्दका वाच्य जो सर्वद्वैतका अभाव, तिसकरि उपलक्षित ब्रह्मकाहीं ग्रहण है. ऐसैं इस प्रसंगविषै प्राप्त सुषुप्ति शब्दके अर्थविषै बी जानि लेना.

(वादी)कूं अपनी सुषुप्ति दृष्टांत है, वा पर (अन्यपुरुष)की सुषुप्ति दृष्टांत है ? ये दो विकल्प हैं. तिनमैं अपनी सुषुप्ति दृष्टांत है, इस प्रथमपक्षविषै, तिस (अपनी सुषुप्ति)कूं अन्यपुरुषकेप्रति असिद्ध होनैकरि तिस (अपनी सुषुप्ति)की सिद्धिअर्थ अन्यदृष्टांत कह्या चाहिये; इसरीतिसैं सिद्धांती कहै हैं:– (॥ सुप्तिरिति ॥)अद्वैतविषै अपनी (तेरी)सुषुप्ति (दृष्टांत) है, तिस (अपनी सुषुप्ति)विषै दृष्टांत कथन कर. २९

११७२ दृष्टांतः परसुप्तिश्चेदहो ते कौशलं महत्।
यः स्वसुप्तिं न वेत्त्यस्य परसुप्तौ तु का कथा॥३०॥

ननु, तिस (अपनी सुषुप्ति)का परकी सुषुप्तिही दृष्टांत है; इस द्वितीयविकल्पकूं वादी आशंका करै हैः– (॥दृष्टांत इति॥) (अपनी सुषुप्तिविषै)परकी सुषुप्ति दृष्टांत है,ऐसैं जब कहै;❀ परसुषुप्ति तेरेकूं अप्रसिद्ध होनैतैं तेरेकरि दृष्टांत करना बनै नहीं; इसरीतिसैं उपहाससहित सिद्धांती कहै हैं:– (॥ अहो इति॥) तब तेरा कुशलपना बडा अहो (उत्कृष्ट) है ! जो (तूं) अपनी सुषुप्तिकूं नहीं जानता है, इस (तेरे)कूं परकी सुषुप्तिविषै तौ (नहीं जाननैकी) क्या कथा है ! ३० टीकाः– जो तूं सुषुप्तिकूं अनुभवगम्य होनैके अनंगीकारकरि अपनी सुषुप्तिकूं बी नहीं जानता है, इस तेरेकूं परकी सुषुप्तिविषै क्या कथा है! काहिये परकी सुषुप्तिका ज्ञान नहीं होवै है, इसविषै क्या कहना है. यह भाव है. ३०

११७३ निश्चेष्टत्वात् परः सुप्तो यथाऽहमिति चेत् तदा।
उदाहर्तुः सुषुप्तेस्ते स्वप्रभत्वं बलाद् भवेत्॥३१॥

ननु, अनुमानतैं परकी सुषुप्तिकी सिद्धि (निश्चय) होवै है; इसरीतिसैं वादी शंका करै हैः- (॥ निश्चेष्टेति ॥) परसुषुप्तिवान् है, चेष्टारहित होनैतैं; जैसैं मैं हूं तैसैं, ऐसैं जब कहै; टीकाः- विवादका विषय जो परपुरुष, सो सुषुप्तिवान् होनैकूं योग्य है; प्राणआदिककरि युक्त हुया बी चेष्टा (क्रिया) रहित होनैतैं, मुजकी न्याई; इस अनुमानतैं (परसुषुप्तिकी सिद्धि होवै है). यह अर्थ है. ऐसैं जब है; ❁ तब तेरी सुषुप्तिकूं स्वप्रकाशपना शेष रहता है; इसरीतिसैं सिद्धांती कहै हैः- (॥ तदेति ॥) तब उदाहरण करनैहारा जो तूं, तिस तेरी सुषुप्तिका स्वप्रकाशपना बलतैं होवै है. ३१ टीकाः- तब मेरेप्रति सुषुप्तिकूं उदाहरण (दृष्टांत) करनैहारा जो तूं है, तिस तेरी सुषुप्तिका स्वप्रकाशपना बलतैं (सुषुप्तिके उदाहरणके सामर्थ्यतैं)हीं होवै है. ३१

११७४ नेंद्रियाणि न दृष्टांतस्तथाऽप्यंगीकरोषि ताम् ।
इदमेव स्वप्रभत्वं यद् भानं साधनैर्विना ॥३२॥

मेरी सुषुप्तिका स्वप्रकाशपना कैसैं बलतैं होवै है? यह आशंकाकरि कहै हैः- (॥ नेंद्रियाणीति ॥) इंद्रिय नहीं हैं औ दृष्टांत नहीं है, तौ बी तिस (सुषुप्ति)कूं अंगीकार करता है; ऐसैं साधनसैं विना जो भान है, यहहीं सुषुप्तिका स्वप्रकाशपना है. ३२ टीकाः- सुषुप्तिके ग्राहक इंद्रिय नहीं हैं. काहेतैं, तिन (इंद्रियन)कूं अपनै कारण (अज्ञान)विषै विलीन होनैतैं औ दृष्टांत (परसुषुप्ति) दोनूंकरि संमत नहीं है. काहेतैं, अन्यपुरुषकी सुषुप्तिके अप्रसिद्धपनैकूं (११७२ विषै) कथन

किया होनैतें. तौ बी तिस सुषुप्तिकूं तूं अंगीकार करता है. ऐसैं हुये ज्ञानके साधनसैं विना बी भान (प्रकाश) जो होवै है, यहहीं सुषुप्तिका स्वप्रकाशपना है. यह अर्थ है. इहां यह अनुमान हैः– विवादकी विषय जो सुषुप्ति, सो स्वप्रकाश है; ज्ञानसाधनके न होते बी प्रकाशमान होनैतैं, सांख्यनकरि संमत आत्माकी न्याई औ प्राभाकर (प्रभाकरके अनुसारिन)करि संमत संवेदन (वृत्तिज्ञान)की न्याई औ शाक्य (बौद्ध)करि संमत स्वात्माकी न्याई. यह अर्थ है. ३२

२ आनंदके स्वरूपसहित ताका विवेचन ११७५–१२३०

१ सुषुप्तिमैं ब्रह्मानंदकी सिद्धि. ११७५–१२१८

११७५ स्तामद्वैतस्वप्रभत्वे वद सुप्तौ सुखं कथम् ।
शृणु दुःखं तदा नास्ति ततस्ते शिष्यते सुखम् ३३

इसरीतिसैं प्रलयके दृष्टांत होनैकरि उदाहरण करी जो सुषुप्ति, ताके अद्वैतपनैकूं औ स्वप्रकाशपनैकूं साधिके, तिस (सुषुप्ति)विषै सुखके साधनैअर्थ पूर्वपक्षीकी आशंकाकूं उठावते हैंः– (॥ स्तामद्वैतेति ॥) सुषुप्तिविषै अद्वैतपना औ स्वप्रकाशपना

---

१ जैसैं सांख्य प्राभाकर औ बौद्धमतविषै आत्मा, वृत्तिज्ञान औ आत्मा क्रमतैं अन्यसाधनसैं विना बी प्रकाशमान होनैतैं स्वयंप्रकाशरूप माने हैं; तैसैं हमारे मती विषै बी सुषुप्तिकरि उपलक्षित आत्मा अन्यसाधनसैं विना प्रकाशमान होनैतैं स्वयंप्रकाश है; परंतु सांख्यादिकनके मतमैं आत्मआदिकनकूं अपनैं प्रकाशविषै आपकी अपेक्षा है औ हमारेमतविषै सो नहीं है; किंतु आत्मा सर्वदा प्रकाशमानही है.

होहु. (परंतु हे सिद्धांती,)सुषुप्तिविषै सुख किसप्रकार है? सो कथन कर ❀ सुखके प्रतियोगी (विरोधी) दुःखकूं तब (सुषुप्तिविषै) नहीं होनैतैं सुखहीं परिशेष होवै है; इसरीतिसैं सिद्धांती कहै हैंः- (॥ शृण्विति ॥) (हे वादी,) श्रवण करः- जातैं तब (सुषुप्तिविषै) दुःख नहीं है, तातैं तेरेकूं सुखहीं शेष रहता है. ३३ टीकाः- सुख अरु दुःखकूं प्रकाश अरु तमकी न्याईं परस्पर विरोधि होनैतैं, दुःखके अभाव हुये सुखहीं अंगिकार करनैकूं योग्य है. यह भाव है. ३३

११७६ अंधः सन्नप्यनंधः स्यादविद्धोऽविद्धोऽथरोग्यपि।
अरोगीति श्रुतिः प्राह तच्च सर्वे जना विदुः ३४

सुषुप्तिविषै दुःखके अभावमैं कौन प्रमाण हैं ? इस आकांक्षाविषै, श्रुति औ अनुभव प्रमाण हैं; ऐसैं कहै हैं;-(॥ अंध इति ॥) "(सुषुप्तिविषै) अंध हुया बी अनंध (अंधतारहित) होवै हैं औ विद्ध हुया बी अविद्ध होवै है औ रोगी बी अरोगी होवै है" ऐसैं श्रुति कहती है औ सो सर्वजन जानते हैं. ३४ टीकाः- "तातैं निश्चयकरि इस (जागृत्स्वप्नविषै विद्यमान देहाभिमानरूप) सेतु (पांज)कूं तरिके, पुरुष अंध हुया बी अनंध होवै है औ विद्ध (शस्त्रकरि वेध्या) हुया बी अविद्ध होवै है औ उपतापी (रोगी)हुया बी अनुपतापी (अरोगी) होवै है" औ "हे भगवन्, यद्यपि सो यह शरीर अंध होवै है, (तथापि) सो (पुरुष) अनंध (अंधभाव रहित) होवैहै" इत्यादिक श्रुतियां देहाभिमानके किये अंधताआदिक दोषनकूं निवारण करै हैं औ व्याधिकरि पीडाकूं प्राप्त

भये पुरुषकूं बी सुषुप्तिविषै तिस (पीडासैं जन्य) दुःखका अनुभव नहीं है. यह सर्वजनकूं प्रसिद्ध है. यह अर्थ है. ३४

११७७ न दुःखाभावमात्रेण सुखं लोष्टशिलादिषु ।
द्वयाभावस्य दृष्टत्वादिति चेद् विषमं वचः ॥३५॥

ननु, "जहां दुःखका अभाव है, तहां सुख है" इस व्याप्तिका लोष्ट (मट्टीके खडे)आदिकविषै व्यभिचार है; इसरीतिसैं वादी शंका करै हैः- (॥ न दुःखेति ॥) दुःखके अभावमात्रकरि सुखका कल्पन होवै नहीं. काहेतैं, लोष्ट शिला आदिकनविषै दोनूंके अभावके देखनैतैं, ऐसैं जब कहै; टीकाः- दुःखके अभावमात्रकरि सुखकी कल्पना करनैकूं शक्य नहीं होवै है. काहेतैं, लोष्ट औ शिला आदिकनविषै दोनूं (सुख दुःख) के अभावके देखनैतैं. यह अर्थ है ❀ दृष्टांत (लोष्ट शिला आदिक) औ दार्ष्टांतिक (पुरुषकी सुषुप्ति) के विषम होनैतैं, यह कथन बनै नहीं; इसरीतिसैं सिद्धांती परिहार करै हैंः- (॥ विषममिति ॥) तब तेरा वचन विषम है. ३५ टीकाः- तब तेरा वचन (दृष्टांतका कथन) विषम (दार्ष्टांतिकके अनुसारी नहीं) है. यह अर्थ है. ३५

११७८ मुखदैन्यविकासाभ्यां परदुःखसुखोहनम् ।
दैन्याद्यभावतो लोष्टे दुःखाद्यूहो न संभवेत् ३६

दृष्टांतके अननुकूल (दार्ष्टांतिकसैं विषम) पनैकूंहीं उपपादन करै हैंः- (॥ मुखेति ॥) मुखके दीनता औ विकास (प्रसन्नता), इन दोनूं (लिंगन) करि क्रमतैं सुख औ दुःख-

की कल्पना होवै है. टीकाः- अन्यपुरुषविषै स्थित सुख औ दुःखकी कल्पना (अनुमान) क्रमतैं सुखकी दीनता औ प्रसन्नतारूप लिंगनकरि करनैकूं योग्य हैः- यह पुरुष दुःखी है, खेदयुक्त (व्याकुल) मुखवाला होनैतैं, प्रसिद्ध दुःखवान्की न्याई औ यह पुरुष सुखी है, प्रसन्नमुखवाला होनैतैं, प्रसिद्ध सुखीपुरुषकी न्याई ❀ ननु ऐसैं लोकविषै होहू, इसकरि प्रकृत (लोष्टआदिक दृष्टांतकी विषमता) विषै क्या आया? तहां कहै हैंः- (॥ दैन्येति ॥) लोष्टविषै दीनता आदिकके अभावतैं, दुःख आदिककी कल्पना नहीं संभवै है. ३६ टीकाः- लोष्टआदिकविषै मुखकी दीनता औ प्रसन्नतारूप लिंग (हेतुन)के अभावतैं सुख औ दुःखकी कल्पनाहीं नहीं संभवै है; यातैं तिस (लोष्टआदिक)विषै दुःखका अभाव बी निश्चय करनैकूं शक्य नहीं है. यह अर्थ है. ३६

॥ ११७९ ॥ स्वकीये सुखदुःखे तु नोहनीये ततस्तयोः।
भावो वेद्योऽनुभूत्यैव तदभावोऽपि नान्यतः ३७

अब अन्यपुरुषके सुखदुःखतैं अपनै सुखदुःखकी विषमता दिखावै हैंः- (॥ स्वकीयेति ॥) अपनै सुखदुःख तौ जातैं अनुमानसैं जाननैकूं योग्य नहीं है; तातैं तिनका भाव जैसैं अनुभवसैंही वेद्य (जाननै योग्य) है; तैसैं तिनका अभाव बी अनुभवसैंहीं वेद्य है, अन्यतैं नहीं. ३७ टीकाः- अपनैविषै स्थित सुख औ दुःखकूं तौ अनुभवकरि सिद्ध होनैतैं, जातैं अनुमेयता (अनुमानसैं जाननैकी योग्यता) नहीं है, तातैं तिन (अपनै सुखदुःख)का भाव (सद्भाव)

जैसैं अनुभव (प्रत्यक्षप्रमा)सैंहीं जानिये है; तैसैं तिन (अपनै सुखदुःख)का अभाव बी अन्य (अनुमानआदिक)तैं नहीं जानिये है; किंतु, प्रत्यक्ष (अनुभव)सैंहीं जानिये है. यह अर्थ है. ३७

११८० तथा सति सुषुप्तौ च दुःखाभावोऽनुभूतितः ।
विरोधिदुःखराहित्यात्सुखंनिर्विघ्नमिष्यताम् ३८

फलितकूं कहै हैं;- (॥ तथेति ॥) तैसैं हुये अपनी सुषुप्तिविषै दुःखका अभाव अनुभवकरि सिद्ध है. टीकाः- तैसैं (अपनै सुखदुःखकूं अनुभवसैं जाननैकी योग्यता) हुये, अपनी सुषुप्तिविषै बी विद्यमान दुःखका अभाव अनुभवकरिहीं सिद्ध होवै है ❀ तातैं (दुःखके अभावतैं) बी क्या सिद्ध होवै है ? तहां कहै हैं:- (॥ विरोधीति ॥) विरोधि दुःखकरि रहित होनैतैं, निर्विघ्नसुख अंगीकार करना. ३८ टीकाः- सुषुप्तिविषै सुखके विरोधी दुःखके अभावतैं निर्विघ्न (बाधरहित) सुख अंगीकार करनैकूं योग्य है. ३८

११८१ महत्तरप्रयासेन मृदुशय्यादिसाधनम् ।
कुतः संपाद्यते सुप्तौ सुखं चेत् तत्र नो भवेत् ३९

शय्याआदिक जो सुखके साधन हैं, तिनके संपादनका अन्यथा (सुखसैंविना) असंभव है; यातैं बी सुषुप्तिविषै सुख है, यह जानिये है; ऐसैं कहै हैं:- (॥ महत्तरेति ॥) जब तिस सुषुप्तिविषै सुख नहीं होवै, तब अतिशय बडे प्रयास (श्रम)करि कोमलशय्याआदिक साधन काहेतैं संपादन

करिये है ? ३९ टीकाः-तिस सुषुप्तिविषै जब सुख नहीं होवै, तब बहुतप्रकारके द्रव्यके खर्चनै औ शरीरके पीडनआदिक परिश्रमकरि कोमलगदेले मंचेसैं आदिलेके सुखका साधन किस कारणतैं संपादन करिये है ? (सुखसैं विना) अन्य किसी कारणतैं बी नहीं. यह अर्थ है. ३९

११८२ दुःखनाशार्थमेवैतदिति चेद् रोगिणस्तथा ।
भवत्वरोगिणस्त्वेतत् सुखायैवेति निश्चिनु ॥ ४० ॥

(११८१) उक्त शय्यादिक साधनके संपादनके ज्ञानरूप अर्थापत्तिप्रमाणसैं अन्यथा (सुखसैं विना) संभवकूं वादी शंका करै हैः- (॥ दुःखेति ॥) यह (शय्याआदिकका संपादन) दुःखके नाश अर्थहीं है, ऐसैं जब कहै ; ❁ यह शय्याआदिक साधनका संपादन दुःखनिवृत्तिरूप फलवाला है, यह नियम नहीं है; इसरीतिसैं सिद्धांती परिहार करै हैः- (॥ रोगिण इति ॥) तब तैसैं (दुःखके नाशअर्थ) रोगीकूं होहु औ अरोगीकूं तौ यह (शय्याआदिकका संपादन) सुखअर्थहीं है; ऐसैं निश्चय कर. ४० टीकाः- रोगआदिक दुःखके होते तिस (दुःख)की निवृत्तिअर्थ सो (शय्याआदिका संपादन) होहु औ तिस (रोगआदिक दुःख)के अभाव हुये तौ निवारण करनैयोग्य दुःखके अभावतैं, तिस (शय्याआदिक)का संपादन सुखअर्थहीं हैं; ऐसैं जानिये है. यह अर्थ है. ४०

११८३ तर्हि साधनजन्यत्वात् सुखं वैषयिकं भवेत् ।
भवत्येवात्र निद्रायाः पूर्वं शय्याऽऽसनादिजम् ४१

ननु, सुषुप्तिके सुखकूं शय्याआदिक साधनकरि जन्यताके हुये तिसकी आत्मस्वरूपता भंग होवैगी; इसरीतिसैं वादी शंका करै हैः– (॥ तर्हीति ॥) तब साधनकरि जन्य होनैतैं सो (सुषुप्तिका सुख) विषयजन्य सुख होवैगा (नित्य आत्मस्वरूप सुख नहीं); ऐसैं जो कहो, ❀ क्या निद्राके आवनैतैं पूर्वकालके सुखकूं विषयसैं जन्यपना तेरेकरि कहिये है, अथवा निद्राकालके सुखकूं विषयसैं जन्यपना कहिये है? ऐसैं दो विकल्पकरिके, प्रथमपक्षकूं सिद्धांती अंगीकार करै हैंः– (॥ भवत्विति ॥) तौ इहां (सुषुप्तिके सन्मुख होनैकी अवस्थाविषै) निद्रातैं पूर्व (जो सुख है, सो) शय्या आसन आदिक (विषय)सैं जन्य होहु. ४१

११८४ निद्रायां तु सुखं यत् तज्जन्यते केन हेतुना ।
सुखाभिमुखधीरादौ पश्चान्मज्जेत् परे सुखे ४२

दूसरेपक्षकूं निराकरण करैहैंः– (॥ निद्रायामिति ॥) निद्राविषै जो सुख है, सो किस हेतुकरि जन्य होवै है? (किसीकरि बी नहीं) टीकाः– सुषुप्तिविषै शय्याआदिक साधनके अनुसंधान (ज्ञान)के अभावतैं तिन (शय्याआदिक साधन)करि जन्यपना तिस (सुषुप्तिकालके सुख)कूं नहीं संभवै है. यह भाव है ❀ ननु, निद्राविषै जब अजन्य (नित्य) सुख है, तब सो (निद्राकालका सुख) विषयसुखकी न्याई काहेतैं अनुभव नहीं करिये है? यह आशंकाकरि, अनुभवकरनैहारे (जीव)कूं तब (निद्राकालविषै) तिस (सुख)विषै निमग्न (विलीन) होनैतैं, विषयसुखकी न्याई तिस (निद्राकालके सुख)-

का अनुभव नहीं होवै है; इस अभिप्रायकरि कहै हैं:- (॥ सुखेति ॥) आदिविषै जीव, सुखके अभिमुख बुद्धिवाला होवै है औ पीछे परसुखविषै मग्न होवै है. ४२ टीका:- निद्रातैं पूर्वकालविषै जीव, शय्याआदिकसैं जन्य सुखके सन्मुख भई है बुद्धि जिसकी, ऐसा होवै है; औ पीछे (निद्राकालविषै) पर (उत्कृष्ट) सुख (स्वरूपआनंद)विषै मग्न होवै है. ४२

११८५ जाग्रद्व्यापृत्तिभिः श्रांतो विश्रम्याथ विरोधिनि।
अपनीते स्वस्थचित्तोऽनुभवेद् विषये सुखम् ४३

संक्षेपसैं (११८४) उक्त अर्थकूं तीनश्लोककरि वर्णन करै हैं:- (॥ जागृद्व्यावृत्तिभिरिति ॥) जीव, जागृत्के व्यापारनकरि श्रांत हुया विश्रामकूं पायके, पीछे विरोधि (दुःख)-के निवृत्त हुये स्वस्थचित्तवाला होयके विषयविषै सुखकूं अनुभव करता है. ४३ टीका:- जीव जो है, सो जागृत्अवस्थाविषै क्रियमाणव्यापारनके भेदकरि श्रांत (श्रमकूं प्राप्त) हुया विश्राम (कोमलशय्याआदिकविषै शयन)कूं करिके पीछे विरोधि (व्यापारसैं जनित दुःख)के निवारण किये हुये स्वस्थचित्तवाला (अव्याकुलमनवाला) होयके शय्याआदिक विषयविषै उत्पन्न भये सुखकूं अनुभव करता (साक्षात् करता) है. ४३

११८६ आत्माभिमुखधीवृत्तौ स्वानंदः प्रतिबिंबति ।
अनुभूयैनमत्रापि त्रिपुट्या श्रांतिमाप्नुयात्॥४४

विषयसुख किसप्रकारका है? इस आकांक्षाविषै तिस (विषयसुख)के स्वरूपकूं दिखावते हुये, परसुखविषै निमग्न होनेके

निमित्त होनैंकरि तिस (विषयसुख)के अनुभवविषै वी श्रमकूं दिखावै हैंः– (॥ आत्मेति ॥) आत्माके अभिमुख (सन्मुख) भई बुद्धिवृत्तिविषै स्वरूपआनंद प्रतिबिंबकूं पावता है; इहां बी इस (प्रतिबिंब)कूं अनुभवकरिके त्रिपुटीकरि श्रमकूं पावता है. ४४ टीकाः– अप्राप्तविषयके संपादन आदिककरि दुःखकूं अनुभवकरिके, तिस (दुःख)की निवृत्ति-अर्थ कोमलशय्याआदिकविषै शयन करनैहारे पुरुषकी बुद्धि अंतर्मुख होवै है औ तिस (अंतर्मुख)बुद्धिवृत्तिविषै अपनै सन्मुख दर्पणविषै मुखकी न्याई स्वरूपभूतआनंद प्रतिबिंबकूं पावता है; यह (आनंदका प्रतिबिंब)हीं विषयानंद है. इहां (इसवेलाविषै) बी इस विषयानंदकूं अनुभव करिके, अनुभविता (अनुभवकर्ता) औ अनुभव औ अनुभाव्य (अनुभवका विषय), इसरूपवाली त्रिपुटीकरि जीव श्रमकूं पावता है. ४४

११८७ तच्छ्रमस्यापनुत्यर्थं जीवो धावेत् परात्मनि।
तेनैक्यं प्राप्य तत्रत्यो ब्रह्मानंदः स्वयं भवेत् ४५

तिस (त्रिपुटीजन्य श्रमकी प्राप्ति)तैं क्या होवै है? तहां कहै हैंः– (॥ तच्छ्रमस्येति ॥) तिस श्रमकी निवृत्तिअर्थ, जीव, परमात्माविषै दौडता है औ तिसके साथि एकताकूं पायके आप तहांका ब्रह्मानंद होवै है. ४५ टीकाः– तिस (त्रिपुटी)के दर्शनसैं जनित श्रमके निवारणअर्थ सोइ जीव परमात्मा (आनंदरूप ब्रह्म)विषै दौडता (तत्काल जाता) है औ जायके तिस (ब्रह्म)के साथि एकता (तादात्म्य)कूं पायके, “हे सोम्य, तब (सुषुप्तिविषै) सत् (ब्रह्म)के साथि

संपन्न (एकताकूं प्राप्त) होवै है" इस श्रुतितैं आप बी तिस सुषुप्तिविषै स्थित ब्रह्मानंद होवै है. ४५

११८८ दृष्टांताः शकुनिः श्येनः कुमारश्च महान्नृपः ।
महाब्राह्मण इत्येते सुप्त्यानंदे श्रुतीरिताः ॥४६॥

इस उपपादन किये सुषुप्तिगत आनंदविषै शकुनिआदिक बहुतदृष्टांत श्रुतिविषै कहे हैं; ऐसैं कहे हैंः– (॥ दृष्टांता इति ॥) शकुनि (पक्षी), श्येन (पक्षीविशेष), कुमार, महानृप (चक्रवर्तीराजा) औ महाब्राह्मण; ये पांच दृष्टांत सुषुप्तिके आनंदविषै श्रुतिमैं कहे हैंः ४६ टीकाः–शकुनिआदिक पांच-दृष्टांतनकरि सुषुप्तिविषै आनंदके उपपादनसैं, तहां सुख नहीं है; यह मत निराकरण किया. ४६

११८९ शकुनिः सूत्रबद्धः सन् दिक्षु व्यापृत्य विश्रमम् ।
अलब्ध्वा बंधनस्थानं हस्तस्तंभाद्युपाश्रयेत् ४७

तहां प्रथम, "सो जैसैं शकुनि (पक्षी), सूत्रकरि बद्ध हुया दिशादिशाके ताईं पतनकरिके अन्यठिकानैं आयतन (आश्रय)-कूं न पायके बंधन (बंधनके स्थान)कूंहीं आश्रय करता है; ऐसैंहीं "हे सोम्य, सो मन (मनउपाधिवाला जीव) दिशा दिशा (सुख दुःख)के प्रति पतनकरिके अन्यठिकानैं आयतन (आश्रय)कूं न पायके प्राण (प्राणउपलक्षित परब्रह्म)कूंही आश्रय करता है. जातैं हे सोम्य, मन प्राणरूप बंधन (आश्रय)-वाला है (तातैं प्राणकूंहीं आश्रय करता है)" इस दृष्टांत औ दार्ष्टांतके प्रतिपादनपरायण छांदोग्यश्रुतिके षष्ठअध्यायगत वाक्यके अर्थकूं संक्षेपसैं दो श्लोककरि दिखावैं हैं (॥ शकुनिरिति॥)

सूत्रकरि बांध्या हुया शकुनि सर्वदिशाकेविषै व्यापारकरिके तहां विश्राम (आधार)कूं न पायके, बंधनके स्थान हस्त स्तंभ आदिककूं जैसैं आश्रय करै है. ४७ टीकाः– हस्तआदिकविषै कहुं आधारसूत्रकरि बांध्या हुया शकुनि (पक्षी), आहारआदिकके ग्रहणअर्थ पूर्वआदिक दिशाविषै व्यापारकरिके तहां विश्राम (जिसविषै विश्राम करिये, ऐसैं आधार)कूं न पायके बंधनके स्थान हस्तआदिककूंहीं जैसैं आश्रय करै है. ४७

११९० जीवोपाधिमनस्तद्वद् धर्माधर्मफलाऽऽप्तये ।
स्वप्ने जाग्रति च भ्रांत्वा क्षीणे कर्मणि लीयते४८

(॥ जीवोपाधीति ॥) तैसैं जीवका उपाधि मन बी, धर्म अधर्मके फलकी प्राप्तिअर्थ स्वप्न औ जाग्रत्विषै भ्रमण करिके कर्मके क्षीण भये लीन होवै है. ४८ टीकाः तैसैं जीवका उपाधिरूप मन बी पुण्यपापके फल सुखदुःखके अनुभव अर्थ, स्वप्न औ जागृत्अवस्थाविषै तहां तहां भ्रमण (व्यापार) करिके भोगप्रद कर्मके क्षीण भये अपनै उपादान अज्ञानविषै विलीन होवै है औ तिस (मन)के लय हुये तिस (मन)रूप उपाधिवाला जीव परमात्माहीं होवै है. यह अर्थ है ४८

११९१ श्येनो वेगेन नीडैकलंपटः शयितुं व्रजेत् ।
जीवः सुप्त्यै तथा धावेद् ब्रह्मानंदैकलंपटः॥ ४९

अब श्येनदृष्टांतके वर्णनपरायण "सो जैसैं आकाशविषै श्येन वा सुपर्ण (चरणायुध नामक गरुडतुल्य पराक्रमी पक्षीविशेष), पतन (व्यापार) करिके श्रांत (श्रम)कूं पाया हुया पक्षनकूं समेटिके अपनैं आलय (स्थान)के ताईं धावन करै है;

ऐसैंहीं यह पुरुष (जीव), इस (सुषुप्तिगत) आनंदअर्थ धावन करै है. जहां सोया पुरुष किसी बी काम (भोग)कूं कामना करता नहीं औ किसी बी स्वप्नकूं देखता नहीं ” इस बृहदारण्यकउपनिषदके वाक्यके अर्थकूं संक्षेपसैं कहै हैं:- (॥ श्येन इति ॥) जैसैं श्येन, शयनकरनैकूं एकहीं नीड (अपनै स्थान)विषै लंपट हुया वेगकरि जाता है; तैसैं जीव, एकहीं ब्रह्मानंदविषै लंपट हुया सुषुप्तिअर्थ धावन करता है. ४९ टीकाः- जैसैं आकाशविषै सर्वऔरतैं विचरता हुया श्येन इस नामवाला पक्षी आकाशविषै संचाररूप निमित्तकरि भये श्रमकी निवृत्तिअर्थ, शयन करनैकूं एकहीं अपनै स्थानकी अभिलाषावान् हुया तत्काल जाता है; तैसैंहीं जीव (मनउपाधिवाला चिदाभास) बी एकहीं ब्रह्मानंदकी अभिलाषावान् हुया सुषुप्तिअर्थ तत्काल हृदयाकाशरूप स्थानके ताईं जाता है. ४९

११९२ अतिबालः स्तनं पीत्वा मृदुशय्यागतो हसन्।
रागद्वेषाद्यनुत्पत्तेरानंदैकस्वभावभाक् ॥ ५० ॥

“सो जैसैं कुमार वा महाराज वा महाब्राह्मण आनंदकी सीमा (अवधि)कूं पायके शयन करता है; ऐसैंहीं यह (जीव) बी सोवता है.” इस कुमारआदिक तीनदृष्टांत दिखावनैं परायण बृहदारण्यकके बालाकिब्राह्मण नामक प्रकरणगत वाक्यकूं तीनश्लोककरि व्याख्यान करै हैं:-(॥ अतिबाल इति ॥) जैसैं अतिबालक, स्तनकूं पानकरिके मृदुशय्याविषै स्थित भया, हसता हुया रागद्वेष आदिककी अनुत्पत्तितैं आनंदरूप एक (मुख्य) स्वभाववान् होवै है. ५० टीकाः- जैसैं

स्तनकूं पान करनैहारा बालक, गलपर्यंत स्तनपान करिके कोमलताआदिक गुणयुक्त शय्याविषै शयनकूं पाया "मैं औ मेरे" इत्यादिक (विशेष)ज्ञानसैं रहित होनैकरि रागादिक रहित हुया सुखमूर्तिहीं स्थित होवै है. ५०

११९३ महाराजः सार्वभौमः संतृप्तः सर्वभोगतः ।
मानुषाऽनंदसीमानं प्राप्याऽनंदैकमूर्तिभाक् ५१

(॥ महाराज इति ॥) जैसैं सार्वभौम (सर्वभूमिका अधिपति) महाराज, सर्वभोगसैं सम्यक्तृप्त हुया मानुषआनंदकी सीमा (अवधि)कूं पायके एक आनंदकी मूर्तिकूं भजता है. ५१ टीकाः– वा, जैसैं चक्रवर्ती राजा, शुद्ध (ज्ञानयुक्त) बुद्धिकरि रहित हुया बी सर्वमनुष्यनके आनंदनकरि युक्त होनैतैं प्रार्थना करनैके योग्य (विषय)के अभावकरि रागादिक रहित हुया आनंदकी मूर्तिहीं स्थित होवै है. ५१

११९४ महाविप्रो ब्रह्मवेदी कृतकृत्यत्वलक्षणाम् ।
विद्याऽनंदस्य परमां काष्ठां प्राप्यावतिष्ठते ॥५२

(॥ महाविप्र इति ॥) जैसैं महाविप्र ब्रह्मवेदी, कृतकृत्यतारूप विद्यानंदकी परम काष्ठा (अवधि)कूं पायके स्थित होवै है. ५२ टीकाः– वा जैसैं महाविप्र (महाब्राह्मण) जो प्रत्यक्अभिन्नब्रह्मके साक्षात्कारवान् है, सो "मैं कृतकृत्य हूं" इस रूपवाली विद्यानंदकी परम (उत्कृष्ट) सीमा (जीवन्मुक्तता)-कूं प्राप्त हुया परमानंदस्वरूपहीं स्थित होवै है; तैसैं सुषुप्तिवान् पुरुष बी आनंदरूप स्थित होवै है. ५२

११९५ मुग्धबुद्धातिबुद्धानां लोके सिद्धा सुखात्मता ।
उदात्ततानामन्ये तु दुःखिनो न सुखात्मकाः ५३

ननु, यह कुमारआदिक तीनहीं पुरुष, दृष्टांतरूप किये अन्य क्यूं नहीं किये ? यह आशंकाकरि, तीनदृष्टांतनके उदाहरणका तात्पर्य कहे हैंः— (॥ मुग्धेति ॥) उदाहरण किये मुग्ध (अतिबाल) औ बुद्ध (महाराजा) औ अतिबुद्ध (ब्रह्मनिष्ठ); इन तीनकी सुखरूपता लोकविषै सिद्ध है औ अन्यपुरुष तौ दुःखी हैं, सुखरूप नहीं. ५३ टीकाः— विवेकरहित पुरुषनके मध्यमैं अतिबाल सुखी है औ विवेकी (व्यवहारादिकुशल) पुरुषनके मध्यमैं सार्वभौम (सारीपृथ्वीका राजा) सुखी है औ अति-विवेकीपुरुषनके मध्यमैं आनंदरूप आत्माके साक्षात्कारवान् पुरुषहीं सुखी है औ अन्यपुरुष तौ सर्वदा रागादिकवाले होनैतैं सुखरहित हैं; यातैं सो सुषुप्तिवान्‌विषै दृष्टांतरूप नहीं किये. यह अर्थ है. ५३

११९६ कुमारादिवदेवायं ब्रह्माऽऽनंदैकतत्परः ।
स्त्रीपरिष्वक्तवद् वेद न बाह्यं नापि चांतरम् ५४

यह (कुमारआदिक तीन) सुखवान् होहु; इसकरि प्रकृत (सुषुप्तिवान् पुरुष) विषै क्या आया ? यह आशंकाकरि, दार्ष्टीं-तिकरूप श्रुतिवाक्यके तात्पर्यकूं कहे हैंः— (॥ कुमारादीति ॥) कुमारआदिककी न्याईहीं यह (सुषुप्तिवान्), एक ब्रह्मा-नंदविषै तत्पर होवै है. टीकाः— जैसैं कुमारआदिक आनंद-कूं पावते हैं; ऐसैं यह (सुषुप्तिवान्पुरुष) बी एक ब्रह्मानंदविषै तत्पर (एकहीं ब्रह्मानंदकूं प्राप्त) होवै है. यह अर्थ है ❀ सुषु-

प्तिवान्कूं एकहीं ब्रह्मानंदविषै तत्पर होनैमैं युक्तिके दिखावनै परायण, "सो जैसैं प्रियस्त्रीके साथि आलिंगित पुरुष, किंचित् बाह्यकूं नहीं जानता है औ आंतरकूं नहीं जानता है; ऐसैंहीं यह पुरुष प्राज्ञरूप आत्मा (परमात्मा)के साथि आलिंगित हुया किंचित् बाह्यकूं नहीं जानता है औ आंतरकूं नहीं जानता है" इस बृहदारण्यकके ज्योतिर्ब्राह्मण नाम प्रकरणगत वाक्यकूं अर्थतैं क्रमकरि कहै हैंः– (॥ स्त्रीपरिष्वक्तेति ॥) स्त्रीकरि आलिंगित पुरुषकी न्याई बाह्यकूं नहीं जानता है औ आंतरकूं बी नहीं जानता है. ५४ टीकाः– जैसैं लोकविषै प्रियस्त्रीके साथि आलिंगनकूं प्राप्त भया जो कामीपुरुष,सो बाह्यभीतरकूं विषय करनैहारे ज्ञानसैं रहित होनैतैं सुखमूर्त्तिकी न्याई होवै है; तैसैं सुषुप्तिविषै प्राज्ञरूप परमात्माके साथि एकताकूं प्राप्त भया, बाह्य भीतरकूं विषय करनैहारे ज्ञानके अभावतैं आनंदरूपहीं होवै है. ५४

११९७ बाह्यं रथ्यादिकं वृत्तं गृहकृत्यं यथाऽऽतरम् ।
तथा जागरणं बाह्यं नाडीस्थः स्वप्न आंतरः ५५

इन दृष्टांत औ दार्ष्टांतिकरूप वाक्यविषै स्थित बाह्य औ आंतर शब्दके विवक्षितअर्थकूं क्रमकरि दिखावै हैंः– (॥ बाह्यमिति ॥) जैसैं (दृष्टांतविषै) रथ्या (बहुतमार्ग जहां इकठे होवैं, ऐसा स्थान वा लघुमार्ग, इस)सैं आदिलेके जो है, सो बाह्यवृत्तांत है औ गृहका कृत्य (कार्य) आंतरवृत्तांत है; तैसैं (दार्ष्टांतिकविषै) जागरण बाह्यवृत्तांत है औ नाडीनविषै स्थित स्वप्न आंतरवृत्तांत है. ५५ टीकाः– जागृत्

वासनाकरि नाडीनके मध्य प्रतीयमान सो प्रपंच, जो स्वप्न ऐसैं कहिये है. ५५

११९८ पिताऽपि सुप्तावपितेत्यादौ जीवत्ववारणात् ।
सुप्तौ ब्रह्मैव नो जीवः संसारित्वासमीक्षणात् ५६

जीव, सुषुप्तिविषै ब्रह्मानंदरूपकरिहीं स्थित होवै है; इस अर्थविषै युक्तिके दिखावनैपरायण जो, "इस (सुषुप्ति)विषै पिता अपिता होवै है" इत्यादिक श्रुति है; ताके तात्पर्यकूं कहै हैं:- (॥ पितेति ॥) "सुषुप्तिविषै पिता बी अपिता होवै है" इत्यादिक श्रुतिके स्थलमैं जीवभावके निवारणतैं औ संसारीभावकी अप्रतीतितैं सुषुप्तिविषै ब्रह्महीं है, जीव नहीं. ५६ टीकाः- इस सुषुप्तिविषै आध्यासिक (अध्यासकरि किये) पितापनैआदिक जीवके धर्मनका श्रुतिकरिहीं निवारण किया होनैतैं औ जीवपनैकी अप्रतीतिके हुये ब्रह्मभावहीं शेष रहता है. यह अर्थ है. ५६

११९९ पितृत्वाद्यभिमानो यः सुखदुःखाऽऽकरः स हि ।
तस्मिन्नपगते तीर्णः सर्वान् शोकान्भवत्ययम् ५७

ननु, सुषुप्तिविषै पितापनैआदिक अभिमानके अभाव हुये बी, सुखीपनैआदिक संसार क्यूं नहीं होवैगा? यह आशंकाकरि, संसारकूं देहाभिमानरूप मूल (कारण)वाला होनैतैं तिस (देहाभिमान)के अभाव हुये संसारका अभाव है; ऐसैं मानते हुये आचार्य, तिस (संसारके अभाव)का प्रतिपादक जो "तब (सुषुप्तिविषै) हृदय (अंतःकरण)के सर्व शोकनकूं उल्लंघन करनैहारा होवै है" यह (११९८) उक्त श्रुतिके समीपवर्त्ती पीछेका

वाक्य है; तिसकूं तात्पर्यतें व्याख्यान करै हैंः–(॥ पितृत्वादीति ॥) पितापनैआदिकका जो अभिमान है, सोई सुखःदुखका आकर (खानि) है, तिसके निवृत्त भये यह पुरुष सर्वशोकनकूं उल्लंघन करता होवै है. ५७

१२०० सुषुप्तिकाले सकले विलीने तमसाऽऽवृतः ।
सुखरूपमुपैतीति ब्रूते ह्याथर्वणी श्रुतिः ॥ ५८ ॥

ननु, उदाहरण करी जो श्रुतियां, तिनोंनैं सुषुप्तिविषै सुखकी प्राप्ति मुखतैं कथन करी है, ऐसैं नहीं देखिये है. यह आशंकाकरि, तैसैं कथनके परायण कैवल्यश्रुतिके वाक्यकूं अर्थतैं पठन करै हैंः– (॥ सुषुप्तीति ॥) "सुषुप्तिकालविषै सकल (प्रपंच)के विलीन हुये, तमकरि आवृत भया जीव सुखरूपकूं पावता है" ऐसैं अथर्वणवेदकी (कैवल्य)श्रुति कहती है. ५८

टीकाः– सुषुप्तिकालविषै सकल जागृत्आदिरूप प्रपंचके विलीन हुये; कहिये, अपनै उपादानरूप तमःप्रधान प्रकृतिविषै विलयकूं प्राप्त हुये, तम (तिस प्रकृति)करि आवृत (आच्छादित) भया जीव सुखरूप (ब्रह्म)कूं पावता है; यह तिस श्रुतिका अर्थ है. ५८

१२०१ सुखमस्वाप्समत्राहं न वै किंचिदवेदिषम् ।
इति सुप्ते सुखाज्ञाने परामृशति चोत्थितः ॥५९॥

यह (१२०० उक्त) अर्थ केवल श्रुतिप्रसिद्ध नहीं है, किंतु, सर्वजनके अनुभवकरि सिद्ध बी है; ऐसैं कहै हैंः– (॥ सुखमिति ॥) " सुषुप्तितैं ऊठ्या पुरुष इहां (इतनैकालविषै)

मैं सुख जैसैं होवै तैसैं सोया था औ कछू बी नहीं जानता भया" ऐसैं सुख औ अज्ञानकूं स्मरण करता है. ५९ टीकाः— सुषुप्तितैं ऊठ्या जो पुरुष, सो "इतनैकालपर्यंत मैं सुख जैसैं होवै तैसैं सोया था औ कछू बी नहीं जानता भया" इसरीतिसैं निद्राकालके सुख औ अज्ञानकूं स्मरण करता है; यातैं बी सुषुप्तिविषै सुख है, ऐसैं जानिये है. ५९

१२०२ परामर्शोऽनुभूतेऽस्तीत्यासीदनुभवस्तदा ।
चिदात्मत्वात्स्वतोभातिसुखमज्ञानधीस्ततः ६०

ननु, स्मरणज्ञानकूं अप्रमाणरूप होनैतैं तिसके बलतैं सुषुप्तिविषै सुखकी सिद्धि कैसैं होवै है ? यह आशंकाकरि, तिस (स्मृतिज्ञान)कूं अप्रमाणरूपता हुये बी, तिसके मूलभूत अनुभवके बलतैं सुखकी सिद्धि होवै है; इस अभिप्रायकरि कहै हैं:— (॥ परामर्श इति ॥) स्मृतिज्ञान, अनुभूतविषै होवै है, यातैं तब अनुभव था. टीकाः— स्मरणरूप ज्ञान अनुभव किये विषयविषैहीं होवै है, नहीं अनुभव किये विषयविषै नहीं; इस हेतुतैं तब (सुषुप्तिविषै) सुख औ अज्ञानका अनुभव था, ऐसैं कहिये है ❀ ननु, सुषुप्तिविषै मनसहित ज्ञानके करण (साधन)कूं विलीन होनैतैं कैसैं अनुभवकी सिद्धि होवै है ? यह आशंकाकरि, क्या सुखके अनुभवका साधन नहीं है, ऐसैं तेरेकरि कहिये है, वा अज्ञानके अनुभवका साधन नहीं है, ऐसैं कहिये है ? ये दो विकल्प हैं. तिनमैं प्रथमपक्ष बनै नहीं. काहेतैं, सुखकूं स्वप्रकाश चेतनरूप होनैकरि करण (साधन)की अपेक्षारहित होनैतैं. औ द्वितीयपक्ष बी बनै नहीं. काहेतैं, स्वप्रकाशरूप सुखके बलतैंहीं तिसके आ-

वरण करनैहारे अज्ञानकी प्रतीतिकी सिद्धितैं, इस अभिप्रायकरि कहै हैंः– (॥ चिदात्मेति ॥) चिदात्मा (स्वप्रकाश)रूप होनेतें सुख स्वरूपतैं भासता है औ तिस (स्वप्रकाशरूप सुख)तैं अज्ञानकी प्रतीति होवै है. ६०

१२०३ ब्रह्म विज्ञानमानंदमिति वाजसनेयिनः ।
पठंत्यतः स्वप्रकाशं सुखं ब्रह्मैव नेतरत् ॥ ६१ ॥

ननु, सुषुप्तिकालके सुखकूं स्वप्रकाश सुखरूपताके हुये बी, "ब्रह्मानंद आप होवै है" इस (११८७ वें) श्लोकविषै कथन करी जो ब्रह्मरूपता, सो नहीं संभवै है; प्रमाणके अभावतें. यह आशंकाकरि, "विज्ञान आनंद ब्रह्म है" इत्यादि बृहदारण्यकके वाक्यके सद्भावतैं सुखकूं ब्रह्मरूपता नहीं है, यह कथन बनै नहीं; ऐसैं कहै हैंः– (॥ ब्रह्म विज्ञानमिति ॥) "विज्ञान (चेतन) आनंदरूप ब्रह्म है" ऐसैं वाजसनेयीशाखावाले पठन करै हैं; यातैं स्वप्रकाशरूप सुख ब्रह्महीं है और नहीं. ६१

१२०४ यदज्ञानं तत्र लीनौ तौ विज्ञानमनोमयौ ।
तयोर्हि विलयावस्था निद्राऽज्ञानं च सैव हि ६२

ननु, अनुभव औ स्मरण, इन दोनूंज्ञानकूं एक अधिकरण (आश्रय)वान् होनैके नियमतें, "मैं सुखसैं सोया था औ कछू बी नहीं जानता था" ऐसैं सुषुप्तिकालके सुख औ अज्ञानकूं विज्ञानमय शब्दके वाच्य जीवकरि स्मरण किया होनैतें, तिसी (विज्ञानमय शब्दके वाच्य जीव)कूंहीं सुख औ अज्ञानका अनु-

भवकर्त्तापना कहनैकूं योग्य है. यह आशंकाकरि, तिस (जीव)-के उपाधिरूप अज्ञानके कार्य विज्ञान (अंतःकरण)कूं अज्ञान-विषै विलीन होनैतैं अंतःकरणउपाधिवाले जीवकूं सुख औ अज्ञानका अनुभवकर्त्तापना बनै नहीं; इस अभिप्रायकरि कहै हैंः– (॥ यदज्ञानमिति ॥) जो अज्ञान है, तिसविषै सो वि-ज्ञानमय औ मनोमय दोनूं विलीन हैं. टीकाः– “मैं कछू बी नहीं जानता था” इस स्मरणके अन्यथा (सुषुप्तिविषै अनुभव किये अज्ञानरूप विषयसैं विना) असंभवरूप अर्थाप-त्तिप्रमाणकरि जो अज्ञान जानिये है, तिस (अज्ञान)विषै सो (प्रमाता औ प्रमाणरूप होनैकरि प्रसिद्ध विज्ञानमय औ मनो-मयकोश) विलीन होवै हैं; कहिये, विज्ञानमय औ मनोमय-रूप आकारकूं परित्यागकरिके, कारण (अज्ञान)रूपकरि स्थित होवै हैं; यातैं तिस (अंतःकरणरूप) उपाधिवाले चेतनकूं अनु-भवकर्त्तापना नहीं है. यह भाव है ❋ तिसविषै कारण कहै हैंः– (॥ तयोरिति ॥) जातैं तिनकी विलयअवस्था निद्रा है. टीकाः– जिस कारणतैं तिन (विज्ञानमय औ मनोमय)की विलयअवस्था निद्रा ऐसैं कहिये है “विज्ञान (अंतःकरण)की विरति (विलय) सुषुप्ति है” ऐसैं शास्त्रविषै कथन किया हो-नैतैं ❋ तब निद्राविषैही विलीन होवै है; ऐसैं कह्या चाहिये. यह आशंकाकरि कहै हैंः– (॥ अज्ञानमिति ॥) सोइ (निद्रा) अज्ञान है. ६२ टीकाः– सोइ निद्रा विद्वानोंकरि अज्ञान ऐसैं व्यवहार करिये है. यह अर्थ है. ६२

१२०५ विलीनघृतवत् पश्चात् स्याद् विज्ञानमयो घनः ।
विलीनावस्थ आनंदमयशब्देन कथ्यते ॥ ६३ ॥

ननु, तब सुषुप्तिगत सुख औ अज्ञानके अनुभवकालविषै, असत् (अविद्यमान) विज्ञानमयकूं प्रबोध (जागृत्काल)विषै कैसें तिन (सुख औ अज्ञान)का स्मरणकर्त्तापना है? यह आशंकाकरि, विलयअवस्थाविषै बी तिस (आत्मा)के स्वरूपनाशके अभावतें विलयअवस्थारूप उपाधिवाले आनंदमयरूपकरि अनुभवकर्त्तापना औ विज्ञान शब्दके वाच्य घनीभावरूप उपाधिवाला होनैकरि स्मरणकर्त्तापना एक (आत्मा)कूं घटता है; इस अभिप्रायकरि कहै हैं:– (॥ विलीनेति ॥) विलीन (प्रगलित)घृतकी न्याई जो पीछे (जागृत्आदिकविषै) विज्ञानमय घन होवै है, सोई पूर्व विलीनअवस्थावाला हुया आनंदमय शब्दकरि कहिये है. ६३ टीका:– जैसें अग्निके संयोगआदिककरि विलीन (प्रगलित भया) जो घृत, सो पीछे वायुआदिकके संबंधतें घनी (जम गया) होवै है; ऐसें जागृत्आदिकनविषै जो भोगप्रद कर्म है, तिसके क्षयके वशतें निद्रारूपकरि विलीन भया जो अंतःकरण, सो फेर भोगप्रद कर्मके वशतें जागृत्विषै विज्ञान (अंतःकरण) आकारकरि घनी (स्थूलभावकरि स्पष्ट) होवै है; यातें तिस (अंतःकरण)-रूप उपाधिवाला आत्मा बी विज्ञानमय घन होवै है; सोइ आत्मा पूर्व (सुषुप्तिविषै) विलयअवस्थारूप उपाधिवाला हुया, आनंदमय ऐसें कहिये है. ६३

१२०६ सुप्तिपूर्वक्षणे बुद्धिवृत्तिर्या सुखबिंबिता ।
सैव तद्बिंबसहिता लीनाऽऽनंदमयस्ततः ॥६४॥

" विलीनअवस्थावाला हुया आनंदमय कहिये है " इस (१२०५) उक्त अर्थकूंहीं स्पष्ट करै हैं:– (॥ सुप्तीति ॥) सुषु-

प्तितैं पूर्वक्षणविषै जो बुद्धिवृत्ति सुखके प्रतिबिंबकरि युक्त होवै है, तिसके पीछे तिस (सुख)के प्रतिबिंबकरि सहित, सोई (वृत्ति) लीन हुई आनंदमय कहिये है. ६४ टीकाः– सुषुप्तितैं पूर्वके अंतरायरहित, क्षणविषै जो अंतर्मुख-बुद्धिवृत्ति स्वरूपभूत सुखके प्रतिबिंबकरि युक्त होवै है; पीछे सुखके प्रतिबिंबसहित सोई वृत्ति निद्रारूपकरि विलीन हुई आनंदमय ऐसैं कहिये है. ६४

१२०७ अंतर्मुखो य आनंदमयो ब्रह्मसुखं तदा ।
भुंक्ते चिद्बिंबयुक्ताभिरज्ञानोत्पन्नवृत्तिभिः ॥६५॥

ऐसैं आनंदमयके स्वरूपकूं दिखायके, तिसी (आनंदमय)-केहीं प्रबोधकालविषै विज्ञानमयरूपकरि स्मरणकर्त्तापनैकी सिद्धिअर्थ, तब (सुषुप्तिविषै) सुखके अनुभवकूं कहै हैंः– (॥ अंतर्मुख इति ॥) अंतर्मुख जो आनंदमय है, सो तब चेतनके प्रतिबिंबकरि युक्त अज्ञानतैं उत्पन्न भई वृत्तिनकरि ब्रह्मसुखकूं भोगता है. ६५ टीकाः– सुखके प्रतिबिंबसहित अंतर्मुखबुद्धिवृत्तितैं जनित संस्कारसहित अज्ञानरूप उपाधिवाला जो आनंदमय है, सो तब (सुषुप्तिविषै) ब्रह्मसुख (स्वरूपभूत सुख)कूं चिदाभाससहित औ अज्ञानतैं उत्पन्न सुखादिककूं विषय करनैहारी सत्वगुणके परिणाम विशेषरूप वृत्तिनकरि भोगता (अनुभव करता) है. ६५

१२०८ अज्ञानवृत्तयः सूक्ष्मा विस्पष्टा बुद्धिवृत्तयः ।
इति वेदांतसिद्धांतपारगाः प्रवदंति हि ॥ ६६ ॥

ननु, तब जागरणकी न्याई सुषुप्तिविषै "मैं सुखकूं अनुभव करूं हूं" ऐसा अभिमान काहेतें नहीं होवै है? यह आशंका-करि, अविद्याकी वृत्तिनकूं बुद्धिवृत्तिनकी न्याई स्पष्ट होनैके अभावतें ऐसा अभिमान नहीं होवै है; इस अभिप्रायकरि कहै हैंः– (॥ अज्ञानवृत्तय इति ॥) अज्ञानकी वृत्तियां सूक्ष्म (अस्पष्ट) हैं औ बुद्धिकी वृत्तियां स्पष्ट हैं ॐ यह काहेतें जान्या है? तहां कहै हैं. (॥ इतीति ॥) ऐसैं वेदांतसिद्धांतके पारकूं प्राप्त भये पुरुष कहते हैं. ६६

१२०९ मांडूक्यतापनीयादिश्रुतिष्वेतदतिस्फुटम् ।
आनंदमयभोक्तृत्वं ब्रह्मानंदे च भोग्यता ॥६७

ननु, "आनंदमय जो है, सो ब्रह्मानंदकूं सूक्ष्म अविद्याकी वृत्तिनकरि भोगता है" इस (१२०७ उक्त) अर्थविषै कौन प्रमाण है? तहां कहै हैंः– (॥ मांडूक्येति ॥) मांडूक्य औ तापनीय-आदिक श्रुति (उपनिषदन)विषै यह अतिशय स्पष्ट है ॐ यह शब्दके अर्थकूंहीं कहै हैंः– (॥ आनंदेति ॥) आनंदमय-यकूं भोक्तापना है औ ब्रह्मानंदविषै भोग्यता (भोगनैकी योग्यता) है. ६७

१२१० एकीभूतः सुषुप्तस्थः प्रज्ञानघनतां गतः ।
आनंदमय आनंदभुक् चेतोमयवृत्तिभिः ॥ ६८

अब "सुषुप्तिरूप स्थानविषै एकीभूत (एकरूपताकूं प्राप्त हुया) प्रज्ञानघनहीं आनंदमय औ आनंदभुक् औ चेतोमुख है" इस मांडूक्यआदिक श्रुतिगत वाक्यकूं अर्थतें पठन करै

हैं:- (॥ एकीभूत इति ॥) एकरूपताकूं प्राप्त औ सुषुप्तिविषे स्थित औ प्रज्ञानघनरूपताकूं प्राप्त भया जो (आत्मा) है, सो आनंदमय औ चेतोमय (चिदाभाससहित) वृत्तिनकरि आनंदभुक् है. ६८ टीकाः- सुप्त जो सुषुप्ति, तिसविषे जो स्थित होवै है. सो सुषुप्तस्थ (सुषुप्तिका अभिमानी) है. यह अर्थ है. औ आनंदमय; कहिये, आनंदरूप है औ स्वरूपभूत आनंदकूं जो भोगता है, सो आनंदभुक् कहिये है औ चेतोमयवृत्तिनकरि; कहिये, चेत जो चैतन्य, तिसकरि युक्त (चेतनके प्रतिबिंबसहित ऐसी) जो वृत्तियां, सो चेतोमय वृत्तियां कहिये हैं; तिनवृत्तिनकरि आनंदभुक् है. यह योजना है. ६८

१२११ विज्ञानमयमुख्यैर्यो रूपैर्युक्तः पुराऽधुना ।
स लयेनैकतां प्राप्तो बँहुतंडुलपिष्टवत् ॥ ६९ ॥

तिस (१२१०उक्त) श्रुतिवाक्यगत "एकीभूत" इस पदके अर्थकूं कहै हैं)- (॥ विज्ञानेति ॥) जो (आत्मा), पूर्व विज्ञानमयआदिक रूप (आकारन) करि युक्त था, सोइ अब लयकरि एकताकूं प्राप्त होवै है. टीकाः- जो आत्मा पूर्व (जागरणअवस्थाविषे), "सो यह आत्मा ब्रह्म है, विज्ञानमय है, मनोमय है, प्राणमय है, चक्षुमय है, श्रोत्रमय है, पृथिवीमय है, आपोमय (जलरूप) है, वायुमय है, आकाशमय है, तेजोमय है, अतेजोमय है, काममय है, अकाममय है, क्रोधमय है, अक्रोधमय है" इत्यादि श्रुतिविषे उक्त विज्ञानमयआदिकरूप (आका-

१ जैसैं एकहीं पुरुष पाचन (रसोई) औ पाठनआदिक क्रियाके भेदकरि, पाचक (रसोईका कर्त्ता) औ पाठकआदिक कहिये है; तैसैं एकहीं ब्रह्मात्मा

रके भेदन)करि युक्त था. सोई (आत्मा) अब (सुषुप्तिविषै) लय (बुद्धि अरु मन आदिक उपाधिनके विलय)करि एकता (एकआकारता)कूं प्राप्त होवै है ❀ तहां दृष्टांत कहै हैं:– (॥ बह्विहिति ॥) बहुत तंडुल (चावल)तैं जनित पिष्ट (आटे)की न्याई (यह अर्थ है). ६९

१२१२ प्रज्ञानानि पुरा बुद्धिवृत्तयोऽथ घनोऽभवत् ।
घँनत्वं हिमबिंदूनामुदग्देशे यथा तथा ॥ ७० ॥

अब प्रज्ञानघन शब्दके अर्थकूं कहै हैं:– (॥ प्रज्ञानानीति ॥) पूर्व प्रज्ञानरूप जो बुद्धिवृत्तियां हैं, सो पीछे घनरूप होवै हैं. टीका:–पूर्व (जागृत्आदिकविषै) प्रज्ञान शब्दके वाच्य औ घटादि गोचर जो बुद्धिवृत्तियां होती भई, सो पीछे (सुषुप्ति-कालविषै) घटादिक विषयके अभाव हुये घन होवै हैं; कहिये, चेतनरूपकरि एकरूप होवै हैं ❀ तहां दृष्टांत कहै हैं:–(॥ घन-त्वमिति ॥) जैसें जलयुक्त देशविषै हिमबिंदु (बादलसैं पतित जलके कंकरन)की घनरूपता (एकरूपता) होवै है, तैसें. ७०

१२१३ तद् घनत्वंसाक्षिभावंदुःखाभावं प्रचक्षते । लौकि-
कास्तार्किका यावद् दुःखवृत्तिविलोपनात्॥७१॥

अब प्रज्ञानघन शब्दके अर्थके निरूपणके प्रसंगतैं प्राप्त कछुक (अर्थ)कूं कहै हैं:– (॥ तद् घनत्वमिति ॥) तिस (साक्षिभा-

विज्ञानमयआदिक भिन्नभिन्न उपाधिनके साथि तादात्म्यअध्यासकरि तिस तिसरूप-(आकार)वाला कहिये है. यह अर्थ है.

वरूप) घनरूपताकूं लौकिकजन औ तार्किक (शास्त्रीजन) दुःखका अभाव कहते हैं. टीकाः- जो यह वेदांतनविषे साक्षीभावकरि कथन किया प्रज्ञानघनपना है, तिसीकूंहीं लौकिक (शास्त्रसंस्काररहित) जन औ तार्किक (वैशेषिकआदिक शास्त्री), दुःखका अभाव कहते हैं ❀ ऐसें काहेतें कहते हैं? तहां कहै हैं (॥ यावदिति ॥) सुषुप्तिविषे, जितनी दुःखवृत्तियां हैं तिन सर्वके विलयतें (यह अर्थ है). ७१

१२१४ अज्ञानबिंबिता चित् स्यान् मुखमानंदभोजने।
भुंक्तं ब्रह्मसुखं त्यक्त्वा बहिर्यात्यथ कर्मणा ७२

पूर्व (१२१०विषे) उदाहरण किये श्रुतिवाक्यगत चेतोमुख शब्दके अर्थकूं कहै हैं:- (॥ अज्ञानेति ॥) आनंदके भोजनविषे अज्ञानमैं प्रतिबिंबित चेतन मुख होवै है. टीकाः- आनंदके भोजन (सुषुप्तिगत ब्रह्मानंदके आस्वादन)-विषे अज्ञानकी वृत्तिमैं प्रतिबिंबित (प्रतिबिंबकूं पाया) चैतन्यहीं मुख (साधन) होवै है ❀ ननु, सुषुप्तिविषे आनंदमयरूप जीवकरि जब ब्रह्मसुख भोगिये है, तब तिस (ब्रह्मसुख)कूं परित्यागकरिके पीछे बाहिर दुःखके आलय (गृह) जागरणके प्रति काहेतें गमन करता है? तहां कहै हैं:- (॥ भुक्तमिति ॥) पीछे कर्मकरि भोगे हुये ब्रह्मसुखकूं त्यागकरिके बाहिर जाता है. ७२ टीकाः- पुण्यपापरूप पाशकरि बद्ध होनैतें तिस (कर्मपाश)करि प्रेर्या हुया जीव साक्षात् किये ब्रह्मा-

नंदकूं बी परित्यागकरिके पीछे बाहिर जाता (जागरणादिककूं पावता) है. यंह अर्थ है. ७२

१२१५ कर्म जन्मांतरेऽभूद् यत् तद्योगाद् बुद्ध्यते पुनः।
इति कैवल्यशाखायां कर्मजो बोध ईरितः ॥७३॥

कर्मसैं जागरणआदिक होवै है, यह काहेतैं जानिये है ? यह आशंकाकरि, "औ फेर जन्मांतरके कर्मके योगतैं सोई (सुषुप्तिकूं प्राप्त) जीव स्वप्न वा जागरणकूं पावता है" इस कैवल्यश्रुतिके वाक्यतैं जानिये है, ऐसैं मानते हुये आचार्य, तिस (कैवल्यश्रुति)के वाक्यकूं अर्थतैं पठन करते हुये तिसके अभिप्रायकूं कहै हैंः– (॥ कर्मेति ॥) "जो जन्मांतरविषै कर्म होता भया तिसके योगतैं फेर बोध (जागरण)कूं पावता

---

१ जैसैं गृहविषै स्थित माताके गोदमैंसैं उठा बालक, बाहीर जायके अन्यबालकनके साथि रमण (खेल) करता है; जब अन्यबालक उपराम (खेलसैं निवृत्त) होवैं, तब आप श्रमकूं जानता हुया लौटिके माताके गोदमैं बैठिके ग्रहके सुखकूं अनुभव करिके श्रमकूं गमावता है; फेर जब अन्यबालक बुलावैं तब बाहीर जाता है; तैसैं सुषुप्तिरूप गृहविषै स्थित अज्ञान (कारणशरीर)रूप माताके विक्षेपशक्तिअंशसैं रूप गोदमैंसैं उठा जो चिदाभासयुक्त अंतःकरणरूप बालक, सो जाग्रत् वा स्वप्नरूप बाहीरके प्रदेशविषै जायके, क्रियाके निमित्त प्रारब्धकर्मरूप अन्य बालकनके साथि व्यवहाररूप रमणकूं करता है. जब जाग्रत् स्वप्नके भोगप्रद कर्मकी उपरति होवै, तब जाग्रत् स्वप्नके व्यापारसैं जन्य विक्षेपरूप श्रमकूं जानता हुया अज्ञानरूप माताके गोदमैं स्थित (विलीन) होयके सुषुप्तिरूप गृहके संबंधी स्वरूपभूत ब्रह्मानंदकूं अनुभव करिके, जाग्रत्स्वप्नके व्यापारसैं जन्य श्रमकूं गमावता है; फेर जब भोगप्रद कर्मरूप अन्यबालक बुलावैं (प्रेरणा करैं) तब जाग्रत् स्वप्नरूप बाहीरके प्रदेशकूं जाता है.

है;" ऐसैं कैवल्यशाखाविषै कर्मसैं जन्य बोध (जागरण) कह्या है. ७३

१२१६ कंचित् कालं प्रबुद्धस्य ब्रह्माऽऽनंदस्य वासना।
अनुगच्छेद्यँतस्तूष्णीमास्ते निर्विषयःसुखी ७४

सुषुप्तिविषै ब्रह्मानंदका अनुभव होवै है, इसविषै लिंग (कारण)कूं कहै हैं:– (॥ कंचिदिति ॥) प्रबुद्ध (जागृत भये पुरुष)कूं कछुककालपर्यंत ब्रह्मानंदकी वासना अनुगत (पीछे वर्तमान) होवै है. टीका:– जागरणकूं प्राप्त भये पुरुषकूं बी स्वल्पकालपर्यंत सुषुप्तिविषै अनुभूत ब्रह्मानंदकी वासना (संस्कार,) पीछे वर्तमान होवै है ⊛ वासना, पीछे वर्तमान है, यह काहेतैं जानिये है? तहां कहै हैं:– (॥ यत इति ॥) जातैं निर्विषय पुरुष बी सुखी हुया तूष्णी होवै है. ७४ टीका:– जिस कारणतैं जागृत्की आदिविषै निर्विषय (विषयके अनुभवसैं रहित) पुरुष बी सुखी हुया तूष्णी (उदासीन) होवै है; यातैं जानिये है. यह अर्थ है. ७४

१२१७ कर्मभिः प्रेरितः पश्चान् नानादुःखानि भावयन्।
शनैर्विस्मरति ब्रह्मानंदमेषोऽखिलो जनः॥७५॥

तब पीछे (सर्वदा) तूष्णी (उदासीन) काहेतैं नहीं होवै है? तहां कहै हैं.– (॥ कर्मभिरिति ॥) कर्मनकरि प्रेरित भया यह सर्वजन पीछे नानाप्रकारके दुःखनकूं भावना (अनुसंधान) करता हुया कछुक कालसैं ब्रह्मानंदकूं विस्मरण करता है. ७५ टीका:– पूर्व (१२१५ विषै) उक्त कर्मनकरि

प्रेरणाकूं पाया हुया सर्वप्राणी बी पीछे बहुतप्रकारके दुःखनकूं अनुसंधान (स्मरण) करता हुया कछुककालसैं अनुभव किये ब्रह्मानंदकूं विस्मरण करता है. ७५

१२१८ प्रागूर्ध्वमपि निद्रायाः पक्षपातो दिने दिने ।
ब्रह्मानंदे नृणां तेन प्राज्ञोऽस्मिन् विवदेत कः ७६

इस (कहनेके कारण) तैं बी सुषुप्तिमैं ब्रह्मानंद है, इसविषै विवाद करनेकूं योग्य नहीं है; ऐसैं कहै हैंः– (॥ प्रागिति ॥) दिनदिनविषै मनुष्यनकूं निद्रातैं पूर्व औ पीछे बी ब्रह्मानंदविषै पक्षपात (स्नेह) है; तिस (हेतु) करि इसविषै कौन प्राज्ञ (पंडित) विवाद करैगा ? ७६ टीकाः– प्रतिदिन मनुष्यनकूं निद्रातैं पूर्व (निद्राके आरंभविषै) औ पीछे (निद्राके अंतविषै) ब्रह्मानंदमैं स्नेह है, जातैं निद्राकी आदिविषै कोमलशय्याआदिककूं संपादन करते हैं औ निद्राके अंतविषै तिस (निद्राके सुख) कूं परित्याग करनेकूं असक्त हुये तूष्णी (मौन) स्थित होवै हैं, तिस कारणकरि इस आनंदविषै कौन बुद्धिमान् विवाद करैगा ? कोइ बी नहीं. यह अर्थ है. ७६

२ तूष्णीस्थितिमैं ब्रह्मानंदके भानसैं गुरुसेवादि साधनकी अव्यर्थता औ वासनानंद विषयानंद कहिके आनंदकी त्रिविधता. १२१९–१२३०

१२१९ ननु तूर्ष्णींस्थितौ ब्रह्मानंदश्चेद् भाति लौकिकाः ।
अलसाश्चरितार्थाःस्युःशास्त्रेणगुरुणात्रकिम् ७७

वादी मूलविषै पूर्वपक्ष करै हैः– (॥ नन्विति ॥) ननु, जब तूष्णीस्थितिविषै ब्रह्मानंद भासता है, तब लौकिक औ आलसी जन कृतार्थ होवैंगे; यातैं इहां शास्त्रसैं औ गुरुसैं क्या (प्रयोजन) है. ७७ टीकाः– गुरुकी शुश्रूषा (सेवा) आदिककरि प्राप्त होनैयोग्य जो ब्रह्मानंदका अनुभव है, तिसकी तूष्णीस्थितिमात्रकरि प्राप्त होनैकी योग्यताके हुये गुरुसेवा आदिपूर्वक श्रवणादिक साधन वृथा होवैगा. यह अर्थ है. ७७

१२२० बाढं ब्रह्मेति विद्युश्चेत् कृतार्थास्तावतैव ते।
गुरुशास्त्रे विनाऽत्यंतगंभीरं ब्रह्म वेत्ति कः॥ ७८

यह ब्रह्मानंद है, ऐसें जाने हुये कृतार्थता (कृतकृत्यता) होवैही है; परंतु सोई (यह ब्रह्मानंद है, ऐसें जानना) गुरुसेवा आदिकसैं विना संभवै नहीं; ऐसें सिद्धांती कहै हैः– (॥ बाढमिति ॥) ब्रह्म (यह ब्रह्मानंद) है, ऐसें जब जानै तब तितनैकरिहीं सो (लौकिकजन) कृतार्थ होवैं, यह (तेरा कथन) सत्य है; परंतु अत्यंतगंभीर ब्रह्मकूं गुरुशास्त्र विना कौन जानैगा ! ७८ टीकाः– अत्यंतगंभीर (मन वाणीका अविषय)

---

१ जैसैं सामान्यतैं अन्यपाषाणकी न्याई अनुभूत चिंतामणितैं वांछितअर्थकी प्राप्ति होवै नहीं; किंतु जब "यह चिंतामणि है," ऐसैं विशेषकरि जानै, तब वांछितअर्थकी प्राप्ति होवै है. तैसैं सुषुप्तिविषै सामान्यतैं विषयसुखकी न्याई अनुभूत ब्रह्मानंदतैं सर्वकर्त्तव्यरूप अनर्थकी निवृत्तिरूप पुरुषार्थकी प्राप्ति होवै नहीं. काहेतैं, अनर्थके कारण अज्ञानके विद्यमान होनैतैं- किंतु जब "यह सुषुप्तिनिष्ठ आनंद नित्य निरतिशय मेरा निजरूप ब्रह्म है; ऐसैं विशेषकरि जब जानै, तब अज्ञानकी निवृत्तिद्वारा कर्त्तव्यरूप अनर्थकी निवृत्तिरूप पुरुषार्थकी प्राप्ति होवै है. यह भाव है.

सर्वज्ञ सर्वांतर सर्वात्मरूप ब्रह्मकूं गुरुशास्त्रके ताईं छोडिके अन्य किसी बी उपायकरि कौन पुरुष जानैगा? कोई बी नहीं. यह अर्थ है. ७८

१२२१ जानाम्यहं त्वदुक्त्याऽद्य कुतो मे न कृतार्थता ।
शृण्वत्र त्वादृशो वृत्तं प्राज्ञंमन्यस्य कस्यचित् ७९

ननु, हे सिद्धांती, तुमारे वाक्यतैंहीं ब्रह्मानंदकूं जाननैहारे मुजकूं कृतार्थता नहीं देखिये है. यह आशंकाकरि, सिद्धांती इस आशंकाके अनुवादपूर्वक उपहाससहित उत्तर कहै हैं:– (॥ जानामीति ॥) (हे सिद्धांती,) मैं तुमारे कथनतैं (यह ब्रह्मानंद है, ऐसैं) अब जानता हूं, तौ बी मेरेकूं कृतार्थता काहेतैं नहीं होवै है ! ऐसैं जब कहै; तब (हे वादी), इहां तेरे जैसै पंडितमन्य (अपंडित, आपकूं पंडित माननैहारे) किसीएक पुरुषके वृत्तांत (वार्ता)कूं श्रवण कर. ७९

१२२२ चतुर्वेदविदे देयमिति शृण्वन्नवोचत ।
वेदाश्चत्वार इत्येवं वेद्मि मे दीयतां धनम् ॥८०॥

तिसीहीं वृत्तांतकूं दिखावै हैं:– (॥ चतुर्वेदेति ॥) "च्यारीवेदके जाननैहारेके ताईं यह धन देनैयोग्य है;" यह वचन सुनिके कोइनैं कह्याः– जो वेदच्यारी हैं, ऐसैं मैं जानता हूं, मेरेकूं धन देहु. ८० टीकाः– कोइक धनीपुरुषनैं च्यारीवेदके जाननैहारे कोई बी पुरुषकूं यह बहुतधन देनैयोग्य है, इसप्रकारका वाक्य कह्या; ताकूं कोइक पुरुष सुनिके वेद च्यारी हैं, यह तुमारे वाक्यतैंहीं मैं जानता हूं; यातैं

मेरेकूं धन देहु; ऐसैं कहता है, ताकी न्याई तूं (वादी) बी है. यह अर्थ है. ८०

१२२३ संख्यामेवैष जानाति न तु वेदानशेषतः।
यदि तर्हि त्वमप्येवं नाशेषं ब्रह्म वेत्सि हि॥८१॥

ननु, वेद च्यारी हैं, ऐसैं जो पुरुष जानता है, सो वेदगत संख्याकूं जानता है, वेदनके स्वरूपकूं जानता नहीं; इसरीतिसैं वादी पूर्वपक्ष करै हैः– (॥ संख्यामिति ॥) यह(१२२२ उक्त पुरुष) वेदकी संख्याकूंहीं जानता है, संपूर्णकरि वेदनकूं नहीं जानता है, ऐसैं जब कहै; ❀ सिद्धांती, समता करि समाधान करै हैः– (॥ तर्हीति ॥) तब ऐसैं तूं बी संपूर्णब्रह्मकूं नहीं जानता है. ८१ टीकाः– ऐसैं (अपनैकूं च्यारी-वेदका अभिज्ञ माननैहारे पुरुषकी न्याई), हे वादी, तूं बी अशेष (संपूर्ण जैसैं होवै तैसैं) ब्रह्मकूं नहीं जानता है. ८१

१२२४ अखंडैकरसाऽऽनंदे मायातत्कार्यवर्जिते।
अशेषत्वसशेषत्ववार्ताऽवसर एव कः ॥ ८२ ॥

ननु, जैसैं संख्यातैं भिन्न वेदके स्वरूपका भेद है, तैसैं स्वगत आदिक भेदरहित आनंदरूप ब्रह्मविषै अज्ञायमान (अज्ञात)-अंश (अवयव)के अभावतैं असंपूर्णज्ञानीपनैका उपालंभ (दूषण) जो तुमनै मेरेप्रति दिया, सो नहीं घटता है; इसरीतिसैं वादी पूर्वपक्ष करै हैः– (॥ अखंडैकेति ॥) माया औ ताके कार्यसैं वर्जित अखंड एकरस आनंदविषै असंपूर्णपनै औ संपूर्णपनैकी वार्ताका अवसरही कौन है ! (कोइ बी नहीं.) ८२

१२२५ शब्दानेव पठस्याहो तेषामर्थं च पश्यसि ।
शब्दपाठेऽर्थबोधस्ते संपाद्यत्वेन शिष्यते ॥८३॥

ब्रह्मके ज्ञानविषै बी असंपूर्णपनैआदिकके दिखावनैकूं "मैं ब्रह्मकूं जानता हूं" ऐसें कहनैवाले वादीके प्रति सिद्धांती विकल्पकरिके पूछते हैं:- (॥ शब्दानिति ॥) (हे वादी,) तूं शब्दनकूंहीं पठन करता है, अथवा तिन (शब्दन)के अर्थकूं बी देखता है ? टीका:- हे वादी, तूं अखंड एकरस अद्वितीय सच्चिदानंदरूप इत्यादिक शब्दनकूंहीं पठन करता है अथवा तिन शब्दनके अर्थ (स्वगतादि भेदरहितपनैआदिकरूप)कूं बी देखता (जानता) है ? यह विकल्पका अर्थ है ॥ प्रथमपक्षविषै ब्रह्मज्ञानकी अवशेष सहितता (असंपूर्णता)कूं दिखावै हैं:- (॥ शब्दपाठ इति ॥) शब्दपाठके हुये, तेरेकूं अर्थका बोध संपादन करनैकूं योग्य होनैकरि शेष रहता है. ८३

१२२६ अर्थे व्याकरणाद् बुद्धे साक्षात्कारोऽवशिष्यते ।
स्यात्कृतार्थत्वधीर्यावत्तावद्गुरुमुपास्वभो ८४

द्वितीयपक्षविषै बी तिस (असंपूर्णता)कूं दिखावै हैं:- (॥ अर्थेति ॥) व्याकरणतैं अर्थके जाने हुये, साक्षात्कार अवशेष रहता है. टीका:- मूलविषै जो व्याकरणतैं, यह पद है सो वेदआदिकका बी उपलक्षण है. यातैं व्याकरणआदिक शास्त्रकरि परोक्षज्ञानके संपादन किये हुये बी संशयआदिकके निरासकरि अपरोक्ष करना अवशेष रहता है ॥ तब ज्ञानकी संपूर्णता कब होवै है ? यह आशंकाकरि, तिस (ज्ञान)की

अवधिकूं दिखावै हैंः- (॥ स्यादिति ॥) जहांलगि कृतार्थपनैकी बुद्धि होवै, तहांलगि भो (हे वादी), गुरुकूं उपासन (सेवन) कर. ८४ टीकाः- जब मैं कृतार्थ (कर्तव्य औ प्राप्तव्यके अभाववाला) हूं, ऐसी कृतार्थपनैकी बुद्धि उत्पन्न होवै, तब ज्ञानकी संपूर्णता जाननैकूं योग्य है. यह अर्थ है. ८४

१२२७ आस्तामेतद् यत्र यत्र सुखं स्याद् विषयैर्विना ।
तत्र सर्वत्र विद्ध्येतां ब्रह्मानंदस्य वासनाम् ॥८५

ऐसैं (१२१९-१२२६ पर्यंत) प्रसंगसैं प्राप्त अर्थकूं समाप्त करिके, प्रकृत (१२१६ उक्त वासनानंद)कूंहीं अनुसरै हैंः- (॥ आस्तामिति ॥) यह (प्रसंगप्राप्तअर्थ) रहो औ जहां जहां विषय नसैं विना सुख होवै है, तहां सर्वत्र इस ब्रह्मानंदकी वासनाकूं जान. ८५ टीकाः- जहां जहां (जिस जिस तूष्णीभावआदिक कालविषै) विषयके अनुभवसैं विना सुख होवै है, तहां तहां सुखकूं विषयजन्य होनैके अभावतैं औ सामान्य (सूक्ष्म) अहंकारकरि आवृत होनैतैं, वासनानंदपना जाननैकूं योग्य है. यह अर्थ है. ८५

१२२८ विषयेष्वपि लब्धेषु तदिच्छोपरमे सति ।
अंतर्मुखमनोवृत्तावानंदः प्रतिबिंबति ॥ ८६ ॥

ऐसैं ब्रह्मानंद औ वासनानंदकूं दिखायके,अब आनंदकी त्रिविधताके नियम करनैअर्थ "आत्माके सन्मुख भई बुद्धिवृत्तिविषै स्वरूपभूत आनंद प्रतिबिंबकूं पावता है" इस (११८६)विषै उक्त विषयानंदकूंहीं फेर अनुवाद करै हैंः-(॥ विषयेष्वपीति ॥)

विषयनके प्राप्त हुये बी तिनकी इच्छाके उपरम (निवृत्ति)-के हुये अंतर्मुख भई जो मनकी वृत्ति, तिसविषै आनंद प्रतिबिंबकूं पावता है. ८६ टीकाः–जब मालाआदिक विषयनके लाभतैं तिस तिस (विषय)की इच्छाकी निवृत्ति होवै है, तब तब मनके अंतर्मुख हुये तिस (मन)विषै जो आत्मस्वरूपका आनंद प्रतिबिंबकूं प्राप्त होवै है, यह विषयानंद है. यह अर्थ है. ८६

१२२९ ब्रह्माऽऽनंदो वासना च प्रतिबिंब इति त्रयम् ।
अंतरेण जगत्यस्मिन्नानंदो नास्ति कश्चन ॥८७

फलितकूं कहै हैंः– (॥ब्रह्मानंद इति॥) ब्रह्मानंद, वासना (वासनानंद), औ प्रतिबिंब (विषयानंद); इन तीनआनंदनसैं विना इस जगत्विषै कोइ बी आनंद नहीं है. ८७ टीकाः– (११७५–१२१८) उक्त प्रकारसैं स्वप्रकाशपनैंकरि सुषुप्तिविषै भासमान जो ब्रह्मानंद है औ जो (१२२७ उक्त) तूष्णीस्थितिविषै विषयके अनुभवसैं विना प्रतीयमान वासनानंद

---

१ जब वांछितविषयकी प्राप्ति होवै, तब इच्छारूप चंचल राजसीवृत्तिकी निवृत्ति होवै है औ प्राप्तविषयके ज्ञानरूप सात्विकवृत्तिसैं विषयउपहितचेतनके स्वरूपभूत आनंदका भान होवै हैं. यह वृत्ति विषयरूप निमित्तसैं भई है; यातैं सो वृत्ति विषयानंद कहिये है. अथवा वांछितविषयके ज्ञानकरि इच्छारूप वृत्तिकी निवृत्ति होवै है, तिस (इच्छाकी निवृत्ति)रूप निमित्तसैंही अन्य अंतर्मुखवृत्ति उत्पन्न होवै है; तिसकरि अंतःकरणउपहितआनंदका भान होवै है. यह अंतर्मुखवृत्ति वा तिस वृत्तिविषै जो स्वरूप आनंदका प्रतिबिंब होवै है, सो विषयानंद कहिये है; ताहीकूं प्रतिबिंबानंद औ लेशानंद बी कहै हैं. इसकरि ब्रह्मासैं लेके चीटीपर्यंत सर्वजीव निर्वाह करै हैं.

है औ जो (१२२८ उक्त) वांछित विषयके लाभतैं अंतर्मुख भये मनविषै प्रतिबिंबकूं पाया जो विषयानंद है, इन तीनआनंदनसैं भिन्न इस जगत्‌विषै कोइ बी आनंद नहीं है ❁ ननु, "ब्रह्मानंद विद्यानंद औ विषयानंद, इस भेदकरि आनंद तीनप्रकारका है" इस (११५३उक्त) प्रकारकरि आनंदकी त्रिविधता पूर्व कही है, औ अब तौ "ब्रह्मानंद, वासना (वासनानंद), औ प्रतिबिंब (विषयानंद); इन तीनतैं भिन्न इस जगत्‌विषै कोइ बी आनंद नहीं है" ऐसैं (इस १२२९ विषै) तिसतैं विलक्षणआनंदकी त्रिविधता कहिये है, यातैं पूर्वउत्तरका विरोध है. किंवा "अभ्यासके योगतैं जितना जितना अहंकार विस्मरण होवै है, तितना तितना सूक्ष्मदृष्टिवाले पुरुषकूं निजानंद अनुमित (अनुमितिका विषय) होवै है" इस (१२४०)विषै औ "तैसा पुरुष उदासीनकालविषै बी आनंदकी वासनाकूं उपेक्षाकरिके तत्पर हुया मुख्यआनंदकूंहीं भावना करता है" इस (१२६३)विषै पूर्व (११५३ औ १२२९ विषै) उक्त(त्रिविधतारूप) दोनूंप्रकारनसैं भिन्न निजानंद औ मुख्यानंद कहिये हैं. तैसैं ब्रह्मानंदग्रंथके आत्मानंद नामक द्वितीयअध्यायविषै "मंदबुद्धिवाले जिज्ञासूंकूं तौ आत्मानंदकरि बोध करना" इस (१२८०वैं) श्लोकमैं आत्मानंद तिनतैं अन्य कहिये है औ "जो पूर्वउक्त योगानंद है" इस (१३६७)विषै योगानंद बी कोइक प्रतीत होवै है औ "ब्रह्मानंद नामक ग्रंथविषै तृतीयअध्याय जो कह्या, सो अद्वैतानंदहीं है" इस (१४७१)-विषै अद्वैतानंदकूं अन्य जानिये है. यातैं "इन तीनतैं भिन्न इस जगत्‌विषै कोइ बी आनंद नहीं है" यह (१२२९ विषै किया) कथन विरोधकूं पावता है; इसरीतिसैं जो कहे (शंका

करै ;) तौ बनै नहीं. काहेतें विद्यानंदकूं विषयानंदकी न्यांई अंतःकरणके वृत्तिका भेद होनैंकरि औ "विषयानंदकी न्यांई विद्यानंद बुद्धिकी वृत्तिरूप है" ऐसैं आगे (१४७३विषै)विद्यानंदकी बुद्धिवृत्तिरूपताके कथनकरि तिसका विषयानंदविषै अंतर्भाव कहनैकूं इच्छित होनैतें, विषयानंदतें भिन्न विद्यानंद नहीं है. औ निजानंद, मुख्यानंद, आत्मानंद, योगानंद औ अद्वैतानंदकूं तौ ब्रह्मानंदतें अभिन्न होनैतें (१२२९ विषै किया) हमारा कथन विरोधकूं पावता नहीं; तैसैंहीं दिखावै हैः—"जितना जितना अहंकार विस्मरण होवै" इस उदाहरण किये (१२४० वें)श्लोकविषै योगरूप उपायसैं गम्य होनैतें योगानंदपनैकरि कहनैकूं इच्छित जो निजानंद है, तिसीकेहीं "जहां द्वैत नहीं भासता है औ निद्रा बी नहीं है, तहां जो सुख है सो ब्रह्मानंद है; ऐसैं भगवान् (श्रीकृष्ण) अर्जुनकेप्रति कहते भये" इस (१२४२ वें) आगेके श्लोकविषैहीं ब्रह्मानंदपनैके कथनतें निजानंद ब्रह्मानंदतें भिन्न नहीं है. तैसैं मुख्यानंद बी ब्रह्मानंदहीं है. काहेतें "तैसैं हुये विषयानंद औ वासनानंद इन दोनूंआनंदनकूं उत्पन्न करता हुया ब्रह्मानंद, स्वयंप्रकाशरूप स्थित है" इस (१२३०)विषै जन्य होनैकरि अमुख्यरूप जो विषयानंद औ वासनानंद हैं, तिनका जनक होनैंकरि कथन किये ब्रह्मानंदकेहीं "तैसा पुरुष उदासीनकालविषै बी" इस उदाहरण किये (१२६३ वें) श्लोकविषै आनंदकी वासनाकूं उपेक्षाकरिके तत्पर हुया मुख्यआनंदकूंहीं भावना करता है. ऐसैं मुख्यआनंदपनैके कथनतें औ आत्मानंद अरु अद्वैतानंदका जो ब्रह्मानंदपना है, सो तौ "जो पूर्वउक्त योगानंद है, सोई आत्मानंद अंगीकार करना" इस ब्रह्मानंद ग्रंथके तृतीयअध्यायकी आदि

(१३६७ रूप प्रथमश्लोक)विषै प्रथम (योगानंद नामक) अध्यायविषै योगानंदपनैकरि कहनेकूं इच्छित ब्रह्मानंदकेहीं योगानंद शब्दकरि अनुवादपूर्वक आत्मानंदपनैकूं कहिके, द्वैतसहित इस (आत्मानंद)कूं ब्रह्मपना कैसैं होवैगा? ऐसैं जो कहै, " इसरीतिसैं (१३६८ विषैहीं) प्रश्नपूर्वक "आकाशसैं आदिलेके शरीरपर्यंत " इस (१३६८) आदिक (श्लोकन)-करि अद्वितीय (आत्मानंद)के ब्रह्मपनैके प्रतिपादनतैं (आत्मानंद अरु अद्वैतानंदका ब्रह्मानंदपना) जानना. तातैं "ब्रह्मानंद, वासनानंद, औ विषयानंद; इन तीनतैं भिन्न इस जगत्‌विषै कोइ बी आनंद नहीं है" यह (१२२९ विषै) कथन किया आनंदका त्रिविधपना स्थित (निर्णीत) है ॥ ननु, तब "ननु, ऐसैं वासनानंदतैं औ ब्रह्मानंदतैं बी इतर (भिन्न) निजानंदकूं योगी जानहु; इहां मूढकी कौन गति है?" इस (१२७७) विषै निजानंदका ब्रह्मानंद औ वासनानंदसैं भेदकरि कथन किया है, सो नहीं घटता है; ऐसैं शंका करनैकूं योग्य नहीं है. काहेतैं, एकहीं ब्रह्मानंदके जगत्‌के कारणपनैरूप उपाधिसहित-पनै औ रहितपनैकरि भेदकथनके संभवतैं, तैसैंहीं दिखावै हैंः— ब्रह्मानंदके निरूपणके अवसरमैं "आनंदतैंहीं यह भूत उत्पन्न होवै हैं" इत्यादि वाक्यकरि जगत्‌की कारणताके कथनतैं ब्रह्मानंदका मायासहितपना जानिये है, काहेतैं, मायारहितकूं जगत्‌की कारणताके असंभवतैं औ निजानंदके निरूपणकालविषै बी "जितना जितना अहंकार विस्मरण होवै है" इस (१२४०) आदिक वाक्यकरि कारणसहित अहंकारके विलयके प्रतिपादनतैं, निजानंदकूं मायारहितपना है, ऐसैं सर्व (कथन) निर्दोष है. ८७

१२३० तथा च विषयानंदो वासनानंद इत्यमू ।
आनंदौ जनयन्नास्ते ब्रह्माऽनंदः स्वयंप्रभः ८८

ननु, इस अध्याय (प्रकरण)विषै ब्रह्मानंदके विवेचनकूंही कहनैकूं इच्छित होनैतैं, अन्य (वासनानंद औ विषयानंद इन) दोनूंआनंदनका प्रतिपादन प्रकृतसैं असंगत (अमिलित) है. यह आशंकाकरि, तिन (दोनूंआनंदन)कूं ब्रह्मानंदसैं जन्य होनैंकरि तिस (ब्रह्मानंद)के बोधमैं उपयोगी होनैतैं तिनका प्रतिपादन प्रकृतसैं असंगत नहीं है; इस अभिप्रायकरि कहै हैंः— (॥तथेति॥) तैसैं हुये जो स्वयंप्रकाश (आनंद), विषयानंद औ वासनानंद; इन दोनूंआनंदनकूं जनता हुया विद्यमान है, सो ब्रह्मानंद है. ८८ टीकाः— तैसैं (इसप्रकार आनंदकी त्रिविधताके) हुये, जो स्वयंप्रकाशरूप आनंद, विषयानंद औ वासनानंदकूं उत्पन्न करता है, सो ब्रह्मानंद जाननैकूं योग्य है. यह अर्थ है. ८८

३ वासनानंद औ निजानंदके कथनपूर्वक क्षणिकसमाधिके संभवतैं ब्रह्मानंदके निश्चयका संभव १२३१-१२७६

१ जाग्रत्विषै वासनानंदकी सिद्धिपूर्वक अभ्यासतैं प्रतीत निजानंदका कथन. १२३१-१२६०

---

१ जैसैं अग्निसैं जन्य धूमका ज्ञान अग्निके ज्ञानविषै उपयोगी है औ जलसैं जन्य शीतलताका ज्ञान जलके ज्ञानविषै उपयोगी है; तैसैं ब्रह्मानंदसैं वृत्तिरूप उपाधिद्वारा जन्य विषयानंद औ वासनानंदका ज्ञान ब्रह्मानंदके ज्ञानविषै उपयोगी है. यातैं इनका निरूपण प्रसंगसैं अमिलित नहीं है.

१२३१ श्रुतियुक्त्यनुभूतिभ्यः स्वप्रकाशचिदात्मके।
ब्रह्मानंदे सुप्तिकाले सिद्धे सत्यन्यदा शृणु ॥८९॥

वृत्त (कथनकिये अर्थ)के फेरी कथनपूर्वक उत्तरग्रंथकूं प्रगट करै हैंः- (॥ श्रुतीति ॥) श्रुति, युक्ति औ अनुभूतितैं सुषुप्तिकालविषै स्वप्रकाश चिदात्मरूप ब्रह्मानंदके सिद्ध हुये, अन्यकालविषै श्रवण कर. ८९ टीकाः- " सुषुप्तिकालविषै सकल (प्रपंच)के विलीन हुये, तमकरि आवृत हुया सुखरूपकूं पावता है " (यह १२०० उक्त श्रुति है.) इत्यादिक उदाहरण करी श्रुतिनकरि औ " मैं सुखसैं सोया था " इत्यादिक स्मरणके अन्यथा असंभवआदिक युक्तिनकरि औ अनुभूति (अर्थापत्तिप्रमाणसैं कल्पित सुषुप्तिके अनुभव)करि सुषुप्तिकालविषै स्वप्रकाश ब्रह्मानंद साधित (सिद्ध) भया. अब इस (१२३१)सैं पीछे अन्यकाल (जागरणअवस्था)विषै बी जो ब्रह्मानंदके जाननैका उपाय कहियेगा, तिसकूं श्रवण कर. यह अर्थ है.८९

१२३२ य आनंदमयः सुप्तौ स विज्ञानमयाऽऽत्मताम्।
गत्वा स्वप्नं प्रबोधं वा प्राप्नोति स्थानभेदतः ९०

प्रतिज्ञा किये ब्रह्मानंदके जाननैके उपायकूंहीं दिखावनैकूं तिसके उपोद्घातपनैकरि निमित्तसहित जीवकूं दोनूंअवस्था (जागृत् स्वप्न)की प्राप्तिकूं दिखावै हैंः- (॥ य इति ॥) सुषुप्तिविषै जो आनंदमय है, सो विज्ञानमयरूपताकूं पायके स्थानके भेदतैं स्वप्नकूं वा प्रबोध (जागृत्)कूं पावता है.९० टीकाः-सुषुप्तिकालविषै "विलीनअवस्थावाला आनंदमय शब्दकरि कहिये है" इस (१२०५) विषै उक्त जो आनंदमय है, सो

विज्ञानमय शब्दकी वाच्य बुद्धिउपाधिवाला होनैकरि विज्ञानमयपनैकूं पायके स्थानके भेदतैं (वक्ष्यमाण स्थानविशेषके योगकरि) स्वप्न वा जागरणकूं कर्मअनुसारकरि पावता है. ९०

१२३३ नेत्रे जागरणं कंठे स्वप्नः सुप्तिर्हृदंबुजे ।
आँपादमस्तकं देहं व्याप्य जागर्ति चेतनः ॥९१॥

अब जागृत्आदिक अवस्थाके उपयोगी स्थानकूं दिखावै हैंः– (॥ नेत्र इति ॥) नेत्र (स्थान) विषै जागरण होवै है औ कंठ (स्थान) विषै स्वप्न होवै है औ हृदयकमल (स्थान) विषै सुषुप्ति होवै है ❀ नेत्र शब्दकी संपूर्णदेहके उपलक्षणताकूं अभिप्राय करिके, नेत्रविषै जागरण होवै है, इस अंश (पद) के अर्थकूं कहे हैंः– (॥ आपादेति ॥) पादसैं लेके मस्तकपर्यंत देहकूं व्यापिके चेतन (जीव) जागता है. ९१

१२३४ देहतादात्म्यमापन्नस्तप्तायःपिंडवत् ततः ।
अहं मनुष्य इत्येवं निश्चित्यैवावतिष्ठते ॥९२॥

"देहकूं व्यापिके चेतन जागता है" इस पदकरि कहनैकूं इच्छितअर्थकूं दृष्टांतके दिखावनैकरि स्पष्ट करे हैंः– (॥ देहतादात्म्यमिति ॥) तप्तलोहके पिंडकी न्याई देहसैं तादात्म्यकूं प्राप्त भया है ❀ देहसैं तादात्म्यकूं पाया है, तिसविषै प्रमाण कहे हैंः– (॥ तत इति ॥) तातैं "मैं मनुष्य हूं," ऐसैं निश्चयकरिकेही स्थित होवै है. ९२ टीकाः– जातैं मनुष्यपनैआदिक जातिवाले देहके साथि तादात्म्य (अभेदअध्यास) कूं प्राप्त भया

है, तातैं मैं मनुष्य हूं, इसप्रकार निश्चयकरिके (संशयादिरहित ज्ञानकरि ग्रहण करिके)हीं जीव स्थित होवै है. ९२

१२३५ उदासीनः सुखी दुःखीत्यवस्थात्रयमेत्यसौ ।
सुखदुःखे कर्मकार्ये त्वौदासीन्यं स्वभावतः ९३

देहसैं तादात्म्यअभिमानरूप हेतुवाली अन्यअवस्थाकूं दिखावै हैंः—(॥ उदासीन इति ॥) "मैं उदासीन हूं, सुखी हूं, दुःखी हूं;" इन तीनअवस्थाकूं यह (जीव) पावता है ❀ तिन (तीनअवस्था)विषै सुखीपनै औ दुःखीपनैरूप दोनूंअवस्थाके कर्मजन्यपनैके ज्ञानअर्थ विशेषरूप सुखदुःखके तिस (कर्म)रूप हेतुवान्‌पनैकूं दिखावै हैंः— (॥ सुखेति ॥) सुख औ दुःख ये दोनूं कर्म (पुण्यपाप)के कार्य हैं औ उदासीनपना तौ स्वभावतैं होवै है. ९३

१२३६ बाह्यभोगान् मनोराज्यात् सुखदुःखे द्विधा मते ।
सुखदुःखांतरालेषु भवेत् तूष्णीमवस्थितिः ९४

तिन सुख औ दुःखके निमित्तके भेदतैं दो भांतिपनैकूं कहै हैंः—(॥ बाह्येति ॥) बाह्यभोगतैं औ मनोराज्यतैं सुख औ दुःख दो दो प्रकारके माने हैं ❀ तब उदासीनपना कब होवै है ? तहां कहै हैंः—(॥ सुखेति ॥) सुख औ दुःखके अंतराल (संधिन)विषै तूष्णीस्थिति (उदासीनता) होवै है. ९४ टीकाः—

१ सुषुप्तितैं उत्थानकालविषै सुख अरु दुःखका अभाव है; यातैं सो उदासीनदशा है. ऐसैं जाग्रत्‌विषै जहां जहां सुख अरु दुःख दोनूंका अभाव है, सो सो काल उदासीनदशा कहिये है. जहां सुख है, तहां राग होवै है औ जहां दुःख है, तहां

सुखदुःखके अंतराल शब्दका जो बहुवचन है, सो व्यक्ति (आकार)के भेदके कहनैकी इच्छाकरि है. ९४

१२३७ न काऽपि चिंता मेऽस्त्यद्य सुखमास इति ब्रुवन्।
औदासीन्ये निजानंदभावं वक्त्यखिलो जनः९५

जिस (प्रयोजन)अर्थ जागृत्आदिकके कहनेका आरंभ किया, तिस (प्रयोजन)कूं अब दिखावै हैः– (॥न काऽपीति॥) "अब मेरेकूं कोइ बी चिंता नहीं है; यातैं मैं सुखसैं स्थित हूं" ऐसैं कहता हुया सर्वजन उदासीनपनैविषै निजानंदके भाव (सद्भाव)कूं कहता है. ९५ टीकाः– सर्वजन बी "अब मेरेकूं कोइ बी (गृहादिककूं विषय करनैहारी) चिंता नहीं है; यातैं मैं सुख जैसैं होवै तैसैं स्थित हूं," ऐसैं कहता हुया उदासीनपनैके कालविषै स्वरूप आनंदकी स्फूर्ति (भान)कूं कहता है. यातैं जागरणअवस्थाविषै बी निजानंदका भान है; ऐसैं जाननैकूं योग्य है. यह अभिप्राय है. ९५

१२३८ अहमस्मीत्यहंकारसामान्याऽऽच्छाहितत्वतः।
निजानंदो न मुख्योऽयं किंत्वसौ तस्यवासना९६

ननु, उदासीनदशाविषै भासमान सुखकूं निजानंदरूप हुये, तिस (निजानंद)कूं ब्रह्मानंदरूप होनैतैं, पूर्व (१२२७) उक्त वासनानंदरूपता नहीं होवैगी. यह आशंकाकरि, उदासीनदशाविषै भासमान सुखकूं अहंकारके सामान्य (सूक्ष्मभाव)करि

द्वेष होवै है. यातैं सुखदुःखरूप निमित्तसैं जन्य रागद्वेषके अभावकालकूं उदासीनता औ तूष्णीस्थिति बी कहै हैं.

आवृत होनैतैं ब्रह्मानंदरूपता नहीं है; ऐसैं परिहार करै हैंः- (॥अहमस्मीति॥) "मैं हूं" इस अहंकारके समान (सूक्ष्म)-पनैकरि आच्छादित होनैतैं यह मुख्यनिजानंद नहीं है. टीकाः- "मैं देवदत्त हूं" इत्यादिक विशेषसैं रहित औ "मैं हूं" इस रूपवाले अहंकारके सामान्य (समानपनै)करि आवृत होनैतैं, यह (उदासीनकालमैं प्रतीयमान) मुख्यनिजानंद नहीं है. यह अर्थ है ॥ तब तिस (उदासीनदशामैं प्रतीयमान सुख)कूं कौनरूपकरि युक्तता है? तहां कहै हैंः- (॥ किं त्वसाविति ॥) किंतु, यह तिस (निजानंद)की वासना है.९६

१२३१ नीरपूरितभांडस्य बाह्ये शैत्यं न तज्जलम् ।
किं तु नीरगुणस्तेन नीरसत्ताऽनुमीयते ॥ ९७॥

मुख्यआनंदतैं भिन्न वासनानंदके सद्भावविषै दृष्टांत कहै हैंः- (॥ नीरेति ॥) जलपूरित घटके बाहिर जो शीतलता है, सो जल नहीं है. टीकाः- जलकरि पूर्ण कुंभके बाहिरभागके स्पर्शकरि प्रतीयमान जो शीतलता है, सो प्रथम जल नहीं होवै है, द्रवता (चूर्णके पिंडबांधनैकी हेतुता)की अप्रतीतितैं ॥ तब सो (शीतलपना) क्या है? तहां कहै हैंः- (॥ किं त्विति ॥) किंतु, सो जलका गुण है ॥ शीतलता जलका गुण है, यह कैसैं जानिये है? तहां कहै हैंः- (॥ तेनेति ॥) तिस (शीतलतारूप हेतु)करि जलकी सत्ता (घटविषै सद्भाव) अनुमानसैं जानिये है. ९७ टीकाः- विवादका विषय जो घटविषै प्रतीयमान शीतलपना, सो जलसैं जन्य होनैकूं योग्य है, शी-

तलपनैके होनैतैं; जलविषै प्रतीयमान शीतलपनैकी न्याई. यह अनुमान है. ९७

१२४० यावद् यावदहंकारो विस्मृतोऽभ्यासयोगतः ।
तावत् तावत् सूक्ष्मदृष्टेर्निजानंदोऽनुमीयते॥९८॥

ऐसैं शीतलताकूं जलके अनुमानकी हेतुता होहु, तिसकरि प्रकृत (वासनानंद)विषै क्या आया? यह आशंकाकरि, तिस (शीतलता)की न्याई वासनानंदकूं बी मुख्यआनंदके अनुमानकी हेतुता प्राप्त भई; ऐसैं कहै हैः– (॥ यावदिति ॥) **अभ्यासके योगतैं जितना जितना अहंकारका विस्मरण होवै, तितना तितना सूक्ष्मदृष्टिवाले पुरुषकूं निजानंदका अनुमान होवै है. ९८** टीकाः– अभ्यासके योगतैं; कहिये, "ज्ञानकूं महत्आत्माविषै लय करै औ तिस (महत्आत्मा)कूं शांतआत्माविषै लय करै" इस श्रुतिकरि[1] कथनकिये निरोधसमाधिके अभ्यासके योगकरि जितनी जितनी अहंआदिक वृत्तिनके विलयके वशतैं चित्तकी सूक्ष्मता होवै है, तितनी तितनी निजानंदकी अभिव्यक्ति (आविर्भाव) होवै है; ऐसैं अनुमान करिये है. इहां यह अनुमान हैः– अहंकारके संकोचकी विलक्षणताकरि युक्त क्षणनविषै द्वितीयआदिक क्षणरूप जो पक्ष है, सो पूर्वके

१ इस श्रुतिका यह अर्थ हैः– प्राज्ञ (पंडितपुरुष) जो है सो वाक्इंद्रियकरि उपलक्षित सर्वइंद्रियनकूं तिस तिस विषयसहित मनविषै विलय करै औ प्रपंचके कारण तिस मनकूं बी ज्ञानआत्मा ("अहं" इस रूपवाली बुद्धि)विषै लय करै औ तिस ज्ञान (अहंरूप बुद्धि)कूं महत्आत्मा (महत्तत्त्व)विषै लय करै औ तिस महत्तत्त्वकूं अव्याकृतविषै लय करै औ तिस अव्याकृतकूं शांतआत्मा (सर्व प्रपंचके उपशमवाले निर्विशेषपरब्रह्म)विषै लय करै. इति.

क्षणतैं अधिक निजानंदके आविर्भाववाला है, अहंकारके संकोचकी विलक्षणताकरि युक्तकालरूप होनैतैं; अहंकारके संकोचकरियुक्त प्रथमक्षणकी न्याई. ९८

१२४१ सर्वात्मना विस्मृतः सन् सूक्ष्मतां परमां व्रजेत् ।
अलीनत्वान् न निद्रैषा ततो देहोपि नो पतेत्९९

बुद्धिके सूक्ष्मताका कौन अवधि है ? इस आकांक्षाविषै, (सर्व अनात्माकारवृत्तिनके निरोध हुये, ब्रह्माकार भये अंतःकरणविषै अहंप्रत्ययरूप) साक्षात्कार अवधि है; ऐसैं कहै हैं:- (॥ सर्वेति ॥) सर्वओरतैं विस्मरण भया (अहंकार,) परमसूक्ष्मताकूं पावता है ❁ तब सो (अहंकारकी सूक्ष्मता) निद्राहीं होवैगी. तहां कहै हैं:- (॥ अलीनेति ॥) अलीन होनैतैं यह निद्रा नहीं है. टीकाः- सर्ववृत्तिनके विलय हुये बी अंतःकरणके स्वरूपके विलयके अभावतैं, यह (अहंकारकी सूक्ष्मता) निद्रा नहीं है. काहेतैं, "बुद्धिका कारण (अज्ञान)रूपसैं अवस्थान, सुषुप्ति कहिये है" ऐसैं आचार्योंनैं कथन किया होनैतैं. यह अर्थ है ❁ उक्तअवस्थाविषै अंतःकरणके स्वरूपके विलयका अभाव है, तिसविषै लिंग (हेतु) कहै हैं:- (॥ तत इति ॥) तातैं देह बी पडता नहीं. ९९ टीकाः- जहां सुषुप्तिआदिकविषै अहंकारका विलय होवै है, तहां देहका पात (भूमिविषै पतन) देख्या है. औ इहां तौ तिस (पतन)के अभावतैं अहंकार विलीन भया नहीं (किंतु, मूलअंतःकरणरूपकरि स्थित है) ऐसैं जानिये है. ९९

१२४२ न द्वैतं भासते नापि निद्रा तत्रास्ति यत् सुखम्।
स ब्रह्मानंद इत्याह भगवानर्जुनं प्रति ॥ १०० ॥

फलितकूं कहै हैंः– (॥ न द्वैतमिति ॥) जहां द्वैत नहीं भासता है औ निद्रा बी नहीं है, तहां जो सुख है, सो ब्रह्मानंद है. टीकाः– जिस कालविषै द्वैत (त्रिपुटी)का भान नहीं है औ निद्रा बी नहीं आवती है, तिस कालविषै प्रतीयमान जो सुख है, सो ब्रह्मानंद है. यह अर्थ है ❀ ननु, यह ब्रह्मानंद है, ऐसैं तुमनैं काहेतैं जान्या है? यह आशंकाकरि, श्रीकृष्णके वाक्यतैं जान्या है; ऐसैं कहै हैंः– (॥ इतीति ॥) ऐसैं (गीताके षष्ठअध्यायविषै) भगवान् अर्जुनके प्रति कहते भये. १००

१२४३ शनैः शनैरुपरमेद् बुद्ध्या धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थंमनःकृत्वानकिंचिदपि चिंतयेत् १०१

तहां किन श्लोकनकरि भगवान् कहते भये? यह आशंकाकरि, तिन (गीताके षष्ठअध्यायगत) श्लोकनकूं अर्थके क्रमअनुसारकरि पठन करै हैंः– (॥ शनैरिति ॥) धैर्यसैं ग्रहण करी बुद्धिकरि धीरेसैं धीरेसैं उपरामकूं पावै. टीकाः– साधनरूप धैर्ययुक्त बुद्धिकरि कछुककालसैं उपरामकूं पावै (मनकी उपरतिकूं करै)❀ कितने कालपर्यंत मनकी उपरतिकूं करै (साधै)? तहां कहै हैंः– (॥ आत्मेति ॥) मनकूं आत्माविषै स्थित करिके कछू बी चिंतन करै नहीं. १०१ टीकाः– आत्माविषै भई है संस्था ("आत्माहीं यह सर्व है, तिसतैं अन्य कछू नहीं है" इस आकारवाली सम्यक्स्थिति) जिसकी ऐसा जो मन, सो आत्मसंस्थ

(आत्माविषै स्थित) कहिये है. तिस प्रकारका मनकूं करिके किंचित् बी (अनात्मवस्तुकूं) चिंतन करै नहीं. यह योगका परमअवधि है. १०१

१२४४ यतो यतो निश्चरति मनश्चंचलमस्थिरम् ।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥१०२

इस (योगकी परमअवधि)के संपादनविषै प्रवर्त्त भया जो योगी, सो प्रथम क्या (साधन) करै? तहां कहै हैं:- (॥ यत इति ॥) चंचल औ अस्थिर जो मन है, सो जिस जिस निमित्ततैं गमन करता है, तिस तिस (निमित्त)तैं रोधिके इस (मन)कूं आत्माविषैहीं वश करै. १०२ टीका:- स्वभावके दोषतैं चंचल औ याहीतैं अस्थिर (एक विषयविषै नियमरहित) इसप्रकारका जो मन है, सो जब जब जिसी जिसी शब्दादिरूप निमित्ततैं बाहिर जाता है, तब तब तिस तिस शब्दादिकतैं नियमनकरिके; कहिये, तिन शब्दादिकनके मिथ्यापनैआदिक दोषके देखनैकरि आभासरूपकरिके वैराग्यकी भावनापूर्वक निरोधकरिके इस मनकूं आत्माविषैहीं वश करै; कहिये आत्माविषै वश (स्वाधीन) होनैकी योग्यताकूं संपादन करै. ऐसैं योगकूं अभ्यास करनैंहारे पुरुषका मन, अभ्यासके बलतैं आत्माविषैहीं अतिशय शांतिकूं पावता है. १०२

१२४५ प्रशांतमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ।
उपैति शांतरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥ १०३ ॥

मनकी शांतिके हुये क्या (फल) होवै है? तहां कहै हैं:- (॥ प्रशांतेति ॥) शांत भया है रज जिसका औ शांत भया

है मन जिसका औ ब्रह्मभूत औ अकल्मष (निर्मल) इस योगीकूं उत्तमसुख प्राप्त होवै है. १०३ टीकाः– शांत (क्षीण) भया है मोहआदिक क्लेशरूप रज (मल) जिसका औ याहीतें अतिशयकरि शांत (विक्षेपरहित) भया है मन जिसका औ ब्रह्मभूत ("ब्रह्महीं यह सर्व है," इस निश्चयवाला होनैकरि जीवन्मुक्त) औ अकल्मष (अधर्मआदिकसैं वर्जित) ऐसा जो यह योगी है, तिसकूं उत्तम (क्षय औ अतिशयसहितपनैं आदिक दोषसैंरहित) सुख प्राप्त होवै है. १०३

१२४६ यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया। यत्र-
चैवाऽऽत्मनाऽऽत्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति१०४

संक्षेपसैं कथन किये अर्थके विस्तारपरायण, तिसी (षष्ठअध्याय)के श्लोकनकूंहीं पठन करै हैं:– (॥ यत्रेति ॥) चित्त, जहां योगकी सेवाकरि निरोधकूं पाया हुया उपरतिकूं पावै औ जहां आत्मा (अंतःकरण)करि आत्मा (चैतन्य)कूं देखता हुया आत्माविषैहीं तुष्टिकूं पावता है. १०४ टीकाः– चित्त जो है, सो जिसकालविषै योगकी सेवा (अनुष्ठान)करि सर्वविषयनतैं निवारण किया हुया उपरामकूं पावता है. किंवा, जिस कालविषै आत्मा (समाधिसैं शुद्ध भये अंतःकरण)करि आत्मा (परमचैतन्य ज्योतिःस्वरूप)कूं देखता (अनुभव करता) हुया आत्मा (आप)विषैहीं संतोषकूं भजता (पावता) है, विषयनविषै नहीं. यह अर्थ है. १०४

१२४७ सुखमात्यंतिकं यत् तद् बुद्धिग्राह्यमतींद्रियम्।
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः॥ १०५

(॥ सुखमिति ॥) औ जहां आत्माविषै स्थित भया योगी, आत्यंतिक (अनंत) औ बुद्धिग्राह्य औ अतींद्रिय जो सुख है, तिसकूं जानता है औ जहां आत्माविषै स्थित भया यह योगी, तत्त्वतैं चलता नहीं. १०५ टीकाः– किंवा, जिसकालमैं आत्माविषै स्थित भया यह योगी, आत्यंतिक (अत्यंतहीं होवै ऐसैं अनंत) औ बुद्धिग्राह्य (इंद्रियकी अपेक्षारहित बुद्धिकरि ग्रहण किया) औ अतींद्रिय (इंद्रियके विषयतैं भिन्न); कहिये, विषयसैं अजनित, ऐसा जो सुख है; तिसकूं जानता (अनुभव करता) है. किंवा, आत्माविषै स्थित भया यह योगी, तत्त्वतैं (तिस आत्मस्वरूपतैं) चलता (पतन होता) नहीं. १०५

१२४८ यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।
यस्मिन्स्थितोनदुःखेनगुरुणापिविचाल्यते१०६

(॥ यमिति ॥) औ जिस (आत्मा)कूं पायके अन्यलाभकूं तिसतैं अधिक नहीं मानता है औ जिसविषै स्थित भया पुरुष, महत्‌दुःखसैं बी चलायमान होता नहीं. १०६ टीकाः– किंवा, जिस आत्माकूं पायके अन्यलाभकूं तिस (आत्मलाभ)तैं अधिक नहीं मानता है. काहेतैं, " आत्माके लाभतैं अन्य (उत्कृष्ट लाभ) नहीं है" इस स्मृतितैं. किंवा, जिस आत्मतत्त्वविषै स्थित भया पुरुष, शस्त्रके अभिघात (प्रहार) आदिकरूप महान्‌दुःखसैं बी प्रल्हादकी न्याईं चलायमान होता नहीं. १०६

१८ जैसैं हिरण्यकशिपु नामक दैत्यपतिका पुत्र प्रल्हाद, पिताసैं अनेकदुःखनकूं प्राप्त हुय। बी अपनी निष्ठातैं चलायमान भया नहीं; ऐसैं आत्मतत्त्वविषै स्थिति

१२४९ तं विद्याद् दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा १०७

अब (१२४३सैं) उपपादन किये योगकूं सूचन करै हैंः- (॥ तं विद्यादिति ॥) तिस (उक्त योग)कूं दुःखके संयोगके वियोगरूप योगसंज्ञित (योग नामवाला) जानना. टीकाः- "धीरेसैं धीरेसैं" इन (१२४३ वें श्लोक)सैं आदिलेके जितनै विशेषणनकरि विशिष्ट (युक्त) आत्माकी अवस्थाविशेषरूप जो योग कह्या, तिसकूं दुःखसंयोगवियोग (दुःखनसैं जो संयोग तिससैं वियोगरूप) विपरीतलक्षणासैं योगसंज्ञित जानना ❀ इसप्रकारके योगके अनुष्ठानविषै किंचित् कर्तव्यपनैके भेदकूं कहै हैंः- (॥ स निश्चयेनेति ॥) सो योग निश्चयकरि निर्वेदरहित चित्तसैं कर्तव्य है. १०७ टीकाः- सो (पूर्वउक्त) योग निश्चयकरि निर्वेद (योगाभ्यासविषै खेद)सैं रहित चित्तकरि अनुष्ठान करनैकूं योग्य है. १०७

१२५० युंजन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यंतं सुखमश्नुते ॥ १०८ ॥

अब (१२४३सैं) उक्त अर्थकूं समाप्त करै हैंः- (॥ युंजन्निति॥) विगतपाप जो योगी है, सो सदा आत्माकूं ऐसैं अनुसंधान करता हुया सुखसैं ब्रह्मके साथि संस्पर्शयुक्त अत्यंतसुखकूं पावता है. १०८ टीकाः- विगतपाप (योगके विघ्न-

(निष्ठा)कूं पाया पुरुष अनेक मरणांत दुःखनकरि अपनी निष्ठातैं चलायमान होता नहीं. यह अर्थ है.

रूप अंतरायसैं रहित) भया जो योगी, सो सदा आत्माकूं ऐसैं (उक्तप्रकारकरि) स्मरण करता हुया अनायाससैं (विना-श्रम) ब्रह्मके साथि संस्पर्शवाले (ब्रह्मस्वरूपभूत) अत्यंत (अनश्वर औ निरतिशय) सुखकूं पावता है. यह अर्थ है. १०८

१२५१ उत्सेक उदधेर्यद्वत् कुशाग्रेणैकबिंदुना ।
मनसो निग्रहस्तद्वद् भवेदपरिखेदतः ॥ १०९॥

अनिर्वेद (फलसहित प्रयत्नविषै खेदके अभाव)करि किया जो योगाभ्यास, सो फलपर्यंत (सफल) होवै है; यह अर्थ दृष्टांतसहित कहै हैंः- (॥ उत्सेक इति ॥) जैसैं कुशाग्रसैं एक बिंदुकरि समुद्रका उत्सेक होवै है, तैसैं अपरिखेद (खेदके अभाव)तैं मनका निग्रह होवै है. १०९ टीकाः-कुश (दर्भ)-के अग्रसैं निकासे एकबिंदुकरि किया जो समुद्रका उत्सेक(निकासिके बाहिर फेंकना), सो खेदके अभाव हुये जैसैं कालांतर-विषै होवैही है; तैसैं मनका निग्रह बी श्रम (खेद)की रहित-ताकरि किया हुया कालांतरविषै सिद्ध होवै है; यह अर्थ टिट्टि-[1]भके उपाख्यानकूं मनविषै धारिके कह्या है. १०९

१ जैसैं कोइक टिट्टिभ नाम पक्षीके, तीरविषै स्थित अंडनकूं समुद्र लहरीकरि हरण करता भया; तब सो पक्षी, "मैं समुद्रकूं शोषण करूंगा" यह निश्चयकरिके प्रवर्त्त हुया अपनी चंचुकरि एक एक जलके बिंदुकूं बाहीर फेंकता भया. तब बहुत बंधुवर्गरूप पक्षीयोनैं निवारण किया तौ बी उपरत भया (हठ्या) नहीं. उलटा तिन सर्वपक्षिनकूं सहकारी करता भया. ऊडनैं बैठनैंरूपकरि बहुतक्लेशकूं प्राप्त भये तिन सर्वपक्षीनकूं देखिके, कृपालु जो नारदमुनि, सो तिनके समीप गरुडकूं भेजता भया. पीछे गरुडके पक्षनके वायुकरि शोषणकूं पावता हुया समुद्र भयकूं पाया हुया तिन अंडनकूं पक्षीके तांई देता भया. ऐसैं अखेदकरि मनके निरोधरूप

१२५२ बृहद्रथस्य राजर्षेः शाकायन्यो मुनिः सुखम् ।
प्राहमैत्र्याख्यशाखायांसमाध्युक्तिपुरःसरम्११०

यह अर्थ केवल गीताविषैहीं कह्या है ऐसैं नहीं, किंतु मैत्रायणीयशाखाविषै बी कह्या है; ऐसैं कहै हैंः– (॥ बृहदिति ॥) मैत्रायणीय नामक शाखाविषै शाकायन्य नाम मुनि बृहद्रथ नाम राजऋषिकूं समाधिके कथनपूर्वक ब्रह्मसुखकूं कहता भया. ११० टीकाः– मैत्रायणीय नामक कोइक यजुर्वेदकी शाखाविषै शाकायन्य नामा कोईक ऋषि अपना शिष्य होनैंकरि प्राप्त भया जो बृहद्रथ नाम राजऋषि (राजनविषै श्रेष्ठ,) ताकूं समाधिके कथनपूर्वक जैसैं होवै तैसैं ब्रह्मसुख कहता भया. ११०

१२५३ यथा निरिंधनो वन्हिः स्वयोनावुपशाम्यति ।
तथा वृत्तिक्षयाच् चित्तं स्वयोनावुपशाम्यति १११

शाकायन्यऋषि किसप्रकारसैं कहता भया? यह आशंकाकरि, तिस (ब्रह्मसुख)के प्रतिपादक तिस (मैत्रायणीयशाखा)के मंत्रनकूं पठन करै हैंः– (॥ यथेति ॥) जैसैं इंधनरहित अग्नि अपनै कारणविषै उपशमकूं पावता है, तैसैं वृत्तिनके क्षयतैं चित्त अपने कारणविषै उपशमकूं पावता है. १११ टीकाः– इंधनरहित (दग्ध भया है काष्ठ जिसका, ऐसा) जो अग्नि है, सो अपनै कारण (तेजोमात्र)विषै उपशमकूं पावता है; कहिये, ज्वालाआदिकरूप विशेषआकारकूं परित्यागकरिके तेजोमात्र-

परम धर्मविषै प्रवर्त्तमान पुरुषकूं ईश्वर अनुग्रह करता है. यह वार्त्ता जीवन्मुक्तिविवेकविषै श्री विद्यारण्यस्वामीनैं लिखी है.

रूपविषे जैसैं स्थित होवै है; तैसैं (तिसीहीं प्रकारकरि) चित्त (अंतःकरण) बी वृत्तिनके क्षयतैं; कहिये, निरोधरूप समाधिके अभ्यासकरि राजसआदिक सकलवृत्तिनके नाशतैं अपनैं कारण (सत्वगुणमात्र)विषै उपशमकूं पावता है (सत्वगुणमात्र अवशेष होवै है.) यह अर्थ है. १११

१२५४ स्वयोनावुपशांतस्य मनसः सत्यकामिनः।
इंद्रियार्थविमूढस्यानृताः कर्मवशानुगाः॥११२॥

तिस (मनके कारणविषै लय)तैं क्या (फल) होवै है? तहां कहै हैंः— (॥ स्वयोनाविति ॥) सत्यविषै कामनावाला औ अपनै कारणविषै उपशांत औ इंद्रियनके अर्थनविषै विमूढ जो मन है, तिसकूं कर्मके वशतैं प्राप्त (फल) अनृत होवै हैं. ११२ टीकाः— सत्य (आत्मा)विषै है काम (इच्छा) जिसकूं औ याहीतैं अपनै कारणविषै उपशांत औ ताहीतैं इंद्रियनके अर्थ (शब्दादिविषयन)विषै विमूढ (विमुख होनैकरि ज्ञानरहित) ऐसा जो मन है, ताकूं कर्मके वशतैं प्राप्त भये जो साधन (शब्दादिनिमित्त) सहित सुखादिक, सो अनृत (मायिकपनैके ज्ञानकरि मिथ्यारूप) होवै हैं. यह अर्थ है. ११२

१२५५ चित्तमेव हि संसारस्तत् प्रयत्नेन शोधयेत्।
यँच्चित्तस्तन्मयो मर्त्यो गुह्यमेतत् सनातनम् ११३

ननु, "चित्तकी उपशांतिके हुये जगत् मिथ्या होवै है" यह कथन अयुक्त है. काहेतैं, तिस (जगत्)कूं चित्तरूप उपादानवाला होनैके अभावतैं. यह आशंकाकरि कहै हैंः— (॥ चित्तमेवेति ॥)

जातैं चित्तहीं संसार है, यातैं ताकूं प्रयत्नसैं शोधन (शुद्ध) करना. टीकाः— यद्यपि स्वरूपकरि चित्तरूप उपादानवाला जगत् नहीं होवै है, तथापि तिस (जगत्)का भोग्यपना चित्तरूप कारणवालाहीं है. इहां "जातैं" इस पर्यायवाले "हि" शब्दकरि सर्वजनके अनुभवकूं प्रमाण करै हैं. काहेतैं, सुषुप्तिआदिकविषै चित्तके विलय हुये भोगके अदर्शनतैं. यह भाव है. जातैं चित्तरूप संसार है, यातैं तिस (चित्त)कूंहीं अभ्यास वैराग्य आदिकरूप प्रयत्नसैं शोधन करना; कहिये, रजतमगुणसैं रहितताकरि एकाग्र करना ❀ ननु, आत्माकी मुक्तिअर्थ आत्माहीं शोधन करनैयोग्य है, चित्त नहीं. यह आशंकाकरि कहै हैंः— (॥ यच्चित्त इति ॥) जो मर्त्य (मनुष्य) जिसविषै चित्तवाला होवै है, सो तन्मय है; यह सनातन गुह्य है. ११३ टीकाः— मूलविषै जो म-

---

१ इहां यह रहस्य हैः— जैसैं शुद्धजल जिस जिस नीलपीतादि रंगके साथि संगकूं पावता है, तिस तिस रूपवाला होवै है; तैसैं पंचभूतनके सत्वअंशका कार्य होनैतैं शुद्ध जो मन है, सो जैसी जैसी भावनाकूं पावता है, अभ्यासके बलतैं तैसैं तैसैं आकारवाला होवै है. यातैं "मैं जीव हूं" इस भावनाके बलतैं मन जीवभावकूं प्राप्त होवै है "औ मैं ईश्वर हूं" इस भावनाके बलतैं मन ईश्वरभावकूं प्राप्त होवै है औ "मैं ब्रह्माआदिक हूं" इस भावनाके बलतैं मन ब्रह्माआदिक भावकूं प्राप्त होवै है "औ मैं देहादिक हूं" इस भावनाके बलतैं मन देहादिक भावकूं प्राप्त होवै है औ "मैं दास हूं" इस भावनाके बलतैं मन दासभावकूं प्राप्त होवै है औ "मैं स्वर्गआदिक लोककूं प्राप्त होउं" इस भावनाके बलतैं स्वर्गादिककी प्राप्तिके हेतु साधनविषै तत्पर हुया, मन स्वर्गादिक लोककूं प्राप्त होवै है औ "सर्व शून्य है" इस भावनाके बलतैं मन वृक्षपाषाणादिक शून्यभावकूं प्राप्त होवै है. औ "मैं प्रत्यक्अभिन्न ब्रह्म हूं" इस भावनाके बलतैं मन ब्रह्मभावकूं प्राप्त होवै है. इसरीतिसैं जिस जिस मतके अनुसार दृढभावनाकरि जिस जिस पदार्थविषै मन तत्पर होवै है, तिस तिस भावकूं प्राप्त होवै है. परंतु तिनमैं इतना भेद हैः—

नुष्यका वाचि मर्त्य पद है, सो देही (देहधारी)मात्रका उप- ैं ो देही जिस पुत्रादिक विषयविषै चित्तवाला ्व है, सो तन्मय (तिसरूप)हीं है, काहेतैं, तिन (पुत्रादिकन)-की संपूर्णता औ असंपूर्णताके आपविषैहीं सम्यक् आरोपण करनैतैं. यह सनातन (अनादिसिद्ध) गुह्य (रहस्य) है. इहां यह कथन किया होवै हैः— स्वभाव (स्वरूप)तैं शुद्धरूप आत्माकूं जातैं चित्तके संबंधतैंहीं संसारीपना है, "ध्यान करतेकी न्याई औ लीला (चेष्टा) करतेकी न्याई, (चित्तके संगकरि आत्मा) होवै है" इस श्रुतितैं. यातैं चित्तके शोधनकरि आत्माकूं संसारकी निवृत्ति होवै है. ११३

१२५६ चित्तस्य हि प्रसादेन हंति कर्म शुभाशुभम्।
प्रसन्नात्मात्मनि स्थित्वा सुखमक्षय्यमश्नुते११४

ननु, अनादिकालकी जन्मपरंपराकरि संपादन किये सुख-दुःखके देनैहारे पुण्यपापकर्मके होते, चित्तके शोधनकरिही कैसें

ब्रह्मसैं भिन्न अनात्मवस्तुकी भावनाकरि जिस जिस भावकी प्राप्ति होवै है, सो सो भाव दीपककी प्रभाविषै मणिबुद्धि औ शुक्तिविषै रजतबुद्धि औ रज्जुविषै सर्पबुद्धि औ साक्षीविषै स्वप्नबुद्धि औ तिनके विषयनकी न्याई विसंवादीभ्रमरूप है. औ ब्रह्मसाक्षात्कारके अभाव हुये गुरुशास्त्रद्वारा परोक्षपनैकरि जानै हुये ब्रह्मविषै "मैं ब्रह्म हूं" इस आकारवाली निर्गुणउपासनारूप दृढभावनाके बलतैं जो ध्यानीपुरुषकूं ब्रह्मभावकी प्राप्ति होवै है सो मणिकी प्रभाविषै मणिबुद्धि औ तिसके विषयकी न्याई संवादीभ्रमरूप है. औ गुरुमुखद्वारा श्रवण किये महावाक्यसैं जनित, "मैं ब्रह्म हूं" इस मनके निश्चयरूप तत्त्वसाक्षात्कारतैं जो ब्रह्मभावकी प्राप्ति होवै है, सो शुक्तिआदिकके ज्ञानतैं प्राप्त शुक्तिआदिककी न्याई पारमार्थिकरूप है. इसअभिप्रायकरिहीं श्रुतिनैं कह्या हैः— "जैसे निश्चयवाला पुरुष इसलोकविषै होवै है, तैसा इहांतैं मरणकूं पायके होवै है" इत्यादिक अनेक श्रुतिआदिकनके वचन इसअर्थविषै प्रमाण हैं; यातैं यह सनातन गुह्य है.

आत्माकूं संसारकी निवृत्ति होवैगी? यह आशंकाकरि, चित्तके प्रसाद (शोधन)करि उपलक्षित ब्रह्मके अनुसंधानकरि सकल कर्मनके क्षयके संभवतैं, चित्तके शोधनकरि बी कैसें आत्माकूं संसारकी निवृत्ति होवैगी, यह शंका बनै नहीं; ऐसें परिहार करै हैंः– (॥ चित्तस्येति ॥) चित्तकेहीं प्रसाद (एकाग्रता)-करि शुभअशुभरूप कर्मकूं नाश करता है. टीकाः– मूल-विषै जो हि शब्द है, तिसकरि “ जैसें अग्निविषै गेऱ्या ईषीका (इस नामवाले कोईक तृण)का तूल (रूही) नाश होवै है; ऐसें निश्चयकरि इस (ज्ञानी)के सर्वपाप नाश होवै हैं ” औ “ सर्व (छोटे बडे) उपपातक (सामान्यपाप) औ महान् (बडे) पातक (दुष्टाचरणन)विषै प्रवेश करिके (तिनके होते बी) रजनी (रात्रि)के पादपर्यंत (पीछले प्रहर)विषै बैठके ब्रह्मके ध्यानकूं सम्यक् आचरे ” इत्यादि श्रुति औ स्मृतिकी प्रसिद्धिकूं जनावते हैं ❀ तिस (चित्तके प्रसाद)तें क्या (फल) होवै है ? तहां कहे हैंः– (॥ प्रसन्नेति ॥) प्रसन्नआत्मावाला पुरुष आत्माविषै स्थित होयके अक्षय सुखकूं पावता है. ११४ टीकाः– प्रसन्न है आत्मा (चित्त) जिसका, ऐसा जो पुरुष सो आत्माविषै; कहिये, स्वस्वरूपभूत अद्वितीय आनंद-रूप ब्रह्मविषै स्थित होयके; कहिये, “ सोइ मैं हूं, ” इस निश्चयकरि दृश्यमात्रकूं परित्यागकरिके चेतनमात्ररूपसें स्थिति करिके अक्षय (अविनाशि) जो स्वरूपभूत सुख है, तिसकूं पावता है. ११४

१२५७ समासक्तं यथा चित्तं जंतोर्विषयगोचरे । यद्येवं ब्रह्मणि स्यात् तत् को न मुच्येत बंधनात् ॥११५

"प्रसन्न आत्मा (चित्त)वाला पुरुष आत्माविषै स्थित होयके" इस (१२५६ उक्त) अर्थकूंहीं दृष्टांतके कथनपूर्वक दृढ करै हैं:- (॥ समासक्तमिति ॥) जंतु (जीव)का चित्त जैसैं विषयरूप गोचरविषै सम्यक् आसक्त है, सो (चित्त) ब्रह्मविषै जब ऐसैं होवै, तब कौन पुरुष बंधनतैं नहीं छूटैगा? ११५ टीकाः- प्राणीका चित्त जैसैं विषयरूप गोचर (इंद्रियके प्रवृत्तिकी भूमि)विषै स्वभावतैं सम्यक्‌आसक्त होवै है, सोइ चित्त ब्रह्म (प्रत्यक्‌अभिन्नपरमात्मा)विषै जब ऐसैं (आसक्त) होवै, तब कौन पुरुष संसारतैं नहीं छूटैगा ? सर्व बी छूटैगाहीं. यह अर्थ है. ११५

१२५८ मनो हि द्विविधं प्रोक्तं शुद्धं चाशुद्धमेव च ।
अशुद्धं कामसंपर्काच्छुद्धं कामविवर्जितम् ॥११६

(१२५७) उक्त अर्थकी दृढता करनैके लिये मनके बीचके भेदकूं कहै हैं:- (॥ मन इति ॥) शुद्ध औ अशुद्ध भेदकरि मन दो प्रकारका है * तिस (दो प्रकार होनै)विषै कारण कहै हैं:- (॥ अशुद्धमिति ॥) काम (कामना)के संबंधतैं (मन) अशुद्ध है औ काम वर्जित (मन) शुद्ध है. ११६ टीकाः- इहां कह्या जो काम, सो क्रोधआदिकका बी उपलक्षण है. ११६

१२५९ मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः ।
बंधाय विषयासक्तं मुक्त्यै निर्विषयंस्मृतम्११७

दोनूंप्रकारके तिस (मन)कूंहीं क्रमकरि संसार औ मोक्षकी हेतुता (श्रुतिकरि) दिखावै हैं:- (॥ मन एवेति ॥) मनुष्यनकूं

बंध औ मोक्षका कारण मनहीं है. विषयनविषै आसक्त भया जो मन, सो बंधअर्थ है औ निर्विषय भया जो मन सो मुक्तिअर्थ है. ११७

समाधिनिर्धूतमलस्य चेतसो
१२६० निवेशितस्याऽऽत्मनि यत् सुखं भवेत्।
न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा
स्वयं तदंतःकरणेन गृह्यते ॥ ११८ ॥

"प्रसन्नचित्तवाला पुरुष आत्माविषै स्थित होयके अक्षयसुखकूं पावता है." इस (१२५६) उक्त अर्थकूंहीं श्रुति आपहीं वर्णन करै हैः– (॥ समाधीति ॥) आत्माविषै प्रवेशकूं पाये औ समाधिकरि निर्धूत (निवृत्त) मलवाले चित्तकूं जो सुख होवै है, तब सो वाणीकरि वर्णन करनैकूं शक्य नहीं है; किंतु, आप (सो सुख) अंतःकरणकरि ग्रहण होवै है. ११८ टीकाः– आत्मा (प्रत्यक्स्वरूप)विषै स्थित भया औ समाधि (प्रत्यगात्मा औ ब्रह्मकी एकताकूं विषयकरनैहारी वृत्तिनकी आवृत्ति)करि संपूर्ण निवारण किया है रजतमगुणरूप मल जिसका, ऐसा जो चित्त है ताकूं तिस समाधिविषै जो सुख उत्पन्न होवै है, तब (समाधिविषै उत्पन्न भया) सो सुख वाणीकरि वर्णन करनैकूं अशक्य है, अलौकिक सुख होनैतैं. यह अर्थ है. किंतु आप सो स्वरूपभूत सुख अंतःकरणकरिहीं ग्रहण करिये है. ११८

२ मनुष्यनकूं क्षणिकसमाधिके संभवतैं ब्रह्मानंदके निश्चयका संभव. १२६१-१२७६

१२६१ यद्यप्यसौ चिरं कालं समाधिर्दुर्लभो नृणाम्।
तथाऽपि क्षणिको ब्रह्मानंदो निश्चाययत्यसौ ११९

ननु, इस समाधिकूंहीं दुर्लभ होनैतैं इसकरि ब्रह्मानंदके निश्चयका संभव कैसैं होवै है? यह आशंकाकरि कहै हैं:-(॥ यद्यपीति ॥) यद्यपि, यह समाधि चिरकाल (बहुतकाल) पर्यंत मनुष्यनकूं दुर्लभ है; तथापि यह क्षणिक (समाधि) होवै है, तिसकरि यह ब्रह्मानंद निश्चय करिये है. ११९ टीकाः- निरंतरस्थायी इस समाधिके असंभव हुये बी, क्षणिक (क्षणकालपर्यंत स्थायी) तिस (समाधि)के संभवतैं, तिस (क्षणिकसमाधि)करिहीं यह आनंद निश्चय करनैकूं शक्य होवै है. यह अर्थ है. ११९

१२६२ श्रद्धालुर्व्यसनी योऽत्र निश्चिनोत्येव सर्वथा। निश्चिते तु सकृत्तस्मिन्विश्वसित्यन्यदाप्ययम् १२०

ननु, आत्माके दर्शन (साक्षात्कार) अर्थ श्रवणादिकविषै प्रवर्त्ते हुये बी कितनैक पुरुष आनंदके निश्चयसैं रहित हुये बहिर्मुखहीं वर्तते हैं. यह आशंकाकरि, श्रद्धारहित पुरुषनकूं तिसप्रकार (निश्चयके अभावके) हुये बी श्रद्धाआदिककरि युक्त पुरुषनकूं तिस (आनंद)का निश्चय होवैहीं है; ऐसैं कहै हैं:- (॥ श्रद्धालुरिति ॥) श्रद्धालु औ व्यसनी जो पुरुष है, सो इस (क्षणिकसमाधि)विषै सर्वथा (अवश्य) निश्चयकूं

करताहीं है. टीकाः— सर्वथा संपादन करूंगा, ऐसा जो आग्रह, सो इहां व्यसन कहिये है; तिसवाला पुरुष व्यसनी कहिये है ❀ तिस (निश्चय किये)तैं क्या होवै है? तहां कहै हैंः— (॥ निश्चिते त्विति ॥) तिसके एकवार निश्चय किये हुये तौ यह पुरुष अन्यकालविषै बी विश्वासकूं पावता है. १२० टीकाः— इस ब्रह्मानंदके एकवार (क्षणिकसमाधिविषै) निश्चय किये हुये; यह (एकवार निश्चयकूं पाया पुरुष) अन्यकालविषै बी आनंद है, ऐसैं विश्वासकूं करता है. १२०

१२६३ ताद्दक् पुमानुदासीनकालेऽप्यानंदवासनाम् ।
उपेक्ष्य मुख्यमानंदं भावयत्येव तत्परः ॥१२१॥

तिस (अन्यकालविषै विश्वासवान् होनै)तैं बी क्या होवै है? तहां कहै हैंः— (॥ताद्दगिति॥) तैसा पुरुष उदासीनकालविषै बी आनंदकी वासनाकूं उपेक्षाकरिके तत्पर हुया मुख्यआनंदकूंहीं भावना करता है. १२१ टीकाः— तैसा (श्रद्धाआदिपूर्वक एकवार आनंदके निश्चयवान्) पुरुष उदासीनपनैकी दशा (अवस्था)विषै बी, प्रतीयमान जो पूर्व (१२२७) उक्त आनंदकी वासना है, ताकूं उपेक्षा (तिरस्कार) करिके तत्पर हुया (मुख्यआनंदविषै तात्पर्यवान् होयके) तिस (मुख्यआनंद)कूंहीं भावना (चिंतन) करता है. १२१

१२६४ परव्यसनिनी नारी व्यग्राऽपि गृहकर्मणि ।
तदेवाऽऽस्वादयत्यंतः परसंगरसायनम् ॥१२२॥

ऐसैं व्यवहारकालविषै बी निजानंदकूं भावना करता है, इस (अर्थ)विषै दृष्टांत कहै हैंः— (॥ परेति ॥) जैसैं परपुरुषके

व्यसनवाली नारी ग्रहके कर्मविषै व्यग्र (प्रवृत्त) हुइ बी, अंतरविषै तिसीहीं परपुरुषके संगरूप रसायन (रसके-स्थान)कूं आस्वादन करै है. १२२

१२६५ एवं तत्त्वे परे शुद्धे धीरो विश्रांतिमागतः ।
तदेवाऽऽस्वादयत्यंतर्बहिर्व्यवहरन्नपि ॥ १२३ ॥

दृष्टांतकरि उक्तअर्थकूं दार्ष्टांतिकविषै जोडते हैंः– (॥ एवमिति ॥) ऐसैं शुद्धपरमतत्त्वविषै विश्रांति (विश्राम)कूं प्राप्त भया जो धीरपुरुष, सो बाहिरतैं व्यवहार करता हुया बी अंतरविषै तिसी (परमतत्त्व)कूंहीं आस्वादन करता है. १२३

१२६६ धीरत्वमक्षप्राबल्येऽप्यानंदाऽऽस्वादवांछया ।
तिरस्कृत्याखिलाक्षाणि तच्चिंतायां प्रवर्तनम् १२४

(१२६५ गत) धीर शब्दके अर्थकूं कहै हैंः– (॥ धीरत्वमिति ॥) इंद्रियनकी प्रबलताके हुये बी आनंदके आस्वादनकी वांच्छासैं सर्वइंद्रियनकूं तिरस्कारकरिके तिस (आनंद)की चिंताविषै जो प्रवर्तन, सो धीरपना है. १२४ टीकाः– इंद्रियनकूं विषयनके सन्मुख होनैंकरि पुरुषके आकर्षणके सामर्थ्यके हुये बी, स्वरूपसुखके अनुसंधानकी इच्छासैं सर्वइंद्रियनकूं तिरस्कारकरिके आनंदके अनुसंधानविषैही जो प्रवर्तमानपना है, सो धीरपना है. यह अर्थ है. १२४

१२६७ भारवाही शिरोभारं मुक्त्वाऽऽस्ते विश्रमं गतः ।
संसारव्यापृतित्यागे तादृग्बुद्धिस्तु विश्रमः १२५

(१२६५ गत) विश्रांति शब्दके कहनैकूं इच्छित अर्थकूं दृष्टांतसहित कहै हैंः—(॥ भारवाहीति ॥) जैसैं भारवाही (बोजका उठावनैहारा) पुरुष शिरके भारकूं त्यागिके विश्रांतिकूं प्राप्त हुया वर्तता है, तैसैं संसारके व्यापारके त्याग हुये जो तैसी बुद्धि, सो विश्रांति (विश्राम) कहिये है. १२५ टीका.— जैसैं लोकविषै भारकूं उठावता हुया पुरुष श्रमके हेतु मस्तकविषै स्थित भारकूं परित्यागकरिके श्रमरहित वर्तता है, तैसैं संसारके व्यापारके त्याग हुये "मैं श्रमरहित भया हूं" ऐसी उत्पन्न भयी जो बुद्धि, सो विश्राम शब्दकरि कहिये है. यह अर्थ है. १२५

१२६८ विश्रांतिं परमां प्राप्तस्त्वौदासीन्ये यथा तथा ।
सुखदुःखदशायां च तदानंदैकतत्परः ॥ १२६ ॥

अब फलितअर्थकूं कहै हैंः— (॥ विश्रांतिमिति ॥) जैसैं परमविश्रामकूं प्राप्त भया पुरुष, उदासीनदशाविषै तिसी एकआनंदविषै तत्पर होवै है, तैसैं सुखदुःखदशाविषैही तिसी एकआनंदविषै तत्पर होवै है. १२६ टीकाः— जैसैं परम (निरतिशय)विश्रांति (१२६७ उक्तलक्षणवाले विश्राम)कूं प्राप्त भया पुरुष अपनी उदासीनदशाविषै परमानंदके स्वाद लेनैविषै तात्पर्यवान् होवै है; ऐसैं सुखदुःखके हेतु प्रारब्धके कालविषै बी तिस (सुखदुःख)के अनुसंधानकूं परित्यागकरिके निजानंदके स्वाद लेनैविषैही तात्पर्यवान् होवै है. यह अर्थ है. १२६

१२६९ अग्निप्रवेशहेतौ धीः शृंगारे यादृशी तथा ।
धीरस्योदेति विषयेऽनुसंधानविरोधिनि॥१२७॥

ननु, दुःखकूं प्रतिकूल होनैंकरि तिसके अनुसंधानकी इच्छाके अभाव हुये बी विषयजन्य सुखकूं अनुकूल होनैंकरि पुरुषनसैं प्रार्थ्यमान (याचित) होनैतैं तिस (सुख)के अनुसंधानकी इच्छा कैसैं नहीं होवैगी? यह आशंकाकरि, तिस (विषयजन्य सुख)-कूं विषयके संपादन आदिकद्वारा अतिशयबहिर्मुखताके संपादनकरि निजानंदके अनुसंधान (स्मरण)का विरोधी होनैतैं, तिस (विषयसुख)की इच्छा बी विवेकीपुरुषकूं नहीं होवै है, ऐसैं दृष्टांतके दिखावनैंपूर्वक कहै हैं:– (॥ अग्नीति ॥) अग्निविषै प्रवेशके हेतु शृंगारविषे जैसी बुद्धि उदय होवै है, तैसी बुद्धि धीर (विवेकी)पुरुषकूं अनुसंधानके विरोधी विषयविषै उदय होवै है. १२७ टीकाः– जैसैं तत्काल देहके छोडनैंकी इच्छाके अतिशय दृढ हुये, तिसके विलंबके कारण अलंकार (भूषण) आदिकविषै अग्निमैं प्रवेशकरनैंहारे पुरुषकूं वैरकी बुद्धि उत्पन्न होवै है, ऐसैं वैराग्यआदिक साधनकरि संपन्न विवेकी पुरुषकूं ब्रह्मके अनुसंधानके विरोधि विषयसुखविषै बी तैसी (दोषदृष्टिरूप) बुद्धि उत्पन्न होवै है. यह अर्थ है. १२७

१२७० अविरोधिसुखे बुद्धिः स्वाऽऽनंदे च गमागमौ ।
कुर्वत्यास्ते क्रमादेषा काकाक्षिवदितस्ततः १२८

विवेकीकूं विरोधि विषयसुखकी इच्छा मति होहु, परंतु प्रयत्नसैं विना सुलभ होनैंकरि अबहिर्मुखताके हेतु विषयविषै क्या इच्छा नहीं होवै है? तहां कहै हैं:– (॥ अविरोधीति ॥) अविरोधि विषयसुखविषै औ स्वरूपआनंदविषै काकाक्षिकी

न्याई क्रमतैं इहां तहां गमन औ आगमनकूं करती हुई यह (विवेकीकी) बुद्धि वर्तती है. १२८

१२७१ एकैव दृष्टिः काकस्य वामदक्षिणनेत्रयोः ।
यात्यायात्येवमानंदद्वये तत्त्वविदो मतिः ॥१२९॥

(१२७० उक्त) दृष्टांतकूं वर्णन करै हैंः-(॥ एकैव दृष्टिरिति ॥) जैसैं एकहीं काककी दृष्टि, वाम औ दक्षिण दोनूं नेत्रनविषै जाती आती है; ऐसैं तत्त्ववेत्ताकी बुद्धि बी दोनूं आनंदनविषै जाती आती है. १२९ टीकाः- जैसैं एकहीं काककी दृष्टि वाम औ दक्षिण इन दोनूं नेत्रनविषै क्रमकरि गमन औ आगमनकूं करै है, ऐसैं विवेकीपुरुषकी बुद्धि बी दोनूंआनंदनविषै गमन आगमनकूं करै है. यह अर्थ है. १२९

१२७२ भुंजानो विषयाऽऽनंदं ब्रह्माऽऽनंदं च तत्त्ववित् ।
द्विभाषाभिज्ञवद् विद्यादुभौ लौकिकवैदिकौ १३०

दार्ष्टांतिककूं वर्णन करै हैंः- (॥ भुंजान इति ॥) तत्त्ववित् जो है, सो अविरोधी विषयनकूं भोगता हुया लौकिक औ वैदिकरूप इन दोनूं विषयानंद औ ब्रह्मानंदकूं दो भाषाके जाननैंहारे पुरुषकी न्याईं जानता है. १३० टीकाः-तत्त्ववेत्ता जो है, सो अविरोधि विषयनकूं भोगता हुया तिन (विषयन)-तैं जन्य विषयानंद औ उपनिषद्के वाक्यतैं जान्या जो ब्रह्मानंद इन लौकिक वैदिकरूप दोनूं (विषयानंद औ ब्रह्मानंद)कूं दोनूंभाषाके जाननैंहारे पुरुषकी न्याईं जानता (अनुभव करता) है. यह अर्थ है. १३०

१२७३ दुःखप्राप्तौ न चोद्वेगो यथापूर्वं यतो द्विदृक्।
गंगामग्नार्धकायस्य पुंसः शीतोष्णधीर्यथा॥३१॥

ननु, दुःखके अनुभवकी दशाविषै उद्वेग (विक्षेप)के हुये, कैसें निजानंदका अनुभव होवै है? यह आशंकाकरि कहै हैंः– (॥ दुःखेति ॥) जातैं विवेकी दो दृष्टिवाला है, यातैं दुःखकी प्राप्तिके हुये बी पूर्वकी न्याई तिसकूं उद्वेग नहीं है. टीकाः– जिसकारणतैं विवेकीपुरुष दो दृष्टिवाला; कहिये, लौकिक वैदिकरूप दोनूंव्यवहारनका बी जाननैंहारा है, यातैं दुःखकी प्राप्तिके हुये बी पूर्व (अज्ञानदशा)की न्याई तिसकूं उद्वेग नहीं होवै है. काहेतैं, विवेककरि तिस तिस कालविषै उद्वेगकूं बाधित होनैतैं. यातैं दुःखके अनुभवकालविषै निजानंदका अनुसंधान विरोधकूं पावता नहीं. यह अर्थ है * एककालविषै दोनूं- (दुःख औ निजानंद)के अनुसंधानविषै दृष्टांत कहै हैं– (॥ गंगेति ॥) जैसें गंगाविषै मग्न (डूब्या) है अर्धकाय (आधा शरीर) जिसका, ऐसें पुरुषकूं (एककालविषै) शीत औ उष्णकी बुद्धि होवै है (तैसें विवेकीकूं दुःख औ निजानंदकी बुद्धि होवै है). ३१

१२७४ इत्थं जागरणे तत्त्वविदो ब्रह्मसुखं सदा।
भाति तद्वासनाजन्ये स्वप्ने तद् भासते तथा॥३२॥

फलितकूं कहै हैंः– (॥ इत्थमिति ॥) ऐसें तत्त्ववेत्ताकूं जागरणविषै सदा ब्रह्मसुख भासता है. टीकाः– सदा; कहिये,

*१ दुःखकी प्राप्तिके हुये तिसके निवारणविषै असमर्थ पुरुषनैं तिस दुःखके अनुभवकारि परिभावितकिया (विचार्या) जो दुःख, सो उद्वेग कहिये है.

सुखदुःखके अनुभवकी दशाविषै औ तूष्णीस्थिति (उदासीन-दशा)विषै. यह अर्थ है ॥ केवल जागरणविषैहीं तिस (ब्रह्मानंद)का भान होवै है ऐसैं नहीं; किंतु, स्वप्नअवस्थाविषै बी ब्रह्मानंदका भान होवै है; ऐसैं कहै हैं:- (॥ तद्वासनेति ॥) तिस (जागृत्)की वासनासैं जन्य स्वप्नविषै बी सो (ब्रह्म-सुख) तैसैं भासता है. १३२ टीका:- तिसकी वासनातैं जन्य, यह जो स्वप्नका विशेषण है,सो हेतुरूप गर्भवाला है; यातैं स्वप्नकूं जागृत्की वासनाकरि जन्य होनैतैं तिसविषै बी सो ब्रह्मसुख तैसैं (जागृत्अवस्थाकी न्याई) भासता है. यह अर्थ है. १३२

१२७५ अविद्यावासनाऽप्यस्तीत्यतस्तद्वासनोत्थिते ।
स्वप्ने मूर्खवदेवैष सुखं दुःखं च वीक्षते ॥ १३३ ॥

ननु, स्वप्नकूं आनंदके अनुभवकी वासनाकरि जन्यताके हुये, तिसविषै क्या आनंदहीं भासताहै (दुःख नहीं)? यह आशंका करि कहै हैं:- (॥ अविद्येति ॥) अविद्याकी वासना बी (स्वप्नकी हेतु) है, यातैं तिस (अविद्या)की वासनातैं उत्पन्न स्वप्नविषै मूर्खकी न्याई यह (ज्ञानी) सुख औ दुःखकूं देखता है. १३३ टीका:- केवल आनंदकी वासनाके बलतैंहीं स्वप्न नहीं होवै है; किंतु, अविद्याकी वासनाके बलतैं बी स्वप्न होवै है; यातैं अविद्याकी वासनातैं जन्य होनैतैं तिस (स्वप्नविषै) अज्ञानीकी न्याई ज्ञानीकूं बी अनियमित सुखका अनुभव होवै है. यह अर्थ है. १३३

१२७६ ब्रह्माऽऽनंदाभिधे ग्रंथे ब्रह्मानंदप्रकाशकम् ।
योगिप्रत्यक्षमध्याये प्रथमेऽस्मिन्नुदीरितम् १३४

इतनैं (सारे) ग्रंथकी रचनाकरि उक्तअर्थकूं सूचन करै हैं:- (॥ ब्रह्माऽऽनंदेति ॥) ब्रह्मानंद नाम ग्रंथविषै स्थित इस प्रथम-अध्यायमैं ब्रह्मानंदका प्रकाशक योगिका प्रत्यक्ष (अपरोक्ष-अनुभव) कह्या. १३४ टीकाः– ब्रह्मानंद नामक पांचअध्याय-रूप ग्रंथविषै स्थित इस प्रथमअध्यायमैं सुषुप्तिअवस्थाविषै औ उदासीनपनैके कालविषै बी औ समाधिअवस्थाविषै औ सुख-दुःखदशाविषै स्वप्रकाशचेतनरूप ब्रह्मानंदका प्रकाशक योगीका अनुभवरूप प्रत्यक्ष (अपरोक्षज्ञान) कह्या. यह अर्थ है. औ यह (योगीका प्रत्यक्ष) आगम (श्रुति) आदिकनका बी उपलक्षण है: काहेतें, तिन (आगमनआदिक प्रमाणन)कूं बी इहां (इस अ-ध्यायविषै) दिखाये होनैतें. १३४

इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य बापुसरस्व-तीपूज्यपादशिष्य पीतांबराव्ह विदुषा विरचि-ता पंचदश्या ब्रह्मानंदगत योगानंदस्य तत्त्व-प्रकाशिकाऽऽख्या व्याख्या
समाप्ता ॥ ११ ॥

ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः

श्री

पंचदशी

अथ श्री ब्रह्मानंदगत आत्मानंद नाम

द्वादश प्रकरण, प्रारंभः १२

भाषाकर्त्ताकृत मंगलाचरण.

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पंचदश्या नृभाषया।
आत्माऽऽनंदाभिधग्रंथव्याख्यानं क्रियते मया ॥१॥

टीकाः– श्रीयुक्त सर्वगुरुनकूं नमस्कार करिके पंचदशीके आत्मानंद नाम ग्रंथका व्याख्यान नरभाषासैं मेरेकरि करिये है. १

१ आत्मानंदके अधिकारी, औ आत्माके अर्थ सर्ववस्तुकी प्रियतापूर्वक, आत्माकी त्रिविधता. १२७७-१३२६

१ प्रत्यगात्माका स्वरूपभूत जो आनंद, सो आत्मानंद है. ताका प्रतिपादक जो प्रकरण, सो बी आत्मानंद कहिये है.

१ मंदबुद्धिवाले अधिकारीकूं आत्मानंदसैं बोधनकी योग्यता. १२७७–१२८१

१२७७ नन्वेवं वासनाऽऽनंदाद् ब्रह्मानंदादपीतरम् ।
वेत्तु योगी निजानंदं मूढस्यात्रास्ति का गतिः १

ऐसैं प्रथम (योगानंद नामक) अध्यायविषै विवेकीपुरुषकूं योग (योगाभ्यास)करि निजानंदके अनुभवका प्रकार दिखायके, अब (इस अध्यायविषै) मूढ (मंदबुद्धिवान्) जो जिज्ञासु (स्वरूपानंदके जाननैंकी इच्छावाला) है, ताकूं आत्मानंद शब्दके वाच्य "त्वं" पदार्थके विवेचनरूप द्वारकरि ब्रह्मानंदके अनुभवका प्रकार दिखावनैंकूं ग्रंथकार शिष्यके प्रश्नकूं प्रगट करते हैंः– (॥ नन्वेवमिति ॥) ननु, ऐसैं (योगानंद-प्रकरण उक्त प्रकारकरि) योगीपुरुष वासनानंदतैं औ ब्रह्मानंदतैं बी अन्य जो निजानंद है ताकूं जानहु (अनुभव करहु), इहां मूढकी कौन गति (दशा) है ? (सो कथन करहु.) १

१२७८ धर्माधर्मवशादेष जायतां म्रियतामपि ।
पुनः पुनर्देहलक्षैः किन्नो दाक्षिण्यतो वद ॥ २ ॥

ऐसैं शिष्यनैं पूछ्या, तब गुरु, अतिमूढकूं विद्या (ज्ञान)का अधिकार नहीं है; ऐसैं कहै हैंः– (॥ धर्मेति ॥) यह, धर्म अधर्मके वशतैं फेरि फेरि देहनके लक्षनकरि जन्महू औ मरहू; इहां हमारे समुजावनैंकरि क्या (प्रयोजन) है ? सो कथन कर. २ टीकाः– यह (अतिमूढ), अनादिसंसारमैं अ-

तीत (पूर्वले) जन्मनविषै अनुष्ठान किये सुकृत (पुण्य) औ दुष्कृत (पाप)के वशतैं नानाप्रकारके देहनके स्वीकार (अंगीकार)करि फेरि फेरि जन्महु औ मरहु. यह अर्थ है. २

१२७९ अस्ति वोऽनुजिघृक्षुत्वाद् दाक्षिण्येन प्रयोजनम्।
तर्हि ब्रूहि स मूढः किं जिज्ञासुर्वा पराङ्मुखः ३

सर्वका अनुग्रह करनैंहारा होनैतैं आचार्य (गुरु)करि तिस (मूढ)की बी कोईक गति कही चाहिये; ऐसैं शिष्य कहता हैः- (॥ अस्तीति ॥) तुमकूं सर्वके अनुग्रह करनैंकी इच्छावाला होनैतैं समुजावनैंकरि प्रयोजन है. टीकाः- तुम (आचार्य)कूं अनुग्रह (शिष्यके उद्धार) करनैंकी इच्छाकरि युक्त होनैतैं समुजावनैंकरि तिस (शिष्य)के उद्धार करनैंरूप प्रयोजन है. यह अर्थ है ❀ ऐसैं शिष्यके वचनकूं सुनिके गुरु तिस (शिष्य) कूं विकल्प करिके पूछते हैं. (॥ तर्हीति ॥) तब सो मूढ क्या जिज्ञासु (स्वरूपके जाननैंकी इच्छावाला विरक्त) है, वा पराङ्मुख (बहिर्मुख रागी) है ! सो कथन कर. ३

१२८० उपास्तिं कर्म वा ब्रूयाद् विमुखाय यथोचितम् ।
*मंदप्रज्ञं तु जिज्ञासुमात्मानंदेन बोधयेत् ॥ ४ ॥

जब मूढकी कोइक गति कही चाहिये, तब सो मूढ क्या रागी (विषयासक्त) है वा विरक्त है ? सो कथन कर. ये दो विकल्प हैं. तिनमैं जो रागी है, तौ तिसके राग (प्रीति)के अनुसारकरि कर्म वा उपासन कह्या चाहिये; ऐसैं प्रथमपक्षविषै

गुरु परिहार (समाधान) कहै हैं:- (॥ उपास्तिमिति ॥) विमुख (तत्त्वज्ञानसैं विमुख)के ताईं यथाउचित उपासनाकूं वा कर्मकूं कहना. टीका:- तत्त्वज्ञानसैं विमुख (बहिर्मुख)के ताईं यथाउचित (यथायोग्य) कह्या चाहिये औ जो ब्रह्मलोकआदिककी कामनावाला होवै तौ ताकूं उपासना कही चाहिये. औ जो स्वर्गआदिककी कामनावाला होवै तौ ताकूं कर्म कह्या चाहिये. यह अर्थ है ❀ जिज्ञासु है, इस द्वितीयपक्ष विषै बी सो (जिज्ञासु) क्या अतिविवेकी है वा मंदप्रज्ञ (मंदबुद्धिवाला)है ? ऐसैं विकल्पकरिके अतिविवेकीकूं तौ पूर्वअध्याय (योगानंद)मैं कथन किये प्रकारकरि ब्रह्मसाक्षात्कार होवैगा; ऐसैं जानिके मंदप्रज्ञकूं तिस(ब्रह्मकेदर्शन)का उपाय कहै हैं:-(॥ मंदेति ॥) मंदप्रज्ञजिज्ञासुकूं तौ आनंदकरि बोधन करना. ४ टीका:- मंद है प्रज्ञा (बुद्धि) जिसकी, ऐसा जो पुरुष सो मंदप्रज्ञ कहिये है औ जाननैकूं जो इच्छता है,सो जिज्ञासु कहिये है तिस मंदबुद्धिवाले जिज्ञासुकूं आत्मानंदकरि (आत्मानंदके विवेचनरूपद्वारकरि) बोधन करना. ४

१२८१ बोधयामास मैत्रेयीं याज्ञवल्क्यो निजप्रियाम् ।
न वा अरे पत्युरर्थे पतिः प्रिय इतीरयन् ॥ ५ ॥

ऐसैं (आत्मानंदकरि) किस (गुरु)नैं कौन (शिष्य)के ताईं बोधन किया है ? तहां कहै हैं:- (॥ बोधयामासेति ॥) याज्ञवल्क्यमुनि, मैत्रेयी नामक अपनी प्रियाकूं "अरे (स्त्री,) पतिकेअर्थ पति प्रिय नहीं होवै है" ऐसैं कहते हुये बोधन करते भये. ५ टीका:- याज्ञवल्क्य, इस नामवाला यजुर्वेदकी

शाखाविशेष (वाजसनेयिशाखा)का प्रवर्त्तक कोइक ऋषि, मैत्रेयी इस नामवाली अपनी प्रिया (भार्या)कूं "अरे (मैत्रेयी) पतिके काम (भोग)अर्थ पति प्रिय नहीं होवैहै" इत्यादिक, प्रकारकरि कहता हुया बोध करता भया. यह अर्थ है. ५

२ आत्माअर्थ सर्ववस्तुकी प्रियताकी बोधक श्रुतिके तात्पर्यका विभाग. १२८२–१२९६

१२८२ पतिर्जाया पुत्रवित्ते पशुब्राह्मणबाहुजाः ।
लोका देवा वेदभूते सर्वं चाऽऽत्मार्थतः प्रियम् ६

आगे (१३४८ विषै) "परम (सर्वसैं अधिक)प्रेमका विषय होनैंकरि (आत्मा) परमानंदरूप अंगीकार करनैंकूं योग्य है" इस वाक्यकरि "परमप्रेमका विषय होनैकरि" इस हेतुसैं आत्माकी परमानंदताके साधनैकूं इच्छते हुये आचार्य्य, आदि (१२८२–१३४८) विषै परमप्रेमकी विषयतारूप हेतुके कहनैंअर्थ, प्रथम (१२८१ विषै) उदाहरण किये श्रुतिवाक्यके उपलक्षण परायण होनैंके अभिप्रायकरि तिस (श्रुतिरूप) प्रमाणविषै स्थित सकल

१ वाज जो केसर (अश्वरूपके कंठगत केश) तिनकरि जिसनै यजुर्वेदके समूहका सनि (दान) किया है, ऐसा जो अश्वरूपधर सूर्य, सो वाजसनि कहिये है. सो (सूर्य) जिसकूं सेवनैं योग्य है ऐसा जो याज्ञवल्क्यमुनि, सो वाजसनेय कहिये है. तैत्तिरीय नामक कृष्णयजुर्वेदतैं विलक्षण जो शुक्लवर्णयजुर्वेदरूप काण्वआदिक पंचदश (१५) शाखा हैं, सो जातैं याज्ञवल्क्यकरि प्रवर्त्त भईयां हैं, यातैं वाजसनेयि नामसैं कहिये हैं.

२ यह वार्त्ता बृहदारण्यकउपनिषद्के तृतीयअध्याय औ षष्ठअध्यायविषै पठित मैत्रेयीब्राह्मण नामक प्रकरणविषै प्रसिद्ध है.

पर्यायरूप वाक्यके तात्पर्यकूं कहै हैं:– (॥ पतिरिति ॥) पति, जाया (स्त्री), पुत्र, वित्त (धन), पशु (गौ अश्वादिक), ब्राह्मण (ब्राह्मणपनैरूप जाति), क्षत्रिय (क्षत्रियत्वजाति), लोक (स्वर्गादिक), देव (ईश्वरादिक), वेद (ऋक्आदिक), औ भूत (पृथिवीआदिक); यह सर्व (भोग्यका समूह) आत्मा (भोक्ता)के अर्थ प्रिय है. ६ टीका:– पति (भर्त्ता) औ जाया (भार्या) आदिक जो भोग्य (भोगसामग्री)का समूह है, सो भोक्ताके शेष (उपकारी) होनैतैं भोक्ताके संबंधकरिहीं प्रिय है; स्वरूपकरि प्रिय नहीं है: यह अभिप्राय है. ६

१२८३ पत्याविच्छा यदा पत्न्यास्तदा प्रीतिं करोति सा।
क्षुदनुष्ठानरोगाऽऽद्यैस्तदा नेच्छति तत्पतिः ॥७॥

अब पूर्व (१२८१ विषै) उदाहरण कियेहीं "अरे (मैत्रेयी) पतिके काम (भोग)अर्थ पति प्रिय नहीं होवैहै, (किंतु) आत्माके कामअर्थ पति प्रिय होवै है" इस श्रुतिवाक्यके तात्पर्यरूप अर्थकूं विभागकरिके दिखावै हैं:– (॥ पत्याविति ॥) जब पत्नीकूं पतिविषै इच्छा होवै, तब सो प्रीति करती है औ जब तिसका पति क्षुधा अनुष्ठान औ रोगआदिकनकरि युक्त होवै तब तिसकूं नहीं इच्छता है. ७ टीका:– जिसकालविषै पत्नी (जाया)कूं पति (भर्त्ता) विषै इच्छा (काम) होवै, तब सो (पत्नी) पतिविषै प्रीति (स्नेह)कूं करती है औ जब पति क्षुधाआदिक इच्छाके अभावरूप हेतुकरि युक्त होवै तब तिस (पत्नी)कूं इच्छता (कामना करता) नहीं. ७

१२८४ न पत्युरर्थे सा प्रीतिः स्वार्थ एव करोति ताम्।
पतिश्चाऽऽत्मन एवार्थे न जायार्थे कदाचन ॥८॥

ऐसैं हुये क्या फलित (सिद्ध) भया? तहां कहै हैं:- (॥ न पत्युरिति ॥) सो (जायाकृत) प्रीति, पतिके अर्थ नहीं है. किंतु जाया, तिस (प्रीति)कूं स्वार्थ (अपनैं अर्थ)हीं करती है. टीका:- जाया (भार्या)करि करिये है जो प्रीति, सो पतिके-अर्थ (पतिके प्रयोजन वास्ते) नहीं है, किंतु जाया, पतिविषै तिस प्रीतिकूं अपनैं प्रयोजन वास्तेहीं करती है ❋ "अरे (मैत्रेयी), जाया (पत्नी)के कामअर्थ जाया प्रिय नहीं होवै है" इस आदिवाले औ "अरे (मैत्रेयी), सर्वके काम (भोग)अर्थ सर्व प्रिय नहीं होवै है, (किंतु) आत्माके कामअर्थ सर्व प्रिय होवै है" इस अंतवाले श्रुतिवाक्यनके तात्पर्यकूं क्रमसैं विभागकरिके दिखावै हैं:- (॥ पतिश्चेति ॥) औ पति बी आत्मा (आप)के अर्थहीं (प्रीतिकूं करता है), जायाकेअर्थ कदाचित् नहीं (करता है). ८ टीका:- औ पति बी अपनैं प्रयोजन वास्तेहीं जायाविषै प्रीतिकूं करता है, जायाकी प्रीति वास्ते नहीं. यह अर्थ है. ८

१२८५ अन्योऽन्यप्रेरणेऽप्येवं स्वेच्छयैव प्रवर्त्तनम्॥९॥

ननु, पति औ जायामैंसैं एकएककी कामनाकरि प्रवृत्तिविषै जो प्रीति है, सो स्वार्थ (अपनैंअर्थ) होहु; परंतु एककालविषै दोनूंकी इच्छाकरि प्रवृत्तिविषै जो प्रीति है, ताकूं दोनूं (पति औ जाया)की अर्थता होवैगी. यह आशंकाकरि कहै

हैंः– (॥ अन्योऽन्येति ॥) ऐसैं अन्योअन्य (दोनूंकी परस्पर) प्रेरणाके हुये बी अपनी इच्छाकरिहीं प्रवृत्ति होवै है. ९ टीकाः– ऐसैं (कथन किये प्रकारकरि) अपनी इच्छाकरि (अपनी कामनाके पूरण करनैंकी इच्छाकरि)हीं दोनूं (पति औ जाया)की बी प्रवृत्ति होवै है. ९

१२८६ श्मश्रुकंटकवेधेन बालो रुदति तत्पिता ।
चुंबत्येव न सा प्रीतिर्बालार्थे स्वार्थ एव सा ॥१०

अपनी इच्छाकरि प्रवृत्तिपनैकूं दिखावै हैंः– (॥ श्मश्रुकंटकेति ॥) श्मश्रु (डाढी)के कंटक (कंटकतुल्य केशन)के वेधकरि बालक रुदन करता है औ तिस (बालक)का पिता चुंबन करताहीं है, सो प्रीति बालकके अर्थ नहीं है; किंतु सो (प्रीति) अपनैं (पिताके) अर्थहीं है. १० टीकाः– पिताकरि करिये है जो पुत्रके मुखआदिकका चुंबन, सो पुत्रकी प्रीतिअर्थ नहीं है. काहेतैं, तिस (पुत्र)कूं श्मश्रुके कंटक (केशन)के वेधकरि रुदनकरनैहारा होनैतैं. यातैं सो (पुत्रके मुखआदिकका चुंबन) पिताकूं अपनी तुष्टि (तृप्ति)अर्थहीं है; ऐसैं जानना. यह अर्थ है. १०

१२८७ निरिच्छमपि रत्नादि वित्तं यत्नेन पालयन् ।
प्रीतिं करोति स स्वार्थे वित्तार्थत्वं न शंकितम् ११

चेतन (जंगम)रूप पति, जाया, औ पुत्रविषै करिये है जो प्रीति, ताकी स्वार्थता औ परार्थताविषै संदेहके संभवतैं अचेतन (जड) होनैंकरि इच्छामात्रसैं रहित जो वित्त (धन)रूप

विषय है, ताकूं तिस (स्वार्थ)ताकी शंकाहीं नहीं है; इस अभिप्रायकरि "अरे (मैत्रेयी), वित्तके कामअर्थ वित्त प्रिय नहीं होवै है (किंतु आत्माके कामअर्थ वित्त प्रिय होवै है)" इस वाक्यके तात्पर्यकूं कहे हैं:– (॥ निरिच्छमपीति ॥) इच्छारहित रत्न (मणि)आदिकरूप वित्त (धन)कूं पालन करता हुया पुरुष प्रीतिकूं करता है, सो (प्रीति) अपनैं अर्थहीं है, तिस (प्रीतिकी) वित्तअर्थता शंकित (शंकाकी विषय) नहीं है. ११

१२८८ अनिच्छति बलीवर्दे विवाहयिषते बलात्।
प्रीतिः सा वणिगर्थैव बलीवर्दार्थता कुतः ॥१२॥

चेतनपनैके हुये बी वहन (भार उठावनै) आदिककी इच्छातैं रहित पशुनकूं विषयकरनैहारा जो "अरे (मैत्रेयी), पशुनके कामअर्थ (पशु प्रिय नहीं होवै हैं, किंतु आत्माके कामअर्थ पशु प्रिय होवै हैं)" यह वाक्य है; ताके तात्पर्यकूं कहे हैं:–(॥ अनिच्छतीति ॥) बलीवर्दके नहीं इच्छते हुये बी बलतैं (तिसकूं) भार उठावनैंकूं पुरुष इच्छता है. सो प्रीति वणिक् (व्यापारी)के अर्थही है, (तिस प्रीतिकूं) बलीवर्दकी अर्थता कहांसैं होवैगी? १२ टीका:– बलीवर्द (बैल) भार उठावनैंकी इच्छा नहीं करता है, तौ बी वणिक् जो है सो तिस (बैल)तैं भार उठावनैंकूं इच्छता है; तहां भार उठावनैंआदि-

१ आदि शब्दकरि, स्वारी करनैंकी वा शृंगार करनैंकी वा रथ आदिकनसैं जोडनैंकी इच्छाका ग्रहण है. उक्तकार्यरूप निमित्तसैं जन्य जो बैलविषै प्रीति सो वणिकके

ककूं विषय करनैहारी जो प्रीति है सो वणिक्के अर्थ है, बलीवर्दके अर्थ नहीं है. यह अर्थ है. १२

१२८९ ब्राह्मण्यं मेऽस्ति पूज्योऽहमिति तुष्यति पूजया।
अचेतनाया जातेर्नो संतुष्टिः पूंस एव सा ॥ १३ ॥

"अरे (मैत्रेयी), ब्राह्मण(जाति)के कामअर्थ (ब्राह्मण-जाति) प्रिय नहीं है, किंतु आत्माके कामअर्थ ब्राह्मण जाति प्रिय है," इस वाक्यके तात्पर्यकूं कहे हैं:– (॥ ब्राह्मण्यमिति ॥) "ब्राह्मणत्व (जाति) मेरी है, मैं पूज्य (पूजाके योग्य) हूं" ऐसें पूजाकरि संतोष (प्रसन्नता)कूं पावता है, सो संतोष अचेतन (जड) जातिकूं नहीं है; किंतु पुरुषकूंहीं है. १३ टीकाः– ब्राह्मणत्व जातिरूप निमित्तवाली पूजाकरि मैं ब्राह्मण हूं, इस अभिमानवान् (पुरुष)हीं संतोषकूं पावता है; जड जाति जो (ब्राह्मणपना) है सो संतोषकूं पावती नहीं. यह अर्थ है. १३

१२९० क्षत्रियोऽहं तेन राज्यं करोमीत्यत्र राजता।
न जातेर्वैश्यजात्यादौ योजनायेदमीरितम् ॥ १४

"अरे (मैत्रेयी), क्षत्र(जाति)के (कामअर्थ क्षत्र प्रिय नहीं है)" इस वाक्यके तात्पर्यकूं कहे हैं:– (॥ क्षत्रिय इति ॥) "मैं क्षत्रिय (क्षत्रियत्व जातिवान्) हूं, तिस (हेतु)करि राज्यकूं करता हूं;" इहां जो राजापना है, सो जातिकूं

अर्थ है, बैलके अर्थ नहीं है. काहेतें, बैलकूं तौ तिन कार्यनविषै इच्छा बी नहीं है औ वणिककूं तिन कार्यनविषै इच्छा है; यातैं यह कथन बनै है.

नहीं है. टीकाः- राज्यके उपभोगरूप निमित्तसैं जन्य जो सुख है, सो क्षत्रियत्व जातिवान् (पुरुष)कूंही है, क्षत्रियत्व (क्षत्रियपनैंरूप) जातिकूं नहीं है. यह अर्थ है ❀ यहक्ष त्रियका जो उदाहरण है सो वैश्यआदिकके उपलक्षण (ग्रहण)अर्थ है; ऐसैं कहै हैंः-(॥ वैश्यजात्यादाविति ॥) यह (क्षत्रियका उदाहरण) वैश्यजातिआदिकविषै जोडनैंअर्थ कह्या है. १४

१२९१ स्वर्गलोकब्रह्मलोकौ स्तां ममेत्यभिवांच्छनम् ।
लोकयोर्नोपकाराय स्वभोगायैव केवलम् ॥१५॥

" अरे (मैत्रेयी), लोक (स्वर्गादिकन)के कामअर्थ (लोक प्रिय नहीं होवै हैं)" इत्यादि इस वाक्यके तात्पर्यकूं कहै हैंः- (॥ स्वर्गलोकेति ॥) " स्वर्गलोक औ ब्रह्मलोक मेरेकूं प्राप्त होवैं " ऐसी जो अभिवांच्छा है, सो लोकनके उपकारअर्थ नहीं है; किंतु केवल अपनैं भोग (सुखानुभव)के अर्थ है. १५ टीकाः- स्वर्गलोक औ ब्रह्मलोक; इन दोनूंलोकनका जो ग्रहण है, सो कर्म औ उपासनारूप दोनूंसाधनकरि संपादन करनैंयोग्य सकललोकनके उपलक्षण (ग्रहण)अर्थ है. १५

१२९२ ईशविष्ण्वादयो देवाः पूज्यंते पापनष्टये ।
न तन् निष्पापदेवार्थं तत् तु स्वार्थं प्रयुज्यते १६

किंवा (और बी कहते हैंः-) (॥ ईशविष्णवादय इति ॥) ईश (अंतर्यामी वा शिव) औ विष्णुआदिक जो देवता हैं, सो पापकी निवृत्तिअर्थ पूजन करिये हैं, सो (पूजन) निष्पाप (स्वतः पापरहित) देवनके (प्रयोजन)अर्थ उप-

योगी होता नहीं; किंतु अपनैं (प्रयोजन)अर्थ उपयोगी होता है. १६

१२९३ ऋगादयो ह्यधीयंते दुर्ब्राह्मण्यानवाप्तये।
न तत् प्रसक्तं वेदेषु मनुष्येषु प्रसज्यते॥ १७॥

किंवाः– (और बी कहे हैं:–) (॥ ऋगादय इति ॥) दुर्ब्राह्मणताकी अप्राप्तिअर्थ ऋक्आदिक (च्यारीवेद) अध्ययन करिये हैं, सो (अब्राह्मणता) वेदनविषै प्राप्त नहीं होवै है; किंतु मनुष्यनविषै प्राप्त होवै है. १७ टीकाः– दुर्ब्राह्मणता नाम व्रात्यपनैंका है. सो (दुर्ब्राह्मणपना) मनुष्यनविषै जो मनुष्यत्वरूप (व्यापक) जाति है, ताके अंतर्गत (व्याप्य) जातिरूप है, तिस (मनुष्यपनैं)रूप जातिकरि रहित वेदनविषै सो (व्रात्यपना) प्राप्त होवै नहीं. यह अर्थ है. १७

१२९४ भूम्यादिपंचभूतानि स्थानतृट्पाकशोषणैः।
हेतुभिश्चावकाशेन वांच्छंत्येषां न हेतवे॥ १८॥

---

१ प्राप्त वस्तु (दोषआदिक)का निषेध बनै है, अप्राप्तका नहीं. जैसैं मनुष्यपनैंरूप जाति है तौ ताके अंतर्गत ब्राह्मण होनैंयोग्य मनुष्यविषै वेदाध्ययनआदिकके अभावकरि व्रात्यपनैं (दुर्ब्राह्मणपनैं)रूप जातिकी प्राप्तिका संभव है; ताका वेदअध्ययनआदिककरि निषेध (निवारण) होवै है. वेदनविषै जाति (मनुष्यत्वरूप व्यापक जाति)का अभाव है, यातैं व्रात्यत्वरूप व्याप्यजातिका अभाव है. जिस जातिके अंतर्गत और अनेकजाति होवैं, सो व्यापकजाति कहिये है; जैसैं मनुष्यत्व जाति है. औ जिस जातिके अंतर्गत औरजाति होवै नहीं किंतु आप औरजातिके अंतर्गत होवै, सो व्याप्यजाति कहिये है; जैसैं ब्राह्मणत्व वा क्षत्रियत्व आदिक जाति हैं. इति.

किंवाः– (और बी कहै हैंः–) (॥ भूम्यादीति ॥) (सर्व-प्राणी); स्थान, तृषानिवारण, पाक, शोषण औ अवकाश; इन हेतुनकरि भूमिआदिक पंचभूतनकूं इच्छते हैं; इन (भूतन)के हेतुअर्थ नहीं. १८ टीकाः– सर्वप्राणी, अवस्थानका देना औ तृषाका निवारण, औ पाक (अन्नके कच्चेपनैंका निवारण) करना, औ आर्द्र (गीलेवस्त्रादि वस्तु)का शोषण, औ अवकाश (रहनैं फिरनैकूं जागा)का देना; इन नामवाले हेतु (निमित्तन)करि पृथिवीआदिक पांचभूतनकी अपेक्षा करते हैं औ इन पृथिवीआदिकनके हेतु (प्रयोजन)अर्थ अवस्थानकी इच्छाआदिक निमित्त नहीं हैं; यातें आप (पृथिवीआदिक) आकांक्षा करते नहीं. यह अर्थ है. १८

१२९६ स्वामिभृत्यादिकं सर्वं स्वोपकाराय वांछति ।
तत्तत्कृतोपकारस्तु तस्य तस्य न विद्यते ॥ १९ ॥

"अरे (मैत्रेयी), सर्वके काम (भोग)अर्थ (सर्व प्रिय नहीं होवै है)" इस वाक्यके तात्पर्यकूं कहै हैंः– (॥ स्वामीति ॥) स्वामी (अधिपति) औ भृत्य (अनुचर)आदिक सर्वकूं अपनैं उपकारअर्थ इच्छा करते हैं औ तिस तिस (स्वामीआदिक)का किया उपकार सो तौ तिस तिस (स्वामीआदिक)के अर्थ नहीं है, (किंतु आपके अर्थ है.) १९ टीकाः– अनुचर (किंकर)आदिक सर्वजन जो हैं, सो स्वामीआदिक सर्वकूं अपनैं उपकार (प्रयोजन)अर्थ इच्छता है; ऐसैं स्वामीआदिक बी (अपनैं उपकारअर्थ अनुचरआदिककूं इच्छता) है. १९

१२९६ सर्वव्यवहृतिष्वेवमनुसंधातुमीदृशम् ।
उदाहरणबाहुल्यं तेन स्वां वासयेन् मतिम् २०

ननु, श्रुतिविषै ऐसें बहुत उदाहरणका दिखावना किस (प्रयोजन)अर्थ किया है ? यह आशंकाकरि कहै हैंः– (॥ सर्वव्यवहृतिष्विति ॥) सर्वव्यवहारनविषै ऐसें अनुसंधान करनैकूं ऐसा उदाहरणका बहुलपना कह्या है, तिस (हेतु)-करि अपनी मतिकूं वासित (वासनायुक्त) करना. २०

टीकाः– इच्छापूर्वक जो सर्व (भोजनादिक) व्यवहार हैं; तिनाविषै बी ऐसें आत्माके कामअर्थ सर्व प्रिय होवै है, इस (१२९५विषै) कथन किये प्रकारकरि अनुसंधान (चिंतन करनै)अर्थ ऐसा (१२८२सें कथन किया) पति जाया आदिकविषै प्रीतिके दिखावनैरूप उदाहरणका बहुलपना कह्या है. तिस कारणकरि अपनी (आपसें संबंधवाली) मति (बुद्धि)कूं वासित करै; कहिये, सर्ववस्तुके बी अपनैं (आत्माके)शेष (उपकारी)पनैंके ज्ञानकरि अपनैं आत्मा (स्वरूप)की प्रियतमता (अत्यंत प्रियरूपतारूप परमानंदता)के अनुसंधानवाली करै. यह अर्थ है. २०

३ आत्मामैं विद्यमान प्रीतिके स्वरूपपूर्वक, आत्माकी प्रियतमता. १२९७–१३०७

१२९७ अथ केयं भवेत् प्रीतिः श्रूयते या निजाऽऽत्मनि ।
रागो वध्वादिविषये श्रद्धा यागादिकर्मणि ॥२१॥

१२९८ भक्तिः स्याद् गुरुदेवादाविच्छा त्वप्राप्तवस्तुनि ।
तैर्ह्यस्तु सात्विकी वृत्तिः सुखमात्रानुवर्त्तिनी ॥२२

ननु, आत्माका शेष (उपकारी) होनैंकरि सर्ववस्तुकी प्रियरूपताके कथनतैं आत्माकी प्रियतमता कही, सो बनै नहीं. काहेतैं, विकल्पके किये हुये प्रीतिकूंहीं निरूपण करनैकूं अशक्य होनैतैं; इस अभिप्रायकरि प्रीतिके स्वरूपकूं वादी पूछता हैः- (॥ अथ केयमिति ॥) अब (पूर्वपक्षी पूछता हैः-) जो निजात्माविषै सुनिये है, सो प्रीति कौन (किस रूप) है ? टीकाः- मूलविषै जो अथ (अब) शब्द है, सो प्रश्नअर्थ है (सो प्रश्न यह है):- जो निजात्माविषै प्रीति श्रुतिमैं सुनिये है, यह प्रीति क्या रागरूप है, किंवा श्रद्धारूप है, वा भक्तिरूप है, यद्वा इच्छारूप है ? ये च्यारीविकल्प जो हैं, सो मूलमैं स्थित किं (कौन) शब्दका अर्थ है ❀ इन च्यारीपक्षनविषै प्रीतिकूं सर्वविषयवान्‌ता संभवै नहीं; ऐसैं कहे हैंः- (॥ राग इति ॥) राग, वधू (स्त्री) आदिक विषयविषै होवैगा औ श्रद्धा, याग आदिककर्मविषै होवैगी. २१ टीकाः- रागरूप जो (प्रीति) होवै तौ वधूआदिकविषैहीं होवैगी, यागादिक कर्मविषै नहीं औ श्रद्धारूप जो (प्रीति) होवै तौ यागादिकविषैहीं होवैगी वधूआदिकविषै नहीं. २१ (॥भक्तिरिति॥) भक्ति, गुरु देव आदिकविषै होवैगी, औ इच्छा तौ, अप्राप्त वस्तुविषै होवैगी. टीकाः- औ भक्तिरूप जो (प्रीति) होवै तौ गुरु अरु देव आदिकविषै होवैगी, अन्योंविषै नहीं. औ इच्छारूप जो (प्रीति) होवै तौ अप्राप्तवस्तुविषै (अप्राप्तवस्तुकूं विषय करनैंहारी) होवैगी, (अन्योंकूं विषय करनैहारी नहीं); यातैं प्रीतिकूं सर्व (अनुकूलवस्तु)कूं विषय करनैंपना नहीं (संभवै) है. यह अर्थ है ❀ अब सिद्धांती, कथन किये

च्यारीप्रकारनसैं भिन्न पक्षकूं ग्रहण करिके उत्तर (प्रीतिका स्वरूप) कहै हैंः– (॥ तर्ह्यस्त्विति ॥) तब सुखमात्रकूं अनुसरिके वर्त्तनैहारी जो सात्विकीवृत्ति है सो प्रीति होहु.२२
टीकाः– तब (प्रीतिकी रागआदिकरूपताके असंभव हुये) सुखमात्रानुवर्त्तिनी; कहिये, सुखहीं सुखमात्र है, ताकूं अनुसरिके वर्त्तनैंहारी ऐसी जो सात्विकी (सत्वगुणके परिणामरूप) अंतःकरणकी वृत्ति है, सो प्रीति होहु. २२

१२९९ प्राप्ते नष्टेऽपि सद्भावादिच्छातो व्यतिरिच्यते ।
सुखसाधनतोपाधेरन्नपानादयः प्रियाः ॥२३॥

ननु, तब सो (एकहीं सुखके गोचर) प्रीति, इच्छाहीं होवैगी. यह आशंकाकरि परिहार करै हैंः– (॥ प्राप्त इति ॥) प्राप्त (सुखादिक)विषै औ नष्ट (विषय)विषै बी सद्भावतैं, (प्रीति) इच्छातैं भिन्न है. टीकाः– इच्छा, प्रथम अप्राप्त सुखादिकमात्रकूं विषय करनैंहारी है औ यह (प्रीति) तौ सर्व (प्राप्त अरु अप्राप्त सुखादिक)कूं विषय करनैहारी है. काहेतैं, प्राप्त भये सुखआदिकविषै औ नष्ट भये बी तिस (सुखादि विषय)विषै प्रीतिकूं विद्यमान होनैंतैं सो (प्रीति) इच्छा(रूपवृत्ति)तैं भेदकूं पावती है ❀ अब सुखके साधनरूप अन्नआदिकनविषै जैसें प्रीति देखिये है, तैसें आत्माविषै बी प्रीतिके देखनैंतैं आत्मा बी अन्नआदिककी न्याई सुखका साधन होवैगा; इसरीतिसैं वादी शंका करै हैंः– (॥ सुखेति ॥) अन्न पान आदिक, सुखके साधनपनैरूप उपाधितैं प्रिय हैं. २३
टीकाः– जैसें अन्न पान आदिक, सुखकी साधनतारूप उपाधि-

करि प्रिय देखे हैं; ऐसैं आत्मा बी अनुकूल होनैतैं (प्रिय होनैतैं) अन्नादिकके सम (अन्नआदिककी न्याई सुखका साधन) होवैगा, यह अर्थ (आगेके श्लोकसैं मिलित) है. २३

१३०० आत्माऽनुकूल्यादन्नादिसमश्चेदमुनाऽत्र कः ।
अनुकूलयितव्यः स्यान् नैकस्मिन् कर्मकर्तृता२४

(॥ आत्मेति ॥) आत्मा, अनुकूल होनैतैं अन्नआदिकके समान है, ऐसैं जो कहै; टीकाः- इहां यह अनुमान सूचन किया हैः- विवादका विषय जो आत्मा, सो सुखका साधन होनैकूं योग्य है, प्रिय होनैतैं; अन्नआदिककी न्याई. ऐसैं जो कहै; ❀ अन्न पान आदिकनविषै भोग्यपना (भोगकी साधनता) उपाधि है, (यातैं सुखकी साधनता है औ आत्माविषै भोग्यतारूप उपाधि नहीं, यातैं सुखकी साधनता नहीं है;) इस अभिप्रायकरि सिद्धांती परिहार करै हैंः- (॥ अमुनेति ॥) इहां इसकरि अनुकूलताका विषय होनैयोग्य कौन होवैगा? टीकाः- इहां (लोकविषै) इस (सुखका साधन होनैसैं अनुकूल आत्मा)करि अनुकूलताका विषय होनैयोग्य (भोक्ता) कौन होवैगा? कोई बी नहीं. काहेतैं, आत्मातैं भिन्न भोक्ताके अभावतैं. यह अर्थ है ❀ ननु, आप (आत्मा)हीं (आप अनुकूलकरि) अनुकूलताका विषय होनैयोग्य होवैगाः तहां कहै हैंः- (॥ नैकस्मिन्निति ॥) एकविषै कर्म (विषयभाव) औ कर्त्ता (विषयीभाव) संभवै नहीं. २४ टीकाः- एकहीं आत्माकूं एककालविषै उपकार्यता (उपकारकी विषयता) औ उपकारकता (उपकारका कर्तापना) ये दोनूं धर्म विरोधयुक्त होवै हैं. यह अर्थ है. २४

१३०१ सुखे वैषयिके प्रीतिमात्रमात्मा त्वतिप्रियः। सुखे व्यभिचरत्येषा नात्मनि व्यभिचारिणी २५

ननु, आत्माकूं अन्नआदिककी न्याईं सुखकी साधनताके अभाव हुये बी सुखकी न्याईं भोक्ताकी शेषता (उपकारकता) होवैगी. यह आशंकाकरि, आत्माकूं निरतिशय (सर्वसैं अधिक) प्रेम (प्रीति)का विषय होनैंतैं (आत्मा भोक्ताका शेष है) यह कथन बनै नहीं; ऐसैं परिहार करै हैंः- (॥ सुख इति ॥) विषयजन्य सुखविषै प्रीतिमात्र है औ आत्मा तौ अतिप्रिय है. टीकाः- विषयजन्य सुखविषै प्रीतिहीं होवै है, निरतिशयप्रीति नहीं; औ आत्मा तौ अतिप्रिय (निरतिशय प्रेमका विषय) है; यातैं विषयजन्य सुखतुल्य नहीं है. यह अर्थ है ❀ तिन दोनूं (विषयगत प्रीतिमात्र औ आत्मागत अतिशयप्रीति)विषै कारण कहै हैंः- (॥ सुखे व्यभिचरतीति ॥) सुख (विषयानंद)विषै यह (प्रीति) व्यभिचारकूं पावती है औ आत्माविषै व्यभिचारकूं पावती नहीं. २५ टीकाः- विषयजन्य सुखविषै उत्पन्न भई यह प्रीति व्यभिचारकूं पावती है; कहिये, कदाचित् अन्य सुखके प्रति जाती है, तिसीहीं (विषय)विषै नियमसैं रहती नहीं औ आत्माविषै तौ विद्यमान प्रीति व्यभिचारकूं पावती नहीं; कहिये, अन्य विषयविषै गमन करनैंहारी होवै नहीं; यातैं सो (आत्मगत प्रीति) निरतिशय (सर्वोत्कृष्ट) है. यह अर्थ है. २५

१३०२ एकं त्यक्त्वाऽन्यदादत्ते सुखं वैषयिकं सदा। नात्मात्याज्यो नचादेयस्तस्मिन्व्यभिचरेत्कथम्२६

सुखगोचर प्रीतिके व्यभिचारकूं दिखावै हैं:- (॥ एकमिति ॥) पुरुष, एक विषयजन्य सुखकूं त्यागिके अन्य (विषयजन्य सुख)कूं सदा ग्रहण करता है ❀ आत्माविषै तौ तिस (प्रीतिके व्यभिचार)के अभावकूं दिखावै हैं:- (॥ नात्मेति ॥) आत्मा त्याज्य (त्यागनैं योग्य) नहीं है, औ उपादेय (ग्रहण करनै योग्य) नहीं है (ग्रहणत्यागके अयोग्य होनैंतैं. यह अर्थ है) ❀ फलितकूं कहै हैं:- (॥ तस्मिन्निति ॥) (यातैं) तिस (आत्मा)विषै प्रीति कैसैं व्यभिचारकूं पावै? (किसी प्रकार बी नहीं). २६

१३०३ हानादानविहीनेऽस्मिन्नुपेक्षा चेत् तृणादिवत् ।
उपेक्षितुः स्वरूपत्वान् नोपेक्ष्यत्वं निजात्मनः २७

ग्रहण औ त्यागकी विषयताके अभाव हुये बी आत्माकूं तृणआदिककी न्याई उपेक्षाकी विषयता क्यूं नहीं होवैगी? इसरीतिसैं वादी शंका करै है:- (॥ हानेति ॥) हान औ आदानतैं रहित इस (आत्मा)विषै तृणआदिककी न्याई उपेक्षा होवैगी, ऐसैं जो कहै; टीका:-हान कहिये परित्याग औ आदान कहिये स्वीकार औ उपेक्षा कहिये उदासीनता ❀ आत्माकूं ग्रहण औ त्यागका अविषय होनैकी न्याई उपेक्षाका विषय होना बी नहीं संभवै है. काहेतैं, अयोग्य होनैतैं. इस अभिप्रायकरि परिहार करै हैं:- (॥ उपेक्षितुरिति ॥) तौ उपेक्षा करनैहारेके निजात्मा (निजरूप)का स्वरूप होनैतैं उपेक्ष्यपना बनै नहीं. २७ टीका:- तौ उपेक्षा करनैहारे (चिदाभास)का जो

निजात्मा (अविनाशी स्वरूप) है, तिसका स्वस्वरूप होनैंतैंही आत्माकूं आपतैं भिन्न तृणादिककी न्याइ उपेक्ष्यपना (उपेक्षाका विषयपना) नहीं है. २७

१३०४ रोगक्रोधाभिभूतानां मुमूर्षा वीक्ष्यते क्वचित् ।
ततो द्वेषाद्भवेत्त्याज्य आत्मेति यदि तन्न हि २८

ननु, त्यागकी विषयता आत्माकूं नहीं है; ऐसैं जो (१३०३ विषे) कह्या, सो बनै नहीं. कहेतैं; द्वेषतैं आत्माकी त्याज्यताके देखनैतैं; इसरीतिसैं वादी मूलविषै शंका करै हैः– (॥ रोगेति ॥) रोग वा क्रोधकरि अभिभूत (पराभवकूं प्राप्त) पुरुषनकूं काहूकालमैं मुमूर्षा (मरनैंकी इच्छा) देखिये है; तातैं द्वेषतैं आत्मा त्याज्य होवै है, ऐसैं जब कहै; टीकाः– जातैं मरणकी इच्छा देखिये है, तातैं द्वेषके संभवतैं वृश्चिकआदिककी न्याई आत्मा बी त्याज्य होवैगा, ऐसैं जब कहै; ❀ तिस त्यागकूं आत्मातैं भिन्न देहकूं विषय करनैंहारा होनैंतैं आत्मा त्याज्य (त्यागका विषय) होवैगा, यह कथन बनै नहीं; इसरीतिसैं सिद्धांती परिहार करै हैः– (तन्न हीति ॥) सो बनै नहीं. २८

१३०५ त्यक्तुं योग्यस्य देहस्य नाऽऽत्मता त्यक्तुरेव सा ।
न त्यक्तुर्द्वेष्यस्ति स द्वेषस्त्याज्ये द्वेषे तु का क्षतिः २९

(॥ त्यक्तुमिति ॥) त्याग करनैंयोग्य देहकूं आत्मता नहीं है ❀ तब कौनकूं सो (आत्मता) है ? तहां कहै हैंः– (॥ त्यक्तुरिति ॥) त्याग करनैंहारेकूं सो (आत्मता) है. टीकाः– देहकूं त्याग करनैंहारा जो देहतैं भिन्न जीव है, ताकूं सो आत्मता है.

यह अर्थ है ❁ त्याग करनैंहारेकी आत्मता होहु, तिसकरि प्रकृत (द्वेषकरि आत्माकी अत्याज्यता) विषै क्या आया ? तहां कहै हैंः- (॥ न त्यक्तरीति ॥) सो (१३०४ उक्त) द्वेष त्याग करनैं-हारेविषै नहीं है (यातैं आत्माकी त्याज्यता नहीं है. यह अभिप्राय है) ❁ ननु, आत्माविषै द्वेष मति होहु, परंतु देह-विषै तौ द्वेष देखियेही है. यह आशंकाकरि कहै हैंः- (॥ त्याज्य इति ॥) त्याज्य (देह) विषै द्वेषके होते क्या हानि है ? २९ टीकाः- देहगोचर द्वेषके होते बी आत्माके त्यागके अभावके वादी, मेरी (वेदांतीकी) क्या हानि है. (कछू बी नहीं). २९

१३०६ आत्मार्थत्वेन सर्वस्य प्रीतेश्चाऽऽत्मा ह्यतिप्रियः।
सिद्धो यथा पुत्रमित्रात् पुत्रः प्रियतरस्तथा ३०

सो ऐसैं "अरे (मैत्रेयी) पतिके कामअर्थ (पति प्रिय नहीं होवै है)" इहांसैं आरंभकरिके "आत्माके कामअर्थ सर्व प्रिय होवै है" इहांपर्यंत जो श्रुति है, ताके तात्पर्यके विचारकरि आत्माकी प्रियतमता (परमप्रेमकी विषयता) दिखायके, अब युक्तितैं बी सो (आत्माकी प्रियतमता) दिखावै हैंः- (॥ आत्मेति ॥) सर्वका आत्माके अर्थ होनैंकरि प्रीतितैं आत्मा अतिप्रिय सिद्ध भया. टीकाः- सर्व (दुःखसहित तिसके साधनके समूह, पतिजाया आदिक) की आत्मा (आप) के अर्थ (उपकारक) होनैंकरि प्रीति (प्रियता) तैं बी आत्मा (उपकारका विषय) आप अतिशयकरि प्रिय सिद्ध भया ❁ इसीहि अर्थकूं दृष्टांतके दिखावनैंकरि स्पष्ट करै हैंः- (॥ यथेति ॥) जैसैं पुत्रके मित्रतैं पुत्र प्रियतर (अतिशयप्रिय) है, तैसैं. ३० टीकाः- लोकविषै

जैसैं पुत्रके मित्ररूप (पुत्रद्वारा प्रीतिके विषय) यज्ञदत्त आदिकतैं पुत्र (देवदत्तआदिक) अंतरायरहित (साक्षात्) प्रीतिका विषय होनैतैं, तिस (मित्र)तैं पिता (विष्णुदत्तआदिक)कूं अतिशयकरि प्रिय होवैहै. तैसैं अपनैं (आत्मा)के संबंधी होनैंकरि प्रीतिके विषय सर्वतैं आप (आत्मा) अतिशयकरि प्रिय होवै है. यह अर्थ है. ३०

१ इहां यह रहस्य है:– आत्मा, नित्यसुखरूप होनैतैं अतिअनुकूल है. यातैं अतिशय प्रिय है; यह विद्वानोंकूं अनुभवसिद्ध है. परंतु भ्रांतपुरुष जो हैं, सो तिस (स्वरूपभूत नित्यसुख)कूं न जानिके विषयलाभआदिक निमित्तसैं अंतर्मुख भये अंतःकरणविषै तिस (आत्मानंद)का प्रतिबिंबरूप विषयानंद होवै है, ताहीकूं परमसुखरूप जानिके प्रियतम मानते हैं: यातैं आनंदरूप आत्माके प्रतिबिंब ग्रहणके योग्य होनैंकरि अंतःकरण औ ताके समीपवर्त्ती इंद्रिय अरु प्राणरूप लिंगदेहका आत्मासैं साक्षात्संबंध है; यातैं सो प्रिय है. औ स्थूलदेहआदिक आत्माके प्रतिबिंबग्रहणके योग्य नहीं हैं; यातैं तिनका आत्मासैं साक्षात्संबंध नहीं है. किंतु लिंगदेहद्वारा स्थूलदेहका औ स्थूलदेहद्वारा पुत्र भार्या आदिकका औ पुत्र भार्या आदिकद्वारा पुत्रके मित्र औ अन्यसंबंधिनका आत्मासैं संबंध है; यातैं सो पूर्व पूर्वकी अपेक्षातैं न्यून औ उत्तर उत्तरकी अपेक्षातैं अधिक प्रिय हैं. यह प्रीतिके अधिकन्यूनभावका अनुभव आगे (१३३६ विषै) स्पष्ट दिखाया है. यद्यपि आनंदरूप आत्मा सर्वत्र व्यापक है, यातैं सर्वपदार्थनके आत्माके साथि तादात्म्यसंबंधके सद्भावतैं सर्वपदार्थ समानप्रिय हुये चाहिये, औ आगे (१३२७ सैं) कहनैके प्रकारकरि प्रिय द्वेष अरु उपेक्ष्य होनैंकरि विषम नहीं हुये चाहिये; तथापि सर्व (घटादिक) अस्वच्छ पदार्थ आत्माके आभासके ग्राहक नहीं हैं, यातैं आत्माके साक्षात्संबंधी नहीं कहिये हैं. किंतु स्वच्छ जो अंतःकरण है, सो आत्माके आभासका ग्राहक है; यातैं आत्माका साक्षात्संबंधी कहिये है. तिस साभासअंतःकरणविशिष्टचेतनरूप भोक्ताका उपकारक (अनुकूल) होनैंकरि जो संबंधी है, सो पदार्थ प्रिय होवै है; तिस उपकारकता (अनुकूलता)के अधिकता औ न्यूनतारूप उपाधिके भेदकरि प्रियताका भेद (असमानता) होवै है औ उपकारकताके अभावरूप प्रतिकूलताकरि वा अनुकूलता अरु प्रतिकूलता दोनूंके

१३०७ मा न भूवमहं किं तु भूयासं सर्वदेत्यसौ ।
आशीः सर्वस्य दृष्टेति प्रत्यक्षा प्रीतिरात्मनि॥३१

ऐसैं, आत्माविषै श्रुति औ युक्तिकरि उपपादन करी जो निरतिशयप्रीति, ताकूं अपनैं अनुभवके दिखावनैंकरि दृढ करैहैं:— (॥ मा न भूवमिति ॥) "मैं मत होहु" ऐसैं नहीं किंतु "मैं सर्वदा होहुं" ऐसी यह प्रार्थना सर्वकूं देखी है. टीका:— मैं मत होहूं, ऐसैं नहीं (कहूं बी मेरा असद्भाव नहीं होहु); किंतु मैं सर्वदा होहूं (सदा मेरा सद्भाव होहु;) इसरूपवाली प्रार्थना सर्व (प्राणिमात्र)कूं देखी है. सर्वजन बी ऐसैं प्रार्थना करै हैं. यह अर्थ है ❋ फलितकूं कहै हैं:— (॥ प्रत्यक्षेति ॥) यातैं आत्माविषै प्रत्यक्ष प्रीति है. ३१ टीका:— जातैं ऐसैं सर्वजनकरि प्रार्थना करियेहै, यातैं आत्माविषै निरतिशयप्रीति प्रत्यक्ष अनुभवकरि सिद्ध है. यह अर्थ है. ३१

४ आत्माकूं पुत्रादिककी शेषता (उपकारिता) पूर्वक आत्माकी त्रिविधता. १३०८–१३२६

१३०८ इत्यादिभिस्त्रिभिः प्रीतौ सिद्धायामेवमात्मनि ।
पुत्रभार्यादिशेषत्वमात्मनः कैश्चिदीरितम् ॥३२॥

अभावकरि जो आत्माका उपयोगी (संबंधी) होवै नहीं, सो पदार्थ क्रमतैं द्वेष वा उपेक्ष्य प्रतीत होवै है. इसरीतिसैं अज्ञानीकी दृष्टिकरि विषमता बनै है औ ज्ञानीकी दृष्टिसैं तौ भोक्ताआदिक त्रिपुटीरूप द्वैतके अभावपूर्वक परिपूर्ण आनंदरूप आत्मा (स्वस्वरूप)की प्रतीतितैं विषमता नहीं है; किंतु एकहीं आनंदरूप आत्मा सर्वत्र समान प्रतीत होवै है. इति.

वृत्त (१२८२–१३०७ पर्यंत कथन किये अर्थ)के अनुकीर्तन (फेरी कथन) पूर्वक, मतांतर (आत्मा, पुत्र भार्या आदिकका शेष है, इस मत)कूं दूषण देनैंकूं अनुवाद करै हैं:– (॥ इत्यादिभिरिति ॥) इस आदिक तीन (प्रमाणन)करि ऐसैं आत्माविषै प्रीतिके सिद्ध हुये बी, कितनैक पुरुषोनैं तौ आत्माकूं पुत्र भार्या आदिककी शेषता (गौणता) कही है. ३२ टीका:– इहां इति (इस) शब्दकरि, (१३०७ उक्त) अनुभवग्रहण करिये है औ आदिशब्द करि (१३०६ उक्त) युक्ति औ (१२८२–१२९५ उक्त) श्रुति ग्रहण करिये हैं; यातैं इस आदिक (अनुभव, युक्ति औ श्रुतिरूप) तीनप्रमाणनकरि, ऐसैं (उक्तप्रकारसैं) आत्माविषै प्रीतिके सिद्ध हुये बी कोइक (श्रुतिआदिकके तात्पर्यकूं न जाननैंहारे) पुरुषोनैं आत्माकूं भार्याआदिककी शेषता; कहिये, पुत्रादिकनके प्रति आपकी उपसर्जनता (अप्रधानता) कही है. ३२

१३०९ एतद्विवक्षया पुत्रे मुख्यात्मत्वं श्रुतीरितम्।
आत्मा वै पुत्रनामेति तच्चोपनिषदि स्फुटम्॥३३॥

आत्माकी पुत्रआदिकके प्रति शेषता (अमुख्यता) है, ऐसैं केइकनैं कह्या है, यह तुमनैं काहेतैं जान्या? तहां कहे हैं:– (॥ एतदिति ॥) इस कहनैंकी इच्छाकरिहीं पुत्रविषै मुख्यआत्मापना, "आत्मा, पुत्र नामवाला होता भया" इस श्रुतिनैं कह्या है. ऐसैं उपनिषद्‌विषै स्पष्ट है. ३३ टीका:– इस कहनैंकी इच्छाकरिहीं; कहिये, ऐसैं कोइक पुरुषनकरि कहिये है. इस वार्त्ताके प्रगट करनैंके अभिप्रायकरि "आत्मा;

पुत्र नामवाला होता भया" इस श्रुतिनैं पुत्रका मुख्यआत्मापना कह्या है. यह अर्थ है. किंवा, सो (पुत्रका मुख्यआत्मापना) ऐतरेयउपनिषद्आदिकविषै स्पष्ट (प्रगट) कीया है.३३

१३१० सोऽस्यायमात्मा पुण्येभ्यः कर्मभ्यः प्रतिधीयते।
अथास्येतर आत्माऽयं कृतकृत्यः प्रमीयते॥३४॥

ऐतरेयउपनिषद्विषै पुत्रका मुख्यआत्मापना किस वाक्यकरि कह्या है? इस पूछनैंकी इच्छाके भये तिस वाक्यकूं अर्थतैं पठन करै हैंः– (॥ सोऽस्येति ॥) इस (पिता)का सो यह (पुत्ररूप) आत्मा, पुण्यकर्मनकेअर्थ प्रतिनिधि (बदला) करिये है औ पीछे इस (पिता)का यह इतर (पितारूप) आत्मा कृतकृत्य हुया मरता है. ३४ टीकाः– इस पिताका सो यह "पुरुष (पिता)विषै यह (जीव) प्रथमतैं गर्भ (वीर्यरूप) होवै है" इस श्रुतिकरि प्रकरणकी आदिमैं पुरुष (पिता)के देहविषै जो गर्भपनैंकरि कथन किया है औ "सो यह (पिता) पुत्रके जन्मसैं आगे औ जन्मसैं अनंतर कुमार (पुत्र)कूं अधिकभावना (पालना) करता है" इस श्रुतिवाक्यविषै अतिशयकरि पालन करनैंके योग्य होनैकरि जो कथन किया है, ऐसा जो पुत्ररूप आत्मा, सो पिताकरि पुण्यकर्मनकेअर्थ (पुण्यकर्मके अनुष्ठान वास्ते) प्रतिनिधि (बदला) होनैंकरि स्थापन करिये है (एकपदार्थके अभाव हुये तिसके ठिकानैं जो दूसरापदार्थ स्थापन करिये, सो प्रतिनिधि कहिये है). अनंतर (पुत्रके प्रतिनिधिपनैंकरि स्थापन किये पीछे), इस पिताका यह (प्रत्यक्षकरि, दृश्यमान) इतर (पुत्रतैं अन्य) जराअवस्थाकरि ग्रस्या हुया जो

पितारूप आत्मा है, सो आप कृतकृत्य; कहिये, अनुष्ठान किया है कार्यनका समूह जिसनैं, ऐसा हुया मरता है. यह अर्थ है. ३४

१३११ सत्यप्यात्मनि लोकोऽस्ति नापुत्रस्यात एव हि।
अनुशिष्टं पुत्रमेव लोक्यमाहुर्मनीषिणः ॥ ३५ ॥

(१३०८–१३१०) उक्त अर्थके दृढ करनैंअर्थ पुत्ररहितकूं परलोकके अभावके दिखावनैं परायण, "अपुत्र (पुत्ररहित)कूं लोक नहीं है" इस वाक्यके अर्थकूं कहै हैं:– (॥ सत्यपीति ॥) याहीतैं आत्मा (आप)के होते बी अपुत्रकूं लोक नहीं है. टीकाः– जातैं पुत्रकी मुख्यआत्मता है, याहीतैं आत्मा (आप)के स्थित हुये बी अपुत्र (पुत्ररहित पिता)कूं परलोक नहीं है; यह पुराणआदिकविषै प्रसिद्ध है. यह अर्थ है ❀ व्यतिरेकरूप मुख (द्वार)करि कथन किये अर्थके अन्वयरूप मुखकरि प्रतिपादक "अनुशिष्ट (शिक्षित) पुत्रकूं लोक्य कहते हैं" इस श्रुतिवाक्यके अर्थकूं कहै हैं:– (॥ अनुशिष्टमिति ॥) मनीषी (पंडितजन), अनुशिष्ट पुत्रकूंहीं लोक्य कहते हैं. ३५ टीकाः– मनीषी (शास्त्रअर्थके अभिज्ञजन) जो हैं, सो अनुशिष्ट (१३१२ विषै) आगे कहनैंके "तूं ब्रह्म है" इत्यादिक वेदके मंत्रनकरि शिक्षाकूं प्राप्त भये पुत्रकूं लोक्य; कहिये परलोकअर्थ हितरूप (परलोकका साधन) कहते हैं. यह अर्थ है. ३५

१३१२ मनुष्यलोको जय्यः स्यात् पुत्रेणैवेतरेण नो।
मुमूर्षुर्मंत्रयेत् पुत्रं त्वं ब्रह्मेत्यादिमंत्रकैः ॥ ३६ ॥

अब इसलोकके सुखकूं बी पुत्ररूप कारणवान्‌ताके प्रतिपादनपरायण जो "सो यह मनुष्यलोक पुत्रकरिहीं जय्य

(संपाद्य) है, अन्य कर्मकरि नहीं" यह श्रुतिवाक्य है; तिसके अर्थकूं पठन करै हैं:- (॥ मनुष्यलोक इति ॥) मनुष्यलोक, पुत्रकरिहीं जय्य (संपाद्य) है, इतर (अन्यकर्म)-करि नहीं. टीकाः- मनुष्यलोकका सुख, पुत्रकरिहीं संपादन करनैंकूं योग्य होवै है; कर्मआदिक अन्यसाधनकरि नहीं. पुत्ररहितकूं धनआदिकरूप सुखका साधन बी निर्वेद (वैराग्य)का जनक होवै है. यह भाव है ॥ "अनुशिष्ट (शिक्षित) पुत्रकूं लोक्य (परलोकका साधन) कहते हैं" इस वाक्यविषै पुत्रका अनुशासन (शिक्षा करना) औ तिस (शिक्षा)के मंत्रनकूं दिखावै हैं:- (॥ सुमूर्षुरिति ॥) "तूं ब्रह्मा है" इत्यादिक मंत्रनकरि मरनैंहारा पिता पुत्रकूं मंत्रण (शिक्षा) करै. ३६ टीकाः- "तूं ब्रह्मा है" यह एक मंत्र है. औ आदि शब्दकरि "तूं यज्ञ है" "तूं लोक है" ये दो मंत्र ग्रहण करिये हैं. यातैं "तूं ब्रह्मा है" इससैं आदिलेके जो तीनमंत्र हैं, तिनकरि मरनैंहारा पिता, मरणअवसरविषै पुत्रकूं मंत्रण (अनुशासन) करै. यह अर्थ है. ३६

१३१३ इत्यादिश्रुतयः प्राहुः पुत्रभार्यादिशेषताम् ।
लौकिका अपि पुत्रस्य प्राधान्यमनुमन्वते ॥३७॥

(१३०८सैं) उक्त अर्थकूं सूचन करै हैं:- (॥ इत्यादीति ॥) इत्यादिक श्रुतियां, (आत्माकी) पुत्र भार्या आदिक (धन)के प्रति शेषता (अप्रधानता) कहै हैं ॥ यह अर्थ केवल श्रुतिकरि सिद्ध नहीं है, किंतु लोकप्रसिद्ध बी है; ऐसैं कहै हैं.-

(॥ लौकिका इति ॥) लौकिकजन बी पुत्रकी प्रधानता मानते हैं. ३७

१३१४ स्वस्मिन् मृतेऽपि पुत्रादिर्जीवेद् वित्तादिना यथा।
तथैव यत्नं कुरुते मुख्याः पुत्रादयस्ततः ॥ ३८ ॥

तिसी (पुत्रादिककी प्रधानता)कूंहीं उपपादन करे हैं. (॥ स्वस्मिन्निति ॥) आप (पिताआदिक)के मृत (मरणकूं प्राप्त) हुये बी पुत्रआदिक जैसें वित्त (धन)आदिककरि जीवै तैसैंहीं यत्नकूं करता है. टीकाः- मूलविषै पुत्रआदिक औ वित्तआदिक, ये दो आदि शब्द हैं, तिनमैं एक (प्रथम) आदिशब्दकरि भार्याआदिक ग्रहण करिये हैं औ दूसरे आदि शब्दकरि क्षेत्रआदिक ग्रहण करिये हैं ❀ फलितकूं कहै हैंः-(॥ मुख्या इति ॥) तातैं पुत्रादिक मुख्य हैं. ३८ टीकाः- जातैं पुरुष, अपनें प्रयास (श्रम)कूं सहन करिके बी पुत्रादिकके जीवनके उपाय (धनादिक)कूं संपादन करता है, तातैं पुत्रआदिक मुख्य (प्रधानरूप) हैं. यह अर्थ है ३८.

१३१५ बाढमेतावता नाऽत्मा शेषो भवति कस्य चित् ।
गौणमिथ्यामुख्यभेदैरात्माऽयं भवति त्रिधा ३९

(१३०८सैं) उक्त प्रकारसैं, ऐसैं वेद औ लोक दोनूंकी प्रसिद्धिकरि दिखाई जो पुत्रआदिककी प्रधानता, ताकूं सिद्धांती अंगीकार करे हैंः- (॥ बाढमिति ॥) (हे वादी, तेनैं जो पुत्रादिककी प्रधानता कही) सो सत्य है ❀ ननु, (तुमनैं जब पुत्रादिककी प्रधानता मानी), तब आतमा (साक्षी)के शेषी

(मुख्य)पनैंका जो प्रतिपादन है, सो विरोधकूं पावेगा. यह आशंकाकरि कहै हैंः- (॥ एतावतेति ॥) इतनैंकरि आत्मा किसीका बी शेष (उपकारक) होवै नहीं. टीकाः- पुत्रआदिककी काहुस्थलमैं प्रधानता है, इतनैं कहनैंकरि आत्माकी शेषता (गौणता) नहीं होवै है ❀ ननु, प्रतिज्ञामात्रकरि अर्थकी सिद्धि होवै नहीं. यह आशंकाकरि, जिस जिस व्यवहारविषै जिस जिसका आत्मापन्ना कहनैंकूं इच्छित होवै है, तिस तिस आत्माकी तहां तहां प्रधानता है, यह दिखावनैंकूं उपोद्घातरूप होनैंकरि आत्माकी त्रिविधताकूं कहै हैंः- (॥ गौणेति ॥) गौण, मिथ्या औ मुख्यभेदकरि यह आत्मा तीनप्रकारका होवै है. ३९ टीकाः- गौणआत्मा, मिथ्याआत्मा औ मुख्यआत्मा; इस भेदकरि यह आत्मा तीनप्रकारका होवै है. ३९

१३१६ देवदत्तस्तु सिंहोऽयमित्यैक्यं गौणमेंतयोः ॥
भेदस्य भासमानत्वात् पुंत्रादेरात्मता तथा॥४०॥

तिन (तीनभांतिके आत्मा)विषै पुत्रादिककी गौणआत्मताके दिखावनैंअर्थ, लोकविषै गौण (गुणवृत्तिकरि किये) प्रयोग (उच्चारण)कूं उदाहरण करै हैंः-(॥ देवदत्त इति ॥) "यह देवदत्त सिंह है" यह एकता जैसैं गौण (गुणकरि) है. टीकाः- "यह देवदत्त (अमुकपुरुष) सिंह है" इस वाक्यविषै देवदत्त (पुरुष) औ सिंह (पशु)की एकता (अभेद) जैसैं गौण (औपचारिक) है; कहिये, गुणवृत्तिकरि किया (आरोपित) है, (वास्तविक नहीं) ❀ तिसविषै हेतुकूं कहै हैंः- (॥एतयोरिति॥) इन (देवदत्त औ सिंह, दोनूं)के भेदकूं समान होनैंतैं ❀ दृष्टां-

तकरि उक्तअर्थकूं दार्ष्टांतविषै जोडते हैंः– (॥ पुत्रादेरिति ॥) तैसैं पुत्रआदिककी आत्मता (गौण) है. ४०

१३१७ भेदोऽस्ति पंचकोशेषु साक्षिणो न तु भात्यसौ ।
मिथ्यात्मतातःकोशानां*स्थाणोश्चोरात्मतायथा ४१

अब मिथ्याआत्माकूं दिखावै हैंः– (॥ भेद इति ॥) पंचकोशनविषै साक्षीतैं भेद है, तौ बी यह (भेद) भासता नहीं; यातैं पंचकोशनकी मिथ्याआत्मता है. टीकाः– आनंदमयसैं आदिलेके अन्नमयपर्यंत जो पंचकोश हैं, तिनविषै साक्षीतैं भेद विद्यमान है, तौ बी भासता नहीं; यातैं तिन (पंचकोशन)की मिथ्याआत्मरूपता है. यह अर्थ है ❀ कोशनकी मिथ्याआत्मताविषै दृष्टांत कहै हैंः– (॥ स्थाणोरिति ॥)

१ जैसैं शब्दकी शक्तिवृत्ति (मुख्यावृत्ति) औ लक्षणावृत्ति हैं, तैसैं तीसरी गुणवृत्ति (गौणीवृत्ति) बी है. औ जैसैं शक्तिवृत्तिसैं बोधन किये अर्थकूं शक्यार्थ, मुख्यार्थ औ वाच्यार्थ कहै हैं अरु लक्षणावृत्तिसैं बोधन किये अर्थकूं लक्ष्यार्थ कहै हैं; तैसैं गुणवृत्तिसैं बोधन किये अर्थकूं गौणअर्थ कहै हैं. पदके वाच्यअर्थमैं जो गुण होवै तिस गुणवाले अवाच्यअर्थविषै जो पदकी वृत्ति (संबंध), सो गौणीवृत्ति कहिये है. जैसैं "सिंहो देवदत्तः (अमुक पुरुष सिंह है)" इस वाक्यविषै सिंह शब्दका वाच्यअर्थ जो सिंहपशु, तामैं जो शूरता औ क्रूरता आदिक गुण हैं, तिसवाले सिंहपदके अवाच्यअर्थविषै सिंहपदकी गौणीवृत्ति है. ऐसैं आत्मपदका वास्तववाच्यअर्थ तौ साक्षी है, यातैं साक्षी मुख्यआत्मा कहिये है; परंतु साक्षीविषै आरोपित होनैंकरि आत्मपदका मिथ्यावाच्यअर्थ संघात बी है, तिस संघातमैं जो इसलोकसंबंधी औ परलोकसंबंधी कर्मविषै प्रवृत्तिरूप गुण हैं, तिस गुणवाले आत्मा पदके अवाच्य पुत्रादिकविषै आत्मापदकी गौणीवृत्ति है, तिस गौणीवृत्तिकरि बोधन किया जो पुत्रादिरूप अर्थ, सो गौणआत्मा कहिये है.

जैसैं स्थाणुकी चोरता है (तैसैं) ४१ टीकाः— वास्तवपनैं-करि चोरतैं भिन्न स्थाणुकी चोररूपता जैसैं मिथ्या है, तैसैं (पंचकोशनकी आत्मरूपता मिथ्या है). यह अर्थ है. ४१

१३१८ न भाति भेदो नाप्यस्ति साक्षिणोऽप्रतियोगिनः
सर्वांतरत्वात् तस्यैव मुख्यमात्मत्वमिष्यते ॥ ४२

ऐसैं गौणआत्मा औ मिथ्याआत्माकूं कहिके, अब साक्षी (प्रत्यगात्मा)की मुख्यआत्मताकूं उपपादन करे हैं:— (॥ न भातीति ॥) साक्षीका (किसीतैं बी) भेद नहीं भासता है औ नहीं है. टीकाः— साक्षीरूप आत्माका गौणआत्मा (पुत्रादिक)की न्याई किसीतैं बी भेद नहीं भासता है औ मिथ्याआत्मा (देहादिक)-की न्याई (भेद) नहीं बी है ❁ तिन दोनूंठिकानैं हेतु कहे हैं:— (॥ अप्रतियोगिन इति ॥) (सो साक्षी कैसा है?) अप्रतियोगी (आपतैं भिन्न वास्तववस्तुसैं रहित) है टीकाः—इहां अप्रतियोगी, यह हेतुगर्भित (हेतु है भीतर जिसके, ऐसा) विशेषण है, यातैं प्रतियोगीसैं रहित होनैंतैं (साक्षीका भेद नहीं भासता है औ नहीं है). जैसैं पुत्रादिकका औ देहादिकका बी आप (साक्षी) प्रतियोगी विद्यमान है, ऐसैं आपका वास्तवरूप कोई बी प्रतियोगी नहीं है. काहेतैं, देहादिक सर्वकूं बी आरोपित होनैतैं. यह भाव है ❁ ननु भेदके अभाव(रूप हेतु)करि साक्षीका गौणपना औ मिथ्यापना मति होहु, परंतु मुख्यआत्मापना काहेतैं है? तहां कहै हैं:— (॥ सर्वेति ॥) सर्वांतर होनैतैं तिसी (साक्षी)कीहीं आत्मता मुख्य अंगीकार करिये है. ४२ टीकाः— सर्व देह (पुत्रादिक)तैं आंतर (भीतर) होनैंतैं सर्वके साक्षी प्रत्यक्कूं सर्वांतर

होनैंकरि प्रतीयमान होनैंतैं तिसी (साक्षी)काहीं आत्मापना मुख्य (अनारोपित) अंगीकार करिये है. यह अर्थ है. इहां यह अनुमान सूचन किया है:– विवादका विषय जो साक्षी, सो मुख्यआत्मा होनैकूं योग्य है, सर्वके आंतर होनैतैं; जो मुख्यआत्मा होवै नहीं सो सर्वांतर बी नहीं होवै है, जैसैं अहंकारादिक हैं. यह केवलव्यतिरेकीअनुमान है. ४२

१३१९ सत्येवं व्यवहारेषु येषु यस्याऽऽत्मतोचिता ।
तेषु तस्यैव शेषित्वं सर्वस्यान्यस्य शेषता ॥४३॥

आत्माकी त्रिविधता होहु, इसकरि पुत्रादिककी शेषिता (मुख्यता)के कथनविषै क्या प्राप्त भया? तहां कहै हैं:–(॥ सत्येवमिति ॥) ऐसैं हुये जिन व्यवहारनविषै जिसकी आत्मता उचित होवै, तिन (व्यवहारन)विषै तिसीहींकी शेषिता (मुख्यता) है. ४३ टीकाः– ऐसैं (आत्माकी त्रिविधताके) हुये बी जिन लौकिक वैदिकरूप पालन पोषण औ ब्रह्मकी आत्मरूपताके अनुसंधानआदिक व्यवहारनके भेदनविषै जिस पुत्रादिककी वा देहादिककी वा साक्षीकी आत्मता उचित (योग्य) होवैहै; तिन (व्यवहारके भेदन)विषै तिस पुत्रादिककी वा देहादिककी वा साक्षीकी शेषिता (प्रधानता) होवै है औ तिसतैं भिन्न सर्वकी शेषता; कहिये उपसर्जनता (अप्रधानता) होवै है. ४३

१३२० मुमूर्षोर्गृहरक्षाऽऽदौ गौणाऽऽत्मैवोपयुज्यते ।
नमुख्यात्मा नमिथ्यात्मा पुत्रः शेषीभवत्यतः ४४

इस (१३१९ उक्त अर्थ)कूंहीं पांचश्लोककरि वर्णन करैहैं:– (॥ मुमूर्षोरिति ॥) मरणइच्छु पुरुषकूं गृहरक्षाआदिकविषै

गौणआत्मा (पुत्र) हीं उपयोगकूं पावता है, मुख्यआत्मा (साक्षी) नहीं औ मिथ्याआत्मा (देहादिक बी) नहीं. टीकाः– गृहकी रक्षाआदिक कर्मविशेषविषै गौणआत्मा (पुत्रभार्यादिरूप) हीं उपयोगी होवै है. काहेतें, पुत्रादिककूं पीछलेकालविषै जीवनैंकी इच्छावाला होनैतें. यह अर्थ है. औ मुख्यआत्मा जो साक्षी, सो उपयोगी नहीं है; काहेतें, ताकूं अविकारी होनैतें. औ मिथ्याआत्मा जो देहादिक सो बी उपयोगी नहीं है. काहेतें ताकूं मरणके सन्मुख होनैतें. यह भाव है ❀ फलितकूं कहे हैंः– (॥ पुत्र इति ॥) यातें (तहां) पुत्र शेषी (प्रधान) है. ४४

१३२१ अध्येता वन्हिरित्यत्र सन्नप्यग्निर्न गृह्यते ।
अयोग्यत्वेन योग्यत्वाद् बटुरेवात्र गृह्यते ॥४५॥

उक्त ग्रहरक्षाआदिक व्यवहारविषै आप (पिताआदिक) के होते बी पुत्रके स्वीकारविषै दृष्टांत कहे हैंः– (॥ अध्येतेति ॥) "यह अध्येता अग्नि है" इस वाक्यविषै विद्यमान हुया बी अग्नि अयोग्य होनैंकरि नहीं ग्रहण करिये है; (किंतु) इहां योग्य होनैतें बटुहीं ग्रहण करिये है. ४५ टीकाः– "यह अध्ययनकर्त्ता अग्नि है" इस प्रयोग (वाक्यके उच्चारण)-विषै स्वरूपकरि विद्यमान हुया बी अग्नि, अग्नि शब्दका अर्थ होनैंकरि नहीं ग्रहण करिये है. काहेतें, तिस (अग्नि) कूं अध्येता (अध्ययनकर्त्ता) पनैंकी अयोग्यतातैं; किंतु अध्येता होनैंविषै योग्य जो बटु (माणवक); कहिये, विद्यार्थीबालकहीं इस प्रयोगविषै अग्नि शब्दका अर्थ होनैंकरि ग्रहण करिये है. काहेतें, ताकूं अध्ययनकर्त्ता होनैंविषै योग्य होनैतें. यह अर्थ है. ४५

१३२२ कृशोऽहं पुष्टिमाप्स्यामीत्यादौ देहाऽत्मतोचिता।
न पुत्रं विनियुंक्तेऽत्र पुष्टिहेत्वन्नभक्षणे ॥ ४६ ॥

ऐसैं गौणआत्मा (पुत्रादिक)की प्रधानताके स्थलकूं उदाहरण करिके, अब मिथ्याआत्माकी प्रधानताके स्थलकूं उदाहरण करै हैं:– (॥ कृश इति ॥) "मैं कृश भया हूं, पुष्टिकूं पावोंगा" इत्यादिक (स्थल)विषै देहकी आत्मता उचित है. टीकाः– "मैं कृश भया हूं, यातैं पुष्टिकूं संपादन करूंगा" इस आदिक लोकव्यवहारविषै अन्नभक्षणके योग्य देहकीहीं आत्मरूपता ग्रहण करनैकूं योग्य है ❀ उक्तअर्थकूं लोकव्यवहारके दिखावनैंकरि दृढ करै हैं:– (॥ न पुत्रमिति ॥) इहां पुष्टिके हेतु अन्न (पाक-आदिक)के भक्षणविषै पुत्रकूं जोडता नहीं (यातैं देह मुख्य है). ४६

१३२३ तपसा स्वर्गमेष्यामीत्यादौ कर्त्तात्मतोचिता।
अनपेक्ष्य वपुर्भोगं चरेत् कृच्छ्राऽऽदिकं ततः ४७

किंवा (और बी कहै हैं:–) (॥ तपसेति ॥) "मैं तपकरि स्वर्गकूं पावोंगा" इत्यादिक (स्थल)विषै कर्त्ताकी आत्मता उचित है. टीकाः– जब पुरुष "मैं तपकूं करिके स्वर्गकूं संपादन करुंगा" इस आदिक व्यवहारकूं करता है, तब कर्त्ताशब्दके वाच्य विज्ञानमयकोशकीहीं आत्मरूपता उचित है, देहादिककी नहीं. यह अर्थ है ❀ तिसीहींकूं उपपादन (हेतुपूर्वक कथन) करै हैं:– (॥ अनपेक्ष्येति ॥) तातैं देहके भोगकी अपेक्षा (इच्छा) न करिके कृच्छ्रआदिक (तप)कूं आच-

रता है. ४७ टीकाः– जातैं देहकी आत्मता उचित नहीं है, तातैं पुरुष देहके भोगके परित्यागपूर्वक कर्त्ता (विज्ञानमय)के उपकारक (स्वर्गप्रापक) कृच्छ्रचांद्रायणआदिकरूप तपकूं आचरता है. यह अर्थ है. ४७

---

१ द्वादशदिवसनकरि साध्य जो व्रत, सो कृच्छ्र कहिये है. सो पादकृच्छ्र, प्राजापत्यकृच्छ्र, अर्धकृच्छ्र, पादोनकृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, कृच्छ्रातिकृच्छ्र, सांतपनकृच्छ्र, महासांतपनकृच्छ्र, यतिसांतपनकृच्छ्र, तप्तकृच्छ्र, शीतकृच्छ्र, औ पराककृच्छ्र भेदतैं द्वादश [१२] प्रकारका है. तिनके ये स्वरूप हैं:–प्रथम दिनविषै मध्यान्हकालमैं एकवार हविष्य अन्नके षड्विंशति [२६] ग्रास लेनैं, द्वितीयदिनविषै रात्रिमैं षड्विंशति ग्रास लेनैं, तृतीयदिनविषै अयाचित (विना मागे) अन्नके चतुर्विंशति [२४] ग्रास लेनैं औ चतुर्थदिनविषै भोजन न करना; यह पादकृच्छ्र है [१]; किसी प्रकारसैं बी त्रिगुण किया हुया यहहीं, प्राजापत्यकृच्छ्र है [२]; दो दिन एकवार भोजन, दो दिन रात्रिभोजन, दो दिन अयाचित भोजन, दो दिन उपवास करना; यह अर्धकृच्छ्र है. यद्वा तीनदिन अयाचित भोजन औ तीनदिन उपवास, यह अर्धकृच्छ्र है [३]; एकवार भोजन, रात्रिभोजन, अयाचित भोजन, औ उपवास; ऐसैं कोई बी प्रकारसैं त्रिगुण किये, इनकरि पादोनकृच्छ्र होवै है [४]; इन नवदिनविषै भोजनकी प्राप्ति होवै है, तिस ग्रासके नियमकूं छोडिके हस्तविषै पूर्ण भये अन्नके भोजन किये, अतिकृच्छ्र होवै है [५]; एकग्रासपरिमित वा प्राणधारणपरिमित दुग्धका एकविंशति दिनविषै भक्षण किये कृच्छ्रातिकृच्छ्र होवै है [६]; एकदिनविषै कुश (दर्भ) औ जलकरि मिलित पंचगव्य (गौका दुग्ध, दधि, घृत, मूत्र औ गोबर)का भोजन औ एकदिनविषै उपवास; यह दो रात्रिका सांतपनकृच्छ्र है [७]; पंचगव्य औ कुशजल, इनका न्यारे न्यारे एकदिनविषै भोजन औ एक उपवास; यह सप्तदिनकरि साध्य, महासांतपनकृच्छ्र है [८]; तीनदिन मिलित पंचगव्यके भोजन किये यतिसांतपनकृच्छ्र होवै है [९]; तप्तघृत, दुग्ध औ जल, इन एकएकका तीनदिन पान औ तीनउपवास, यह तप्तकृच्छ्र है. यद्वा- तप्तघृतआदिकनका एक एक दिन भोजन औ एक उपवास, यह च्यारीदिनकरि साध्य तप्तकृच्छ्र है [१०]; शीतघृतआदिकनके पान किये शीतकृच्छ्र होवै है [११]; द्वादशदिन उपवासकरि पराककृच्छ्र होवै है

१३२४ मोक्ष्येऽहमित्यत्र युक्तं चिदात्मत्वं तदा पुमान्।
तद्वेत्तिगुरुशास्त्राभ्यां नतु किंचिच्चिकीर्षति ४८

किंवा (मुख्यआत्माके स्थलकूं उदाहरण करै हैं:–) (॥मोक्ष्येऽहमिति ॥) जब पुरुष "मैं मोक्षकूं पावोंगा (ऐसी मतिकूं करता है), तब गुरु औ शास्त्रकरि तिस (ब्रह्मचेतन)कूं जानता है, अन्य किंचित् (कर्मादिक)कूं करनैकूं इच्छता नहीं" इहां (इस व्यवहारविषै) शुद्धचेतनकी आत्मता युक्त है. ४८ टीका:– जब पुरुष "शमआदिक (साधन)कूं संपादन करिके मैं मुक्तिकूं पावोंगा" ऐसी बुद्धिकूं करता है, तब गुरु औ शास्त्रकरि; कहिये, आचार्यकरि उपदेश किये महावाक्यके अर्थ (ब्रह्म आत्माकी एकता)के विचारसैं जन्य अपरोक्षज्ञान-

---

[१२]; ऐसैं कृच्छ्र कह्या. औ आदिपदकरि चांद्रायण आदिकनका ग्रहण है:– यवमध्य औ पिपीलिकामध्य भेदसैं चांद्रायण दो भांतिका है. शुक्लपक्षमैं प्रतिपद आदिक तिथिनविषै मयूर (मोर)पक्षीके अंडसमान एक एक ग्रासकूं बढावना, ऐसैं पूर्णमासीके दिन पंचदशग्रास औ तिथिके क्षय भये चतुर्दश औ तिथिकी वृद्धि भये षोडशग्रास होवै हैं औ कृष्णपक्षमैं एक एक ग्रासके घटावनैंकरि अमावासीके दिन उपवास होवै है. यह मासकरि साध्य यवमध्य संज्ञक चांद्रायण है. औ कृष्णपक्षमैं प्रतिपदके दिन चतुर्दशग्रासनकूं भोजनकरिके एक एक ग्रासके घटावनैंकरि अमावासीके दिन उपवास औ शुक्लपक्षमैं एक एक ग्रासकी वृद्धि, ऐसैं कृष्णपक्षसैं आदिलेके शुक्लपक्षपर्यंत पिपीलिकामध्य संज्ञक चांद्रायण है. इत्यादिक जो पापकी निवृत्तिअर्थ वेदनैं विधान किये प्रायश्चित्त कर्म हैं सो तप कहिये है. धर्मशास्त्रके अनेकग्रंथनविषै प्रायश्चित्त प्रकरणमैं इनका सविस्तर वर्णन किया है. यद्यपि सो सकामकूं स्वर्गादिक फलके हेतु हैं; तथापि निष्कामपुरुषकूं चित्तशुद्धिके हेतु हैं; यातैं वेदांतके ग्रंथनविषै बी अनेकस्थलमैं इनका तप शब्दकरि कथन किया है. यातैं उपयोगी जानीके इहां प्रसंगसैं जनाया है. इति.

करि मैं कर्त्ताआदिरूप नहीं हूं; किंतु सच्चिदानंदरूप ब्रह्म मैं हूं; ऐसैं चिदात्माकूं पावता है" इस व्यवहारविषै तिस (साक्षी)-की चिदात्मता (शुद्धचेतनरूपता)हीं उचित है, परंतु तहां कर्त्ता (विज्ञानमय) आदिकरूपता (उचित) नहीं है. यह अर्थ है. "सत्य, ज्ञान, अनंत; ब्रह्म है" औ "विज्ञान आनंद ब्रह्म है" औ "अनंतर (अंतररहित), अबाह्य (बाह्यरहित), संपूर्ण, प्रज्ञानघन (अतिशयज्ञानरूप); (आत्मा) है" इत्यादिक श्रुतिनतैं (आत्माकी ब्रह्मरूपता है). ४८

१३२५ विप्रक्षत्राऽऽदयो यद्वद् बृहस्पतिसवाऽऽदिषु। व्यवस्थितास्तथाऽगौणमिथ्यामुख्यायथोचितम् ४९

उदाहरण किये तीनप्रकारके आत्माकी व्यवहारके भेदनविषै जो व्यवस्थाकरि प्रधानता है, तिसविषै दृष्टांत कहे हैंः– (॥ विप्रेति ॥) जैसैं विप्र क्षात्रिय आदिक बृहस्पतिसव (याग)आदिकविषै व्यवस्थाकूं प्राप्त हैं; तैसैं गौण, मिथ्या, औ मुख्यरूप(आत्माकी बी) यथायोग्य (प्रधानता)है.४९

टीकाः– जैसैं "ब्राह्मण, बृहस्पति (नामक) सव (याग)करि यजन करै" इस वाक्यकरि इहां (बृहस्पतिसवविषै) ब्राह्मणकूं-हीं अधिकार है, क्षत्रिय औ वैश्यकूं नहीं. औ "राजा, राजसूय (नामक याग)करि यजन करै" इहां राजाकूंहीं अधिकार है, ब्राह्मण औ वैश्यकूं नहीं. औ "वैश्य, वैश्यस्तोम (नामक याग)करि यजे" इहां वैश्यकूंहीं अधिकार है, इतर (ब्राह्मण औ क्षत्रिय)कूं नहीं. ऐसैं गौण, मिथ्या, औ मुख्य; इस भेदवाले आत्माकी यथायोग्य (अपनेकूं उचित व्यवहारविषै) प्रधानता है. यह भाव है. ४९

१३२६ तत्र तत्रोचिते प्रीतिरात्मन्येवातिशायिनी।
अनात्मनि तु तच्छेषे प्रीतिरन्यत्र नोभयम् ॥५०

फलितकूं कहै हैं:– (॥ तत्र तत्रेति ॥) तिस तिस (व्यवहार)विषै उचित आत्माविषैहीं अतिशय प्रीति है औ तिस (आत्मा)के शेष (उपकारक) अनात्माविषै तौ प्रीति है औ अन्य (वस्तु)विषै दोनूं नहीं हैं. ५० टीका:– जिस व्यवहारविषै जो जो आत्मा योग्य होवै है, तिस तिस व्यवहारमैं उचित (उपयोगी होनैंकरि प्रधानभूत) आत्माविषैहीं अतिशयतावाली प्रीति है औ तिस (आत्मा)के शेष (भोग्य)रूप अनात्मा (आत्मातैं भिन्न वस्तु)विषै प्रीतिमात्र है, निरतिशयप्रेम नहीं है. यह अर्थ है. औ आत्मा अरु तिसके शेष, इन दोनूंतैं अन्य (न्यारे वस्तुन)विषै दोनूंप्रकारका बी प्रेम नहीं है. यह अर्थ है. ५०

१ इहां यह अभिप्राय है:– जो वस्तु इच्छाका विषय होवै, सो अनुकूल कहिये है. सुख, औ दुःखके अभाव अरु तिनके साधनकीहीं इच्छा होवै है, अन्यकी नहीं. तातैं सुख औ दुःखाभाव औ इन दोनूंके साधन (उपयोगी वस्तु) ये च्यारी अनुकूल हैं; परंतु तिनमैं इतना भेद है:– आत्मा, जातैं नित्य निरतिशयसुख औ दुःखाभावरूप है; यातैं अनुकूलतम (अतिशयतैं बी अतिशय अनुकूल) है, याहीतैं परमप्रेमका विषय होनैतैं प्रियतम है. औ इसलोक परलोकके विषयसैं जन्य सुख जातैं अनित्य औ सातिशयआदिक अनंत दुःखकारि ग्रस्त है, यातैं अनुकूलतर (अतिशय अनुकूल) है. याहीतैं साधनकी अपेक्षातैं अधिक प्रीतिका विषय होनैतैं प्रियतर है. औ सुख अरु दुःख अभावके साधन जातैं स्वरूपतैं सुख वा दुःखके अभावरूप नहीं हैं; किंतु तिनकी उत्पत्ति वा आविर्भावमैं उपयोगी हैं; यातैं अनुकूल हैं, याहीतैं प्रीतिमात्रके विषय होनैतैं प्रिय हैं. औ इन च्यारीतैं भिन्न वस्तु इच्छाके विषय नहीं, यातैं अनुकूल नहीं; किंतु अनुकूलप्रतिकूलतैं भिन्न औ प्रतिकूल हैं. याहीतैं प्रीतिके अविषय होनैकरि प्रिय नहीं हैं; किंतु उपेक्षा औ द्वेषके विषय होनैंकरि उपेक्ष्य औ द्वेष्य हैं. इति.

२ आत्माके प्रियतमताकी सिद्धि औ परमानंदताकी सर्ववृत्तिनमैं अप्रतीतिपूर्वक, योग औ विवेककी समता. १३२७–१३६६

१ प्रियतम, प्रिय, उपेक्ष्य औ द्वेष्यवस्तुका विवेक औ ज्ञानीके एकहीं वचनकी शिष्य औ प्रतिवादीके प्रति वर शापरूपताकरि आत्माकी प्रियतमता. १३२७–१३४८

१३२७ उपेक्ष्यं द्वेष्यमित्यन्यद् द्वेधा मार्गतृणादिकम्।
उपेक्ष्यं व्याघ्रसर्पाऽऽदि द्वेष्यमेवं चतुर्विधम् ५१

" अन्यवस्तुविषै दोनूं नहीं हैं " इस (१३२६)विषै कथन किये अन्य शब्दके अर्थके अवांतर (बीच)के भेदकूं कहै हैं:– (॥उपेक्ष्यमिति॥) उपेक्ष्य औ द्वेष्य भेदकरि अन्यवस्तु दो प्रकारका होवै है. टीका:– अन्य अन्य, ऐसैं कथन करिये है जो वस्तु, सो उपेक्ष्य (उपेक्षाका विषय) औ द्वेष्य (द्वेषका विषय), इस भेदकरि दो प्रकारका होवै है ❀ तिन दोनूंकूं उदाहरणकरि कहै हैं:– (॥ मार्गेति ॥) मार्गका तृणादिक उपेक्ष्य है औ व्याघ्रसर्पादिक द्वेष्य है. टीका:– मार्गगत जो तृण अरु लोष्ट (मट्टीके खडे) आदिक, सो उपेक्ष्य है औ अपनैंकूं उपद्रवके हेतु जो व्याघ्रआदिक, सो द्वेष्य है. यह अर्थ है ❀ फलितकूं कहै हैं:– (॥ एवमिति ॥) ऐसैं च्यारिप्रकारका वस्तु है. ५१

१३२८ आत्मा शेष उपेक्ष्यं च द्वेष्यं चेति चतुर्ष्वपि ।
न व्यक्तिनियमः किं तु तत्तत्कार्यात्तथा तथा ५२

च्यारीप्रकारकूंहीं दिखावै हैंः- (॥ आत्मेति ॥) आत्मा (प्रियतम), शेष (प्रिय), उपेक्ष्य, औ द्वेष्य; यह च्यारीप्रकारका वस्तु है ❀ ननु, आत्माआदिक च्यारीवस्तुनके बी प्रियतमताआदिक क्या नियमित है? तहां (नियमित) नहीं है; ऐसैं कहै हैंः- (॥ चतुर्ष्वपीति ॥) इन च्यारीवस्तुनविषै बी व्यक्ति (प्रियतम आदिकस्वरूप) का नियम नहीं है. टीकाः- आत्माआदिक च्यारीवस्तुनविषै यहहीं प्रियतम है, यहहीं प्रिय है, यहहीं उपेक्ष्य है, औ यहहीं द्वेष्य है; अन्य नहीं, ऐसा नियम नहीं है. यह अर्थ है ❀ तब क्या है? तहां कहै हैंः- (॥किं त्विति ॥) किंतु, तिस तिस कार्यतैं तैसैं तैसैं होवै है. ५२ टीकाः- तिस तिस उपकारादिरूप कार्यके भेदतैं तैसैं तैसैं (प्रियादिरूपता) होवै है. यह अर्थ है. ५२

१३२९ स्याद्व्याघ्रः संमुखो द्वेष्योह्युपेक्ष्यस्तुपराङ्मुखः।
लालनादनुकूलश्चेद् विनोदायेति शेषताम् ॥५३

सर्व ठिकानैं अनियमके जोडनैंअर्थ, प्रसिद्ध द्वेष्यरूप व्याघ्रविषै तिस (द्वेष्यबुद्धिके नियम) के अभावकूं दिखावै हैंः- (॥ स्यादिति ॥) व्याघ्र जब सन्मुख होवै तब द्वेष्य होवै है औ जब पराङ्मुख (उलटा जाता) होवै तब उपेक्ष्य होवै है औ लालनतैं अनुकूल होवै, तब विनोदकेअर्थ हुया शेषता (प्रियता) कूं पावता है. ५३ टीकाः- व्याघ्र (बाघ),

जब अपनैं भक्षण करनैंअर्थ सन्मुख आवता है, तब द्वेष्य (द्वेषका विषय) होवै है औ सोई (व्याघ्र), जब उलटा होयके जावै तब उपेक्ष्य (उपेक्षाका विषय) होवै है औ सोई (व्याघ्र) जब लालन (लडावनैं)तैं अपनैंकूं अनुकूल (सुखका साधन) होवै तब विनोदअर्थ (विनोदका साधन) होवै है; ऐसैं शेषता (अपना उपकारक होनैंकरि प्रियता)कूं भजता है; यह अभिप्राय है. ५३

१३३० व्यक्तीनां नियमो माभूल्लक्षणात् तु व्यवस्थितिः ।
आनुकूल्यं प्रातिकूल्यं द्वयाभावश्च लक्षणम् ॥५४

ननु, एकहीं वस्तुके प्रियताआदिक तीनधर्मनके अंगीकार किये व्यवहारकी व्यवस्था नहीं होवैगी. यह आशंकाकरि कहै हैं:– (॥ व्यक्तीनामिति ॥) व्यक्तिनका नियम मति होहु, परंतु लक्षणतैं व्यवस्था होवैगी. टीकाः– व्यक्ति (प्रियता आदिक स्वरूप)के नियमके अभाव हुये बी लक्षणके वशतैं व्यवस्था होवैगी. यह अर्थ है ❀ प्रियआदिकका क्या लक्षण है? इस आकांक्षाविषे तिन (प्रिय द्वेष्य औ उपेक्ष्य)के लक्षणकूं कहै हैं:– (॥ आनुकूल्यमिति ॥) अनुकूलपना, प्रतिकूलपना, औ दोनूंका अभाव; (यह प्रियआदिकका) लक्षण है. ५४ टीकाः– अनुकूल (सुखका साधन)पना, प्रियका लक्षण (व्यावर्त्तक धर्म) है औ प्रतिकूल (दुःखका साधन)पना, द्वेष्यका लक्षण है औ अनुकूलपना अरु प्रतिकूलपना, इन दोनूंरूपका अभाव (अनुकूल अरु प्रतिकूलपनेकरि रहितपना) उपेक्ष्यवस्तुका लक्षण है. यह अर्थ है. ५४

१३३१ आत्मा प्रेयान् प्रियः शेषो द्वेष्योपेक्ष्ये तदन्ययोः
इति व्यवस्थितो लोको याँज्ञवल्क्यमतं च तत्५५

इतनैं (१३२७सैं) आरंभ किये ग्रंथकी रचनाकरि उपपादन किये अर्थकूं मुमुक्षुकी बुद्धिविषै सुगम करनैंअर्थ संक्षेपकरिके कथन करै हैंः- (॥ आत्मेति ॥) आत्मा, प्रियतम है; औ शेष, प्रिय है; औ तिनतैं अन्य दोनूं वस्तुनविषै द्वेष्य औ उपेक्ष्य होवै हैं; ऐसैं लोक व्यवस्थाकूं पावता है. टीकाः- आत्मा जो प्रत्यक्आनंद (आंतरआनंद), सो प्रियतम (अतिशयकरि प्रिय) है. औ शेष जो अपना (आत्माका) उपसर्जनभूत (संबंधी हुया) पदार्थ, सो प्रिय है. औ तिन(आत्मा औ आत्माके शेष)तैं अन्य जो व्याघ्र अरु मार्गगत तृणआदिकरूप (अनुकूल औ अनुकूलता अरु प्रतिकूलतासैं रहित दोनूं प्रकारके) वस्तुनविषै क्रमके अनुसार द्वेष्य औ उपेक्ष्य होवै हैं; ऐसैं च्यारीप्रकारकरि लोक व्यवस्था (व्यवहारके भेद)कूं प्राप्त होवै है. उक्त च्यारीप्रकारसैं भिन्न कछू बी नहीं है. यह अभिप्राय है ❀ यह अर्थ श्रुतिकरि बी संमत (मान्या) है; ऐसैं कहै हैंः- (॥ याज्ञवल्कयेति ॥) सो याज्ञवल्क्यका बी मत है. ५५ टीकाः- आत्माआदिकके जो प्रियतमता आदिक हैं, सो याज्ञवल्क्यऋषिकूं बी संमत हैं. यह अर्थ है. ५५

१३३२ अन्यत्रापि श्रुतिः प्राह पुत्राद् वित्तात् तथाऽन्यतः
सर्वस्मादांतरं तत्त्वं तदेतत् प्रेय ईक्षताम् ॥ ५६ ॥

केवल मैत्रेयीब्राह्मण (नाम बृहदारण्यकके कोइक प्रकरण)-विषैहीं आत्माकी प्रियतमता कही है ऐसैं नहीं; किंतु पुरुषवि-

धब्राह्मणविषै बी कही है; इस अभिप्रायकरि तिस (पुरुषविध-ब्राह्मण)के वाक्यके अर्थकूं संक्षेपसैं कहै हैंः– (॥ अन्यत्रापीति ॥) " जो पुत्रतैं, वित्ततैं, तैसैं अन्य सर्वपदार्थतैं आंतरतत्त्व है, ताकूं (सो यह अतिप्रिय है, इत्यादिवाक्यकरि) अतिप्रिय देखना " ऐसैं अन्यस्थलविषै बी श्रुति कहती है. ५६ टीकाः– " जो पुत्रतैं प्रिय है औ वित्ततैं प्रिय है अरु अतिआंतर है औ अन्य (इंद्रियादिक)तैं प्रिय है औ सर्व (पुत्रादिक)तैं अतिआंतर है औ जो यह आत्मा (सर्वांतर) है, सो यह अतिशयकरि प्रिय (प्रियतम) है " इस ब्रृहदारण्यकके वाक्यकरि पुत्र औ वित्त (ग्रह क्षेत्र पशु आदिरूप धन)आदिक सर्वतैं आंतर आत्मतत्त्वकी प्रियतमता कही है. यह अर्थ है. ५६

१३३३ श्रौत्या विचारदृष्ट्याऽयं साक्ष्येवाऽऽत्मा न चेतरः
*कोशान् पंच विविच्यांतर्वस्तुदृष्टिर्विचारणा॥५७॥

ऐसैं श्रुतिविषै कथन होहु, तिसकरि प्रकृत (साक्षीकी मुख्यआत्मता)विषै क्या आया? तहां कहै हैंः– (॥ श्रौत्येति ॥) श्रुतिसंबंधी विचारदृष्टिकरि यह साक्षीहीं आत्मा है, इतर नहीं. टीकाः– श्रुतिअर्थके व्यारीऔरतैं देखनैंरूप विचारदृष्टिकरि साक्षीकूं मुख्यआत्मता है, अन्य (पुत्रादिक)कूं नहीं. यह अर्थ है ❀ " विचारदृष्टिकरि, " इहां कथन किये विचारके स्वरूपकूं कहै हैंः–(॥ कोशानिति ॥) पंचकोशनकूं विवेचनकरिके, तिनके अंतर्गत वस्तुकी जो दृष्टि, सो विचार है. ५७ टीकाः– अन्नमयआदिक पंचकोशनकूं तैत्तिरीयश्रुति (औ ताके अनुसार पंचकोशविवेक)विषै कथन किये प्रकारसैं आत्मातैं

भिन्नकरिके तिनकोशनके अंतरमैं स्थित आत्माका जो अनुभव, सो विचार कहिये है. यह अर्थ है. ५७

१३३४ जागरस्वप्नसुप्तीनामागमापायभासनम् ।
यतो भवत्यसावात्मा स्वप्रकाशचिदात्मकः ॥५८

अंतरमैं स्थित वस्तुके दर्शनके प्रकारकूंहीं कहै हैंः– (॥जागरेति ॥) जाग्रत् स्वप्न औ सुषुप्तिके आगम औ अपाय (नाश)का भासना जिसतैं होवै है, सो स्वप्रकाश चिद्रूप आत्मा है. ५८ टीकाः– जाग्रत्आदिक अवस्थाके मध्यमैं उत्तर उत्तर (पीछली, पीछली)अवस्थाके आगम (उत्पत्ति)का औ पूर्व पूर्व अवस्थाकी निवृत्तिका अवभासन (प्रकाश) जिस नित्यचैतन्यरूप साक्षीतैं होवै है, सो स्वप्रकाशचेतनरूप आत्मा है. यह अर्थ है. ५८

१३३५ शेषाः प्राणाऽऽदिवित्तांता आसन्नास्तारतम्यतः ।
प्रीतिस्तथा तारतम्यात् तेषु सर्वेषु वीक्ष्यते ५९

संक्षेपकरि (१३३२ विषै) उक्त श्रुतिके अर्थकूं वर्णन करै हैंः– (॥ शेषा इति ॥) शेष (भोगकी सामग्री)रूप जो प्राणसैं आदिलेके वित्तपर्यंत पदार्थ हैं, सो तारतम्यकरि आत्माके समीपवर्त्ती हैं. टीकाः– साक्षीतैं भिन्न जो प्राणसैं आदिलेके धनपर्यंत आगे (१३३६विषै) कहनैके पदार्थ हैं, सो तारतम्य (अधिकन्यून), आत्माके समीपवर्त्तनैंहारे होवैहैं ❋ तिस (अधिकन्यून वर्त्तनैं)विषै उपपत्ति (अनुभवरूप कारण)कूं कहै हैंः– (॥ प्रीतिरिति) तैसैं तिन सर्वविषै तारतम्यतैं सर्व-

पुरुषनकरि बी प्रीति देखिये है. ५९ टीकाः— जैसैं तारतम्यकरि तिनकी आंतरता (आत्माके समीपता) है, तैसैं तिन प्राणादिकनविषै तारतम्यतैं सर्वजननकरि प्रीति देखिये है. यह अर्थ है. ५९

१३३६ वित्तात् पुत्रः प्रियः पुत्रात् पिंडः पिंडात् तथेंद्रियम्
इंद्रियाच्च प्रियः प्राणः प्राणादात्मा प्रियः परः ६०

प्रीतिके तारतम्यकरि अनुभवकूंहीं स्पष्ट करै हैंः— (॥ वित्तादिति ॥) वित्त (धन)तैं पुत्र प्रिय है औ पुत्रतैं पिंड (अन्नमय देह) प्रिय है, तैसैं पिंड (देह)तैं इंद्रिय प्रिय हैं औ इंद्रियतैं प्राण (मन) प्रिय है औ प्राण (मन)तैं आत्मा परमप्रिय है. ६० टीकाः— या (श्लोक)का यह भाव हैः— सर्वप्राणिनकरि पुत्रआदिक (भार्यादिक)की विपत् (आपत्)के निवारणअर्थ धनका व्यय (खर्च) करिये है औ अपनैं देहके रक्षणअर्थ कदाचित् पुत्रादिकका बी दान करिये है औ इंद्रियनाशके निवारणअर्थ, ताडन आदिककरि देहकी पीडा बी अंगीकार करिये है औ मरण (प्राणगमन)की प्राप्तिके भये तिसके निवारणअर्थ इंद्रियनकी विकलता (छेदनआदिक) बी अंगीकार करिये है; यातैं (धनसैं आदिलेके प्राणपर्यंत पदार्थनविषै) उत्तर

१ इहां प्राणशब्दकरि प्राणउपलक्षित मनका ग्रहण है. काहेतैं, मन जो है सो स्वरूपानंदके प्रतिबिंबका ग्राहक है औ इंद्रियनका प्रेरक होनैंकरि स्वामी है. औ नेत्रआदिक इंद्रियविषै पीडाकरि जो मनकूं विक्षेप होवै तब "यह इंद्रिय जावै तौ मैं सुखी होऊं" ऐसैं पुरुष (मनविशिष्ट) कहता है; यातैं प्राणशब्दकरि मनका ग्रहण है औ मनका संचार वा देहतैं निर्गमन, प्राणकूं छोडीके होवै नहीं, यातैं प्राणका कथन है. यह भाव है.

उत्तर अधिकप्रियता सर्वके अनुभवकरि सिद्ध है औ आत्माकी तौ निरतिशयप्रेमकी विषयता (रूप प्रियतमता) है, सो विद्वानोंके अनुभवकरि सिद्ध है. ६०

१३३७ एवं स्थिते विवादोऽत्र प्रतिबुद्धविमूढयोः ।
श्रुत्योदाहारि तँत्राऽऽत्मा प्रेयानित्येव निर्णयः६१

ऐसैं आत्माकी प्रियतमताकूं प्रमाण (श्रुतिआदिक)करि सिद्ध हुये बी तिसविषै ज्ञानी अज्ञानीके विवादके निषेधअर्थ, श्रुतिनैं तिन (ज्ञानी अज्ञानी दोनूं)का विवाद दिखाया है; ऐसैं कहे हैंः- (॥ एवं स्थित इति ॥) ऐसैं (आत्माकी प्रियतमता)के स्थित हुये बी इस (प्रियतमता)विषै जो प्रतिबुद्ध (ज्ञानी) औ विमूढ (अज्ञानी)का विवाद है, सो श्रुतिनैं उदाहरण किया है ❀ तिस (विवाद)विषै क्या निर्णय भया ? सो कहे हैंः- (॥ तत्रात्मेति ॥) तिस (विवाद)-विषै आत्मा प्रियतम (अतिशयप्रिय) है, यहहीं निर्णय (निर्धार) है. ६१ टीकाः- इस विवादविषै आत्माकी प्रियतमताकूं उपपादन करी होनैतैं (आत्माकी प्रियतमताका निर्णय है). यह अर्थ है. ६१

१३३८ साक्ष्येव दृश्यादन्यस्मात् प्रेयानित्याह तत्त्ववित्।
प्रेयान् पुत्राऽदिरेवेमं भोक्तुं साक्षीति मूढधीः॥६२

तिसीहीं (ज्ञानी अज्ञानीके) विवादकूं दिखावै हैंः- (॥साक्षीति ॥) "साक्षीहीं अन्य दृश्यतें प्रियतम (अधिक प्रिय) है " ऐसैं तत्त्ववित् (ज्ञानी) कहता है औ " अधिकप्रिय

पुत्रादिकहीं है अरु साक्षी इस (पुत्रादिक)कूं भोगनैंके वास्ते (प्रिय) है" ऐसैं मूढबुद्धिवाला (अज्ञानी) कहता है. ६२

१३३९ आत्मनोऽन्यं प्रियं ब्रूते शिष्यश्च प्रतिवाद्यपि।
तस्योत्तरं वचो बोधशापौ कुर्यात् तयोः क्रमात् ६३

आत्मातैं भिन्न वस्तुकी प्रियताके वादिनकूं विभागकरिके, उत्तरके कहनैंअर्थ तिसीहीं वादीकूं विभागकरिके कथन करै हैं:– (॥ आत्मन इति ॥) शिष्य (शिक्षाके योग्य) औ प्रतिवादी, ये दोनूं बी आत्मातैं अन्यवस्तुकूं प्रिय कहते हैं ❀ उत्तर कथनके प्रकारकूं कहै हैं:– (॥ तस्योत्तरमिति ॥) तिनके तिस (वचन)के उत्तररूप वचनकूं क्रमतैं बोध औ शापरूप करै है. ६३ टीका:– तिन (शिष्य औ प्रतिवादी)के संबंधी तिस (वचन)के प्रतिउत्तररूप वचन (वाक्य)कूं ज्ञानीपुरुष क्रमतैं बोधरूप औ शापरूप करै है. यह अर्थ है. ६३

१३४० प्रियं त्वां रोत्स्यतीत्येवमुत्तरं वक्ति तत्त्ववित्।
स्वोक्तप्रियस्य दुष्टत्वं शिष्यो वेत्ति विवेकतः ६४

प्रतिवचन (उत्तर)के देनैंरूप जो "सो जो (ज्ञानी), आत्मातैं अन्य (वस्तु)कूं प्रिय कहनैंहारे (शिष्य औ प्रतिवादी)के प्रति कहता है, कि, प्रिय तेरेकूं रुदन करावैगा" यह समनंतर (१३३२ उक्त श्रुतिवाक्यके समीपवर्त्ती पीछला) श्रुतिवाक्य है, ताकूं अर्थतैं पठन करै हैं:– (॥ प्रियं त्वामिति ॥) "प्रिय तुजकूं रुदन करावैगा" ऐसैं तत्त्ववेत्ता उत्तरकूं कहता है.

टीकाः- तत्त्ववेत्ता जो है, सो शिष्य औ प्रतिवादी दोनूंके प्रति-हीं:- हे शिष्य, हे प्रतिवादी, तैनैं अभिप्रायका विषय किया है जो पुत्रादिरूप प्रिय, सो अपनैं विनाशकरि तुज (शिष्य वा प्रतिवादी)कूं रुदन करावैगा. इस (उक्त) प्रकारकरि उत्तर (प्रतिवचन)कूं कहता है ❀ एकहीं वचन, शिष्य औ प्रतिवादी दोनूंकूं कैसें उत्तररूप भया? यह आशंकाकरिके, शिष्यके प्रति सो वाक्य जैसें उत्तररूप भया, तैसें "आपकरि उक्त प्रियकी" इस (१३४०) सें आदिलेके "तिस आत्माकूं दिनरात्र (निरंतर) देखता है" इहां (१३४४) पर्यंत अर्धसहित च्यारीश्लोककरि प्रथम जनावै हैं (॥ स्वोक्तप्रियस्येति ॥) शिष्य, आपकरि उक्त प्रियकी विवेकतैं दुष्टताकूं जानता है. ६४ टीकाः- शिष्य जो है, सो आपकरि कथन किये पुत्रादिरूप प्रीतिके विषयकी विवेक (१३४१ सें आगे कहनैके दोषके विचार)करि दुष्टता (दोषयुक्तता)कूं जानता है. ६४

१३४१ अलभ्यमानस्तनयः पितरौ क्लेशयेच्चिरम् ।
लब्धोऽपि गर्भपातेन प्रसवेन च बाधते ॥ ६५ ॥

दोषविचारके प्रकारकूं तीनश्लोककरि दिखावै हैं;-(॥ अलभ्यमान इति ॥) पुत्र जो है सो अप्राप्त हुया माता अरु पिताकूं बहुतकालपर्यंत क्लेशकारी होता है औ प्राप्त हुया (पुत्र) बी गर्भपातकरि वा जन्मकरि बाधा (पीडा)कूं करता है. ६५

१३४२ जातस्य ग्रहरोगाऽऽदिः कुमारस्य च मूर्खता ।
उपनीतेऽप्यविद्यत्वमनुद्वाहश्च पंडिते ॥ ६६ ॥

(॥ जातस्येति ॥) जात (अविघ्नकरि जन्मकूं प्राप्त भये पुत्र)के ग्रह (कोइ अनिष्ट सूर्यादि ग्रह) अरु रोग (शीतलादिक) आदिक (चिंताके हेतु) हैं औ कुमार (पांचवर्षकी अवधिवाली बाल्य अरु पीछली पौगंड अवस्थाकूं प्राप्त भये पुत्र)की मूर्खता (चिंतारूप दुःखकी हेतु) है औ पुत्रके उपनीत (जनोइकूं प्राप्त) भये बी विद्याहीनता (दुःखप्रद) है औ पुत्रकूं पंडित हुये अनउद्वाह (विवाह भया नहीं, सो दुःखकर) है. ६६

१३४३ पुनश्च परदाराऽऽदि दारिद्र्यं च कुटुंबिनः ।
पित्रोर्दुःखस्य नास्त्यंतो धनी चेन् म्रियते तदा ६७

(॥ पुनश्चेति ॥) फेर (विवाहके भये) बी परस्त्रीआदिक (कुचेष्टा दुःखकर) है औ कुटुंबवान् (पुत्र)की दरिद्रता (दुःखकर) है औ पुत्र जब धनी (धनवान्) होवै तब मरणकूं पावै (सो पुत्रका मरण महादुःखकर है); ऐसैं मातापिताकूं (पुत्रजन्य) दुःखका अंत (अवधि) नहीं है. ६७

१३४४ एवं विविच्य पुत्राऽऽदौ प्रीतिं त्यक्त्वा निजात्मनि।
निश्चित्य परमां प्रीतिं वीक्षते तमहर्निशम् ॥ ६८

ऐसैं (१३४०सैं) पुत्रगत दोषनका जो कीर्त्तन (कथन) है, सो स्त्रीआदिक सर्वविषयगत दोषनके उपलक्षण (ग्रहण)अर्थ

१ धन औ स्त्रीरूप विषयगत दोषका कथन, देखो श्लोक (७२३–७२४) औ तिनकी टिप्पणविषे.

है; इस अभिप्रायकरि समाप्ति करै हैं:– (॥ एवं विविच्येति ॥) ऐसैं विवेचनकरिके पुत्रआदिकविषै प्रीतिकूं त्याग करिके निजात्माविषै परमप्रीतिकूं निश्चयकरिके तिस (निजात्मा)-कूं दिनरात्र (निरंतर) देखता है. ६८ टीका:– इस (१३४० सैं उक्त) प्रकारकरि पुत्रआदिक विषयके समुदायविषै, विद्यमान दोषनकूं विभागकरि जानिके तिस (विषयसमूह) विषै प्रीतिकूं परित्याग करिके, निजात्मा (प्रत्यक्रूप साक्षी) विषै निरतिशयप्रीतिकूं निश्चयकरिके प्रत्यगात्माकूं सर्वदा देखता (अनुसंधान करता) है. यह अर्थ है. ६८

१३४९ आग्रहाद् ब्रह्मविद्वेषादपि पक्षममुंचतः ।
वादिनो नरकः प्रोक्तो दोषश्च बहुयोनिषु ॥ ६९ ॥

"प्रिय (पुत्रादिरूप) तेरेकूं रुदन करावैगा" इसीहीं वाक्यकी प्रतिवादीके प्रति शापरूपता है; ताकूं प्रगट करै हैं:– (॥ आग्रहादिति ॥) आग्रहतैं औ ब्रह्मवित्के द्वेषतैं पक्षकूं नहीं छोडता हुया जो वादी, ताकूं नरक कह्या है औ बहुयोनिनविषै दोष कह्या है. ६९ टीका:– "मुजकरि कथन किये पुत्रादिकके प्रियपनैंकूं सर्वथा (सर्वप्रकारसैं) नहीं त्याग करुंगा" इसरूपवाले आग्रहतैं औ "इस (ज्ञानी) करि कथन किये अर्थकूं विपरीत घटावूंगा (न मानोंगा)" इसरूपवाले ब्रह्मवेत्ताके द्वेषतैं पुत्रादिकनकेहीं प्रियपनैंके कथनरूप पक्षकूं नहीं परित्याग करनैंहारे प्रतिवादीकूं नरककी प्राप्ति तथा बहुयोनि (तिर्यक्आदिरूप अनेकजन्मन) विषै पुत्रभार्यादिरूप इष्ट (प्रिय)-

के वियोग औ अनिष्ट (अप्रिय)की प्राप्तिरूप दोष, "प्रिय तेरेकूं रुदन करावैगा" ऐसैं कथन करनैंहारे ज्ञानीनैं कह्या है. ६९

१३४६ ब्रह्मविद् ब्रह्मरूपत्वादीश्वरस्तेन वर्णितम्। यद्
यत्तत्तत्तथैवस्यात्तच्छिष्यप्रतिवादिनोः॥७०॥

ननु, ज्ञानीकरि कथन किये एकवाक्यकी शिष्यकेप्रति उपदेशरूपता औ वादीके प्रति शापरूपता है; यह विरुद्ध दो रूप कैसैं घटता है? यह आशंकाकरि, उत्तर देनैंहारे (ज्ञानी)कूं ईश्वररूप होनैतैं तिस (ईश्वररूप ज्ञानी)के अभिप्रायके अनुसारकरि दोनूं (उपदेशरूपपना औ शापरूपपना) होवैगा; ऐसैं मानिके तिस (उक्तअर्थ)का प्रतिपादक जो "मैं (ज्ञानी) ईश्वर हूं, (जैसैं कहूं हूं) तैसैंहीं होवैगा" यह समनंतर ("प्रिय तेरेकूं रुदन करावैगा" इसवाक्यके पीछेहीं स्थित) श्रुतिवाक्य है; ताके तात्पर्यकूं कहे हैं:– (॥ ब्रह्मविदिति ॥) ब्रह्मवित् ब्रह्मरूप होनैतैं ईश्वर है, तिसकरि जो जो वर्णन करिये है, सो

१ "ब्रह्मवित् ब्रह्महीं होवै है" इस श्रुतितैं अरु अपनैं अनुभवतैं विद्वान् ब्रह्मरूप है औ ब्रह्मतैं भिन्न ईश्वरका अभाव है, यातैं विद्वान् ईश्वर है. किंवा, मायाविशिष्टचेतनकूं जैसैं सर्वके आत्माके साथि अपनैं तादात्म्य (अभेद)के ज्ञानतैं समष्टिपना औ नित्यमुक्तपना आदिक है; तैसैं विद्वान्कूं बी सर्वके स्वात्माके साथि अपनैं तादात्म्यके ज्ञानतैं समष्टिपना औ नित्यमुक्तपनाआदिक है. औ मायाविशिष्टचेतनकूं जैसैं निजस्वरूप ब्रह्म निरावरण भान होवै है; तैसैं विद्वान्कूं बी होवै है. यातैं गुणके सादृश्यकरि बी ब्रह्मवित् ईश्वर है. इहां बुद्धिके विनोदअर्थ शास्त्रांतरके वचन अनुसारी प्रसंग हैं:– जैसैं कोई राजा औ राणीके दोनूं पुत्र होवैं, तिनमैं बडापुत्र, सर्व (पिता औ माताके) धनका अधिपति होयके राज्यपदकूं पावै औ छोटापुत्र मूर्खताकरि किंकरदशाकूं पावै; तब तिन दोनूंभ्राताका बडाभेद भया. पीछे बुद्धिकरि यह छोटापुत्र, न्यायकरिके पिताके धनका विभागकरि अधिपति होयके

सो तिसके शिष्य औ प्रतिवादीकूं तैसैंहीं होवै है. ७०

टीकाः– जातैं ब्रह्मवेत्ताकूं आपके ब्रह्मभावके अनुभवतैं ईश्वरपना है, यातैं तिस (ब्रह्मवेत्ता)करि जिस शिष्यआदिकके प्रति जो जो इष्ट औ अनिष्ट कहिये है, सो सो तिस ज्ञानीका जो शिष्य है औ प्रतिवादी है तिनकूं तैसैंहीं (इष्ट वा अनिष्ट अवश्य) होवै है. यह अर्थ है. ७०

१३४७ यस्तु साक्षिणमात्मानं सेवते प्रियमुत्तमम् ।
तस्य प्रेयानसावात्मा न नश्यति कदाचन ॥७१

व्यतिरेकरूपद्वारकरि (१३४६विषै) कथन किये अर्थकूं अन्वयरूप द्वारकरि प्रतिपादक जो "आत्माकूंहीं प्रिय (जानिके)

राज्यपदकूं पावै; तैसैं ब्रह्मरूप पिता औ मायारूप माताके जीव ईश्वर दोनूं पुत्र हैं. तिनमैं ईश्वररूप बडापुत्र, सच्चिदानंदादिरूप पिताके धनका औ सर्वज्ञता सर्वशक्तिमान्ता जगत्कर्तृताआदिरूप माताके धनका अधिपति होनैंकरि ईश्वरभावकूं प्राप्त भया औ जीवरूप छोटापुत्र, अविवेकरूप मूर्खताकरि पिता माता दोनूंके धनसैं वर्जित हुया शुभ औ अशुभकर्मरूप सेवा औ अपराधके अनुसार सुखभोगरूप मौज औ दुःखभोगरूप दंडकूं प्राप्त होनैंकरि जीवभावकूं प्राप्त भया. तब तिन दोनूंका बडा (अनादिकालका) भेद भया; पीछे विवेकादि साधनसंयुक्त बुद्धिकूं पायके यह जीव, ईश्वरकूं कहता है:– "भो ईश्वर, तूं गुप्त जो पिताका साधारणसुखका निधि (भंडार) है ताकूं भोगता है औ माया (माताके धन)सैं मेरेकूं विभागकरिके बी भिक्षावृत्ति ("यह सर्व मेरेकूं अर्पण कर" ऐसैं उपदेश)कूं बाहीर प्रगट करता हुया वर्त्तता है औ यह (विहितकर्म) करहु अरु यह (निषिद्धकर्म) मति करहु, ऐसैं वेदवचनसैं मुजकूं भृत्य (किंकर)की न्याई शिक्षा करता हुया कहता है; यातैं मैं अब गुरुरूप न्यायाधीशद्वारा कूटस्थविषै तेरेकूं निवेदन (तेरी परोक्षता औ मेरी परिच्छिन्नता छोडिके एकता) करिके, तेरे स्थिर ऐश्वर्यकूं बी छीन ल्यौंगा." इस रीतिसैं ज्ञानीकूं ईश्वरभाव है.

उपासन (चिंतन) करना. जो (पुरुष) आत्माकूंहीं प्रिय (जानिके) उपासन करता है, इस (पुरुष)का प्रियरूप (आत्मा) कदाचित् वियोगकूं प्राप्त नहीं होवै है" यह समनंतर (१३४६-उक्त वाक्यके पीछेका) वाक्य है, ताकूं अर्थतैं पठन करै हैं:—

(॥ यस्त्विति ॥) जो (पुरुष) तौ साक्षीआत्माकूं उत्तमप्रिय (जानिके) सेवता है, तिसका परमप्रियरूप यह आत्मा कदाचित् नाश (अप्रियभाव)कूं पावता नहीं. ७१ टीकाः— मूलविषै जो तु (तौ) शब्द है, सो (१३४५) उक्त अर्थतैं इस (कहनैंके) अर्थकी विलक्षणताके जनावनैंअर्थ है; यातैं अनात्मा (पुत्रादिक)की प्रियताके वादीतैं अन्य जो शिष्य, आत्माकूंहीं उत्तमप्रिय (निरतिशयप्रेमका गोचर) सेवता (सदा आत्माकूं स्मरण करता)है, तिस (शिष्यादिक)का परमप्रिय (प्रियतम होनैंकरि मान्या) जो यह आत्मा, सो प्रतिवादीकरि माने हुये प्रिय (पुत्रादिरूप)की न्याई कदाचित् विनाशकूं पावता नहीं; किंतु सदा आनंदरूप हुया भासता है. यह अर्थ है. ७१

१३४८ परप्रेमाऽऽस्पदत्वेन परमाऽऽनंद इष्यताम् ।
सुखवृद्धिः प्रीतिवृद्धौ सार्वभौमादिषु श्रुता ॥७२

१ वादीनैं प्रियतम होनैंकरि मान्या है जो पुत्रादिरूप आत्मा, सो व्यभिच्यारीप्रीतिका विषय है; यातैं ताकी प्रियतमता भ्रांतिसिद्ध है. तातैं सो कदाचित् प्रतिकूलताआदिक निमित्तसैं नष्ट होवै है औ शिष्यनैं प्रियतम होनैंकरि जान्या जो साक्षीरूप आत्मा, सो अव्यभिचारीप्रीतिका विषय है, यातैं ताकी प्रियतमता वास्तविक है, तातैं सो कदाचित् कोई बी निमित्तकरि नष्ट होवै नहीं; किंतु सर्वदा भान होवै है; गुरुके उपदेशतैं जनित तत्त्वज्ञानकरि भ्रांतिज्ञानके बाधतैं. यह भाव है.

ऐसैं (१३८२सैं) आत्माकी परमप्रेमकी विषयतारूप जो हेतु है ताकूं साधिके (श्रुतिआदिकसैं सिद्ध करिके), अब फलित (आत्माकी परमानंदतारूप साध्य)कूं कहे हैं:– (॥ परप्रेमेति ॥) परप्रेमका आरुपद (विषय) होनैंकरि (आत्मा) परमानंदरूप अंगीकार करना योग्य है. टीका:– इहां यह अनुमान है:– आत्मा परमानंदरूप है, निरतिशयप्रेमका विषय होनैतैं; जो परमानंदरूप नहीं होवै है, सो निरतिशय प्रेमका विषय बी नहीं होवै है; जैसैं घटादिक (परमानंदरूप नहीं है, यातैं निरतिशयप्रेमका विषय बी नहीं) है. यह केवलव्यतिरेकीअनुमान है ❀ परमप्रेमकी विषयतारूप हेतुकूं आत्माकी परमानंदरूपताके साधनैंविषै सामर्थ्यके जनावनैअर्थ प्रीतिकी वृद्धि (अधिकता)के होते सुखकी वृद्धिकूं उदाहरण करै हैं:– (॥ सुखवृद्धिरिति ॥) सार्वभौमआदिकनविषै प्रीतिकी वृद्धिके होते सुखकी वृद्धि सुनी है. ७२ टीका:– "जातैं सार्वभौम (सारीपृथ्वीके राजा)सैं आदिलेके हिरण्यगर्भ (ब्रह्मदेव)पर्यंत जो पद (ऐश्वर्ययुक्त स्थान)नके भेद हैं, तिनविषै जहां जहां प्रीति बढती है तहां तहां सुखकी वृद्धि होवै है;" ऐसैं तैत्तिरीय औ बृहदारण्यक श्रुतिविषै कह्या है. यातैं प्रीतिकी निरतिशयता (अधिकता)के होते आनंदकी बी निरतिशयता जाननैंकूं शक्य है. यह भाव है. ७२

---

१ चक्रवर्त्तीसैं लेके ब्रह्मदेवपदपर्यंत जो प्रीतिकी तारतम्यताकरि सुखकी तारतम्यता तैत्तिरीय औ बृहदारण्यकविषै कही है, ताका वर्णन आगे देखो श्लोक [१४९२–१५०४] विषै.

२ आत्माके परमानंदताकी चेतनताकी न्याई सर्ववृत्तिनमैं अप्रतीति. १३४९-१३५५

१३४९ चैतन्यवत् सुखं चास्य स्वभावश्चेच्चिदात्मनः ।
धीवृत्तिष्वनुवर्त्तेत सर्वास्वपि चितिर्यथा ॥ ७३ ॥

ननु, आत्माकी परमानंदरूपता बनै नहीं. काहेतें, तैसें (आत्माकी परमानंदरूपताके) हुये चैतन्यकी न्याई तिस (आत्मा)-के स्वरूपभूत आनंदकी बी सर्वबुद्धिवृत्तिनविषै अनुवृत्ति (अनुगति) प्राप्त होवैगी. इसरीतिसैं वादी मूलविषै शंका करै हैः—(॥ चैतन्यवदिति ॥) जब चैतन्य (ज्ञान)की न्याई सुख (आनंद) बी इस चिदात्माका स्वभाव (स्वरूप) होवै, तब सर्वबुद्धिवृत्तिनविषै जैसें चैतन्य अनुवर्त्तमान है, तैसें यह (आनंद) बी अनुवर्त्तमान होवैगा, ऐसें जो कहै; ७३

१३५० मैवमुष्णप्रकाशाऽऽत्मा दीपस्तस्य प्रभा गृहे ।
व्याप्नोति नोष्णता तद्वच्चितेरेवानुवर्त्तनम् ॥ ७४ ॥

चित् औ आनंद दोनूंकूं बी आत्माकी स्वरूपताके होते बी सर्ववृत्तिनविषै चेतनकीहीं अनुवृत्ति होवै है, आनंदकी नहीं; ऐसें दृष्टांतके आश्रयकरि सिद्धांती परिहार करै हैंः— (॥ मैवमिति ॥) तौ बनै नहीं. (काहेतें,) जैसें उष्ण औ प्रकाशरूप दीपक है, ताकी प्रभा (प्रकाश) गृहविषै व्याप्त होवै है; तैसें चेतनकाहीं अनुवर्त्तन (भान) होवै है. ७४ टीकाः—जैसें उष्ण औ प्रकाश (उभयस्वभाववाले) दीपकका प्रकाशहीं गृहआदिकविषै अनुगत (अनुस्यूत) होवै है, उष्णता नहीं;

ऐसैं चैतन्यकीहीं सर्ववृत्तिनविषै अनुवृत्ति होवै है, आनंदकी नहीं. यह अर्थ है. ७४

१३५१ गंधरूपरसस्पर्शेष्वपि सत्सु यथा पृथक्।
एकाक्षेणैक एवार्थो गृह्यते नेतरस्तथा ॥ ७५ ॥

ननु, चित् औ आनंद, दोनूंके अभेद हुये चेतनकी अभिव्यंजक (आवरणनिवृत्तिकरि आविर्भावकी करनैंहारी) बुद्धिकी वृत्तिविषैहीं आनंदकी अभिव्यक्ति (आविर्भावता) बी होवैगी. यह आशंकाकरि, तैसैं (जहां चेतनका आविर्भाव होवै, तहां आनंदका बी आविर्भाव होवै है; ऐसै) नियमके अभावविषै दृष्टांत कहे हैंः- (॥ गंधेति ॥) जैसैं (एकवस्तुविषै विद्यमान) गंध रूप रस स्पर्शके होते बी एक इंद्रियकरि भिन्नभिन्न एकहीं अर्थ (गुण) ग्रहण करिये है, अन्य नहीं; तैसैं. ७५
टीकाः- जैसैं एकद्रव्य (पुष्पादिक) विषै वर्त्तमान गंधआदिक च्यारीगुणनके मध्यमैंसैं घ्राणआदिक एक एक इंद्रियकरि गंधआदिरूप एक एक गुण ग्रहण करिये है, अन्य नहीं; तैसैं चित् औ आनंदके मध्यमैंसैं चेतनकाहीं भासना (भान) होवै है. यह अर्थ है. ७५

१३५२ चिदानंदौ नैव भिन्नौ गंधाऽऽद्यास्तु विलक्षणाः।
इति चेत् तंदभेदोऽपि साक्षिण्यन्यत्र वा वद ७६

दृष्टांत (गंधादिक) औ दार्ष्टांत (चित् आनंद) की विषमताकूं वादी मूलविषै शंका करै हैः- (॥ चिदानंदाविति ॥) चित् औ आनंद भिन्न नहीं हैं औ गंधआदिक तौ विलक्षण

(परस्पर भिन्न) हैं, ऐसैं जो कहै; ❀ उक्त विषमताके परिहार करनैंकूं दार्ष्टांतिकविषै चित् आनंदका जो अभेद है, सो क्या स्वाभाविक (स्वरूपतैं है,) अथवा औपाधिक (उपाधिका किया) है? इसरीतिसैं सिद्धांती विकल्प करै हैं:– (॥ तदभेद इति ॥) तिनका अभेद बी क्या साक्षीविषै है, किंवा अन्य ठिकानैं है? सो कथन कर. ७६ टीकाः– तिन (चित् औ आनंद)का अभेद (एकता) जो है, सो साक्षी (आत्मस्वरूप)-विषै है, किंवा अन्यठिकानैं (तिनकी उपाधिरूप वृत्तिनविषै) है? सो हे वादी कथन कर. यह अर्थ है. ७६

१३५३ आद्ये गंधाऽऽदयोऽप्येवमभिन्नाः पुष्पवर्त्तिनः ।
अक्षभेदेन तद्भेदे वृत्तिभेदात् तयोर्भिदा ॥ ७७ ॥

प्रथमपक्षविषै दृष्टांत औ दार्ष्टांत दोनूंकी समताकूं कहै हैं:– (॥ आद्य इति ॥) प्रथमपक्षविषै पुष्पवर्त्ती गंधआदिक बी ऐसैं अभिन्न हैं. टीकाः– चित् औ आनंद, दोनूंका साक्षीविषै भेदका अभाव है, इस प्रथमपक्षविषै, पुष्पमैं वर्त्तनैंहारे गंधआ-दिक (गुण) बी ऐसैं (चित् आनंदकी न्याईहीं) अभिन्न (पर-स्पर भेदरहित) हैं. काहेतैं, अन्य (रसआदिक)कूं छोडिके एक (गंध) लेजानैंकूं अशक्य है, यातैं. यह भाव है ❀ दूसरे (वृत्तिनमैं अभेद है, इस) पक्षविषै समता (दृष्टांत दार्ष्टांतकी तुल्यता)कूं कहै हैं:– (॥ अक्षेति ॥) इंद्रियनके भेदकरि तिन (गंधादिकन)के भेदके माने हुये, वृत्तिनके भेदतैं तिन (चित् औ आनंद)का भेद होवैगा. ७७ टीकाः– गंधआदिकके ग्राहक घ्राणआदिक इंद्रियनके भेदकरि तिन (गंधआदिकन)-

के भेदके अंगीकार किये हुये, तैसैंहीं चित् औ आनंदकी क्रमतैं अभिव्यक्ति (आविर्भाव)की कारण जो राजस औ सात्विकवृत्तियां हैं, तिनके भेदतैं तिन (चित् औ आनंद)का भेद होवैगा. यह अर्थ है. ७७

१३५४ सत्ववृत्तौ चित्सुखैक्यं तद्वृतेर्निर्मलत्वतः ।
रजोवृत्तेस्तुमालिन्यात्सुखांशोऽत्रतिरस्कृतः ७८

ननु, तब चित् औ आनंदकी एकता कहां प्रतीत होवै है ? यह आशंकाकरि कहै हैं:– (॥ सत्ववृत्ताविति ॥) सत्वगुणकी वृत्तिविषै चित् औ सुखकी [illegible] एकता [illegible] है. [illegible] कर्मकारि उपस्था[illegible]त (उदय भई) जो सत्वगुणकी परिणामरूप बुद्धिकी [illegible] वृत्ति है, तिसविषै चित् औ आनंदकी एकता भास[illegible] है ⊛ तहां कारण कहै हैं:– (॥ तद्वृत्तेरिति ॥) तिस (सत्वगुण)की वृत्तिकूं निर्मल (स्वच्छ) होनैतैं ⊛ तब चित् आनंदका काहेतैं भेद भासता है ? तहां कहै हैं:– (॥ रजोवृत्तेरिति ॥) रजोगुणकी वृत्तिकूं तौ मलिन होनैतैं, इसविषै सुख (आनंद)का अंश तिरस्कार (तिरोधान)कूं पावता है. ७८

१३५५ तिंतिणीफलमत्यम्लं लवणेन युतं यदा ।
तदाऽम्लस्य तिरस्कारादीषदम्लं यथा तथा ७९

विद्यमान बी सुखअंशके तिरस्कारविषै दृष्टांत कहै हैं:– (॥ तिंतिणीति ॥) जैसैं अतिशयकरि अम्ल (खट्टा) जो अंबलीका फल, सो जब लवणकरि युक्त होवै, तब अम्ल (खट्टाई)के तिरस्कारतैं अल्पअम्ल (किंचित्खट्टा) होवै है;

तैसैं (रजोवृत्तिविषै सुख है). ७९ टीकाः– जैसैं अंबलीवृक्षके फलविषै लवण (सैंधवआदिक)के संयोगतैं अतिशय खट्टाई तिरोधानकूं पावती है, तैसैं रजोगुणकी (चंचल)वृत्तिविषै आनंदका तिरोभाव होवै है. यह अर्थ है. ७९

३ योग औ विवेककी तुल्यता. १३५६–१३६६

१३५६ ननु प्रियतमत्वेन परमानंदताऽऽत्मनि।
विवेक्तुं शक्यतामेवं विना योगेन किं भवेत् ॥८०

गूढअभिसंधि (अभिप्राय)कूं वादी मूलविषै शंका करै हैः– (॥ नन्विति ॥) ननु, ऐसैं आत्माविषै जो परमानंदता है, सो प्रियतमता(रूप हेतु)करि विवेचन करनैंकूं शक्य होहु; (तौ बी) योग (चित्तके निरोध)सैं विना क्या (फल) है? (कछू बी नहीं). ८० टीकाः– ननु, कथन किये प्रकारसैं आत्माकी जो परमानंदरूपता है, सो परमप्रेमकी विषयतारूप हेतुकरि गौणआत्मा (पुत्रादिक) औ मिथ्याआत्मा (पंचकोश)रूप जो प्रिय उपेक्ष्य अरु द्वेष्य वस्तु हैं, तिनतैं विवेच-

१ जैसैं मनकी व्याकुलताके हुये समीपविद्यमान नेत्रादिकके विषयका भान नहीं होवै हैं; तैसैं चंचलरजोवृत्तिकरि विद्यमान आनंदअंशका भान नहीं होवै है. किंवा, सामान्यतैं परमप्रेमका विषय होनैंकरि आत्माके आनंदका भान सर्वदा होवैहै; परंतु वृत्तिविषै प्रतिबिंब होनैंकरि विशेषतैं भान होवैहै. जातैं व्यक्तिमात्रअंशके प्रतिबिंबके ग्राहक औ शोभाअंशके प्रतिबिंबके अग्राहक चंचलदर्पणकी न्याई रजोतमोगुणकी वृत्तियां चेतनअंशके प्रतिबिंबकी ग्राहक हैं औ आनंदअंशके प्रतिबिंबकी अग्राहक हैं; यातैं रजोतमोवृत्तिकरि आनंदअंशका विशेषतैं भान नहीं होवै है; किंतु लवणरूप प्रतिबंधकरि अंबलीकी खट्टाइके तिरोधानकी न्याई विद्यमान हुये बी आनंदअंशका तिरोधान होवै है. यह भाव है.

नकरिके जाननैंकूं शक्य होहु; तथापि "यह विवेक मुक्तिका साधन नहीं. काहेतैं, अपरोक्षज्ञानद्वारा मुक्तिके हेतु योगके (पूर्व ११वें अध्यायविषै) कथनतैं" यह गूढअभिसंधि (वादीके प्रश्नका गूढअभिप्राय) है. ८०

१३५७ यद् योगेन तदेवेति वदामो ज्ञानसिद्धये।
योगः प्रोक्तो विवेकेन ज्ञानं किं नोपजायते ॥८१

अब सिद्धांती, गूढअभिसंधिवान् हुयेहीं उत्तरकूं कहै हैंः- (॥ यद् योगेनेति ॥) जो (फल) योगकरि होवै है, सोई (विवेककरि) होवै है; ऐसैं हम कहते हैं. टीकाः- जैसैं योगकूं अपरोक्षज्ञानकी हेतुता है, ऐसैं विवेककूं बी (अपरोक्षज्ञानकी हेतुता) है; इहां बी गूढअभिसंधि (सिद्धांतीका गूढअभिप्रायवाला उत्तर) है ❁ अब प्रश्न औ उत्तर, दोनूंविषै जो अभिसंधि है ताकूं प्रगट करै हैंः- (॥ ज्ञानेति ॥) (जैसैं) ज्ञानकी सिद्धि (उत्पत्ति) अर्थ योग कह्या है, (ऐसैं) विवेककरि क्या ज्ञान नहीं उपजता है? ८१ टीकाः- जैसैं अपरोक्षज्ञानका साधन होनैंकरि योग पूर्व (११वैं) अध्यायविषै कह्या है; ऐसैं इस (१२वैं) अध्यायविषै कथन किया जो गौणआदिक (तीनभांतिके) आत्माके विवेचनद्वारा पंचकोशनका विवेक, तिसकरि बी ज्ञान उत्पन्न होवैहीं हैं. यह अर्थ है. ८१

१३५८ यत् सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद् योगैरपि गम्यते।
इति स्मृतं फलैकत्वं योगिनां च विवेकिनाम् ॥८२

योग औ विवेक, दोनूंकूं बी ज्ञानकी हेतुता है, तामैं कौन प्रमाण है? यह आशंकाकरि कहै हैंः- (॥ यत् सांख्यैरिति ॥)

"सांख्यनकरि जो स्थान प्राप्त होवै है, सो (स्थान) योगकरि बी प्राप्त होवै है" ऐसैं योगिनकूं औ विवेकिनकूं फलकी एकता स्मरण करी (गीतास्मृतिविषै कही) है. ८२

टीका:— "सांख्य (आत्मा अरु अनात्माके विवेकिन)कूं जो (मोक्षरूप) स्थान (पद) प्राप्त होवै है, सो (स्थान) योग (योगिन)कूं बी प्राप्त होवै है" इस गीताके वचनकरि योगिनकूं औ विवेकिनकूं ज्ञानद्वारा मोक्षरूप फलकी एकता कही है. यह अर्थ है. ८२

१३५९ असाध्यः कस्यचिद्योगः कस्यचित्ज्ञाननिश्चयः।
इत्थं विचार्य मार्गौ द्वौ जगाद परमेश्वरः ॥ ८३ ॥

ननु, विवेक औ योग, इन दोनूंका एकहीं जब फल है, तब शास्त्रनविषै इन दोनूंमैंसैं एकहींका प्रतिपादन युक्त है; दोनूंका (प्रतिपादन युक्त) नहीं. यह आशंकाकरि अधिकारीकी विचित्रतातैं दोनूंका प्रतिपादन युक्त है; इस अभिप्रायकरि कहै हैं:—(॥ असाध्य इति ॥) किसी (अधिकारी)कूं योग असाध्य (दुष्कर) है औ किसीकूं ज्ञानका निश्चय असाध्य है; ऐसैं विचारकरिके परमेश्वर (श्रीकृष्ण), दोनूं (योग औ विवेकरूप) मार्गनकूं कहते भये. ८३

१३६० योगे कोऽतिशयस्तत्र ज्ञानमुक्तं समं द्वयोः ।
रागद्वेषाऽऽद्यभावश्च तुल्यो योगिविवेकिनोः ८४

१ सांख्य (विवेक) औ योगके अधिकारीका भेद देखो श्लोक (१०९०-१०९१) विषै.

ननु, अत्यंतश्रमकरि साध्य योगका, श्रमसैंविना सुलभविवेकतैं अतिशय कहनैकूं योग्य है. यह आशंकाकरि, सो (योगका) अतिशय क्या योगकूं अपरोक्षज्ञानका जनक होनैंतैं कहिये है, अथवा रागद्वेषकी निवृत्तिका हेतु होनैंतैं कहिये है, अथवा द्वैतकी अप्रतीतिका कारण होनैंतैं कहिये है? ऐसैं तीनविकल्पकरिके, प्रथमपक्षविषै योग औ विवेकके फलकी समताकूं कहै हैंः– (॥ योग इति ॥) तहां दोनूंका ज्ञान(रूप फल) सम कह्या है, यातैं (हे वादी, तेरे) योगविषै कौन अतिशय है? टीकाः– विवेक अरु योग दोनूंका बी ज्ञानरूप फल "सांख्यनकरि जो स्थान प्राप्त होवै है (इत्यादि)" इस गीताके वाक्यकरि समान कह्या है; यातैं हे वादी, तेरे योगविषै कौन अतिशय है? कोइ बी नहीं. यह अर्थ है ❀ द्वितीयपक्षके प्रति कहै हैंः– (॥ रागद्वेषेति ॥) औ रागद्वेषआदिकका अभाव बी योगी औ विवेकी दोनूंकूं तुल्य है. ८४

१३६१ न प्रीतिर्विषयेष्वस्ति प्रेयानात्मेति जानतः।
कुतो रागः कुतो द्वेषः प्रातिकूल्यमपश्यतः ॥८५

विवेकी (विचारवान्)कूं रागआदिकका जो अभाव है, ताकूं उपपादन करै हैंः– (॥ न प्रीतिरिति ॥) "आत्मा प्रियतम है" ऐसैं जाननैंहारे पुरुषकूं विषयनविषै प्रीति (आसक्ति) नहीं है; यातैं राग (दृढआसक्तिरूप) कहांसैं होवैगा औ प्रतिकूलताकूं नहीं देखनैंहारे पुरुषकूं द्वेष कहांसैं होवैगा? ८५
टीकाः– "आत्मा प्रियतम (अतिशयप्रिय) है" ऐसैं जाननैंहारे विवेकी (ज्ञानी)पुरुषकूं प्रथम विषयनविषै प्रीति नहीं है,

यातैं तिन (अप्रियविषयन)विषै राग नहीं होवै है. काहेतैं, अनुकूल (सुखके साधन)पनैंके ज्ञानके अभावतैं औ द्वेष बी नहीं है. काहेतैं, द्वेषके हेतु प्रतिकूलपनैंके ज्ञानके अभावतैं. यह अर्थ है. ८५

१३६२ देहादेः प्रतिकूलेषु द्वेषस्तुल्यो द्वयोरपि।
* द्वेषं कुर्वन् न योगी चेदविवेक्यपि तादृशः॥८६॥

ननु, विवेकीकूं व्यवहारदशाविषै देहादिकके उपद्रव करनैंहारे जंतुनविषै द्वेष देखिये है. यह आशंकाकरि, तब सो (द्वेष) योगी औ विवेकी दोनूंकूं तुल्य है; ऐसें परिहार करै हैंः– (॥देहादेरिति॥) देहादिकके प्रतिकूल (दुःखदायकन)विषै द्वेष, दोनूं (योगी औ विवेकी)कूं बी तुल्य है * हे वादी, प्रतिकूल जो वृश्चिक (बिच्छु)सैं आदिलेके (सर्प सिंहादिक) हैं, तिनविषै द्वेषकर्त्ता पुरुषका तब (तिसकालविषै) योगीपना जब तेरेकरि नहीं अंगीकार करिये है, तब तैसे (प्रतिकूलनविषै द्वेषकर्त्ता) पुरुषके विवेकीपनैंकूं बी तिसकालविषै हम नहीं अंगीकार करै हैं; ऐसें कहे हैंः– (॥ द्वेषमिति ॥) द्वेषकर्त्ता जब योगी नहीं है, तब तैसा (द्वेषकर्त्ता) अविवेकी बी है. ८६ टीकाः– द्वेषकर्त्ता पुरुष जब योगी (चित्तके निरोधवान्) नहीं है, तब

१ अज्ञान, भेदज्ञानका कारण है औ भेदज्ञान, अनुकूलज्ञान औ प्रतिकूलज्ञानका कारण है औ अनुकूलज्ञान अरु प्रतिकूलज्ञान, क्रमतैं रागद्वेषका कारण है. विवेकी (विचारजनित अपरोक्षज्ञानवान्)कूं जातैं ज्ञानकरि अज्ञान निवृत्त भया है, यातैं भेदज्ञान औ तिसके कार्य अनुकूलज्ञान अरु प्रतिकूलज्ञानका अभाव है, ताहीतैं राग अरु द्वेषका बी अभाव है. यह आशय है.

तैसा (द्वेषकर्त्ता) पुरुष जब (जिसकालविषै) होवै, तब (तिस कालविषै) अविवेकी (विचाररहित) बी होवै है. यह अर्थ है. ८६

१३६३ द्वैतस्य प्रतिभानं तु व्यवहारे द्वयोः समम्।
समाधौ नेति चेत् तद्वन् नाद्वैतत्वं विवेकिनः ८७

ननु, " विवेकीकूं द्वैत (प्रपंच)का दर्शन है औ योगीकूं तौ सो (द्वैतका दर्शन) नहीं है" इस (१३५९ उक्त) तृतीयविकल्पविषै योगीका अतिशय (विवेकीतैं उत्कर्ष) होवैगा. यह आशंकाकरि, विवेकीकूं सो द्वैतका दर्शन, क्या व्यवहारदशाविषै कहिये है, अथवा अन्य (समाधि)दशाविषै कहिये है? ऐसैं दो विकल्पकरिके, प्रथमपक्षविषै सो (व्यवहारदशाविषै द्वैतका दर्शन) योगीकूं बी समान है; ऐसैं कहे हैं:– (॥ द्वैतस्येति ॥) व्यवहारविषै द्वैतका भान तौ दोनूं (योगी औ विवेकी)कूं सम है ॥ द्वितीयपक्षके प्रतिवादी शंका करै है:– (॥ समाधाविति ॥) योगीकूं समाधिकालविषै (द्वैतका दर्शन) नहीं है, ऐसैं जब तेरेकरि कहिये है; ॥ तब विवेकीकूं बी विवेकदशा (विचारकाल)विषै द्वैतका अदर्शन तुल्य है; ऐसैं सिद्धांती परिहार करै हैं:– (॥ तद्वदिति ॥) तब तैसैं अद्वैतपनैंके विवेकीकूं बी (द्वैतका दर्शन) नहीं है. ८७ टीकाः– तैसैं (यो-

---

१ इहां यह तात्पर्य है:– विद्वानूकूं ज्ञानसैं अज्ञानके नाश भये बी प्रारब्धरूप प्रतिबंधकरि प्रारब्धभोगपर्यंत अज्ञानका लेश अवशेष रहै है, सो देखो पृष्ठ [६२९]के टिप्पणविषै. तिसके बलकरि अविचारकालमैं रागद्वेषादिरूप प्रपंचकी बाधितानुवृत्तिसैं प्रतीति होवै है औ विचारकालमैं तिरोधान होवै है; यातैं ज्ञानी बी जब रागद्वेषकूं करता होवै, तब विवेकी नहीं है, किंतु अविवेकी (विचाररहित) है. इति.

गकूं समाधिदशाकी न्याई) "अद्वैतहीं तत्त्व (वास्तववस्तु) है ऐसैं श्रुति औ युक्ति (अनुमानादिक)करि विवेचन करनैंह बी तिसकालविषै द्वैतका दर्शन नहीं है. यह अर्थ है. ८७

१३६४ विवक्ष्यते तदाऽस्माभिरद्वैताऽऽनंदनामके ।
अध्याये हि तृतीयेऽतः सर्वमप्यतिमंगलम्॥८८॥

तिस (द्वैतके दर्शन)का अभाव किस प्रकार होवै है? यह आशंकाकरि, ऊपरके (त्रयोदशम) अध्यायविषै सो उपपादन करैंगे (हेतु औ युक्तिसहित कहैंगे); ऐसैं कहै हैं:- (॥ विवक्ष्यत इति ॥) सो (द्वैतके दर्शनका अभाव), जातैं अद्वैतानंद नाम (ब्रह्मानंदग्रंथके) तृतीयअध्यायविषै हमोंकरि कहियेगा * उक्तअर्थकूं सूचन करै हैं:- (॥ सर्वमपीति ॥) यातैं सर्व (हमोंकरि कह्या अर्थ) बी अतिमंगलरूप (निर्दोष) है. ८८

१३६५ सदा पश्यन् निजाऽऽनंदमपश्यन् निखिलं जगत्।
अर्थाद् योगीति चेत् तर्हि संतुष्टो वर्द्धतां भवान्८९

ननु, द्वैतके अदर्शनसहित आत्माके दर्शनवाले पुरुषका योगीपनाहीं होवैगा; इसरीतिसैं वादी शंका करै है:- (॥ सदा पश्यन्निति ॥) निजानंदकूं सदा देखता (अनुभव करता) हुया औ निखिल (सर्व)जगत्कूं नहीं दे[illegible]ख्या जो (ज्ञानी) वर्त्तता है, सो अ[illegible]तैं योगी है, ऐसैं जब कहै; *सिद्धांती, इष्टापत्ति (स्ववांछितकी सिद्धि)करि परिहार करै हैं:-(॥ तर्हीति॥) तब (हे वादी), तूं संतोषकूं पावता हुया वृद्धिकूं पाव. ८९

तैस । कालः । ६६ । ब्रह्माऽऽनंदाभिधे ग्रंथे मंदानुग्रहसिद्धये।
द्वितीयाध्याय एतस्मिन्नात्मानंदो विवेचितः॥९०

अध्याय (आत्मानंदप्रकरण)के तात्पर्यकूं संक्षेपकरिके दिखावै हैं:- (॥ ब्रह्माऽऽनंदेति ॥) ब्रह्मानंद, इस नामवाले (पांच-अध्यायरूप) ग्रंथविषै (स्थित) इस (द्वितीयअध्यायमैं) मंद (अल्पमतिवान् अधिकारी)के अनुग्रह (उद्धार)की सिद्धिअर्थ आत्मानंद (सर्वांतर प्रत्यगात्माका स्वरूपभूत आनंद) विवेचन किया. ९०

इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य बापुसरस्व-
तीपूज्यपादशिष्य पीतांबराव्ह विदुषा विरचि-
ता पंचदश्या ब्रह्मानंदगतात्मानंदस्य तत्त्व-
प्रकाशिकाऽऽख्या व्याख्या
समाप्ता ॥ १२ ॥